महात्मा ब्रह्मदास प्रणीत

श्रीराम परत्त्वम्

[संस्कृत मूल एवं पीयूषवर्षिणीव्याख्या सहित]

सम्पादक :

डॉ० महावीर प्रसाद शर्मा

व्याख्याकार :

पं० अवधकिशोरदास 'श्री वैष्णव'

(श्री प्रेमनिधि जी)

[श्री ब्रह्मदास जी शृङ्गारअली प्रणीत]

卐 श्रीराम परत्त्वम् 卐

[श्रीरामपरत्त्व प्रतिपादक आधार ग्रन्थ]

भूमिका एवं सम्पादन
डॉ० महावीर प्रसाद शर्मा,
हिन्दी-विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोटपूतली (जयपुर-राज०)

अनुवादक एवं व्याख्याकार
पं० अवधकिशोरदास "श्री वैष्णव"
(श्री प्रेमनिधि जी महाराज)
श्री रामानन्द आश्रम,
जनकपुरधाम (नेपाल)

□

प्रकाशक
महन्त श्री पीताम्बरदास जी
श्री अवधबिहारी जी का मंदिर,
कोटपूतली (जयपुर)

–: ग्रंथानुक्रमणिका :–

सर्व श्लोक संख्या–१३५८

□

प्रकाशकीय

हमारे लिए यह परम प्रसन्नता का विषय है कि श्री अवधबिहारी जी की अनुकम्पा से श्री १००८ श्री महात्मा स्वामी ब्रह्मदास जी (शृङ्गारअली) महाराज का परम प्रसिद्ध राम-रसिक-भक्ति सिद्धान्त का सर्वथा नवीन, अनूठा एवं अप्रतिम 'श्रीराम परत्वम्' नामक यह ग्रन्थ आप श्रद्धालुपाठकों के हाथों में है। यह ग्रन्थ मूलरूप में 'श्रीरामपरत्व ग्रन्थ की टीका' नाम से अति विशाल आकार में है। संस्कृत टीका से युक्त इस ग्रन्थ को संक्षिप्त रूप में भाषाटीका में श्री १०८ श्री पं० अवधकिशोरदास जी श्रीवैष्णव (श्रीप्रेमनिधि जी महाराज), जनकपुर धाम (नेपाल) ने ८१ वर्ष की आयु में भी इतना कष्ट साध्य कार्य अतिकृपा कर पाठकों के लिए सहज-सरल टीका-व्याख्या द्वारा बोधगम्य बना दिया है। सम्प्रदाय के अधिकारी विद्वान, सहज-सरल हृदय एवं श्री किशोरी जू के परिकर श्री प्रेमनिधि जी महाराज का इस कार्य हेतु मैं हृदय के गहनातिगहन तल से आभारी हूँ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में प्रेरक त्रिवेणी (शाहपुरा) जयपुर के महात्मा १००८ श्री बाबा नारायणदास जी महाराज के प्रति भी आभार व्यक्त करना अपना परम पुनीत कर्तव्य समझता हूँ।

श्री अवधबिहारी जी के परम भक्त सेठ प्रभुशरण जी चौधरी, कोटपूतली, का इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने में जो तन-मन-धन से सहयोग मिला है, वह स्तुत्य है। श्री चौधरी सदैव से ही धार्मिक-सामाजिक कार्यों में अग्रणी रहे हैं। श्रीरामभवन, रामलीलासमिति, सार्वजनिकपुस्तकालय, युवकसेवासमिति, गौशालाएवं श्री बसन्त प्रभु राष्ट्रीय विद्यालय कोटपूतली जैसी संस्थाओं से आप तन-मन-धन से संबद्ध रहे हैं। रामश्रेणीजन श्री चौधरी के इस पुनीत कार्य के लिए हम आभारी हैं।

श्रीराम सिया के अनुचर रामानन्दी महात्मा रामदास जी उर्फ लटूरदास जी महाराज, पवाना (कोटपूतली) के द्वारा प्राप्त आर्थिक सहयोग के लिए भी हम आभारी हैं। महात्मा लटूरदास जी की गुरु-परम्परा हमारे ही सम्प्रदाय की रही है–श्री १०८ महात्मा अयोध्यादासजी (राजनोता) → पूर्णदासजी → बालकदासजी → सुरजनदास जी → सादिक शिष्य रामदास उर्फ लटूरदास जी वर्तमान।

मैं श्री मदनशरण जी मंत्री (कोटपूतली) का भी आभारी हुं, जिन्होंने महात्मा ब्रह्मदास जी का प्राचीन चित्र उपलब्ध करवाया। साथ ही महात्मा सीतारामदास जी (जनकपुरधाम) का भी आभारी हूं जिनका सहयोग मुझे सतत मिलता रहा है। अन्त में, ज्ञात-अज्ञात समस्त साधुजनों का भी आभारी हुं, जिनका मनसा, वाचा, कर्मणा, सहयोग मिला है। ग्रन्थ की विशालता एवं साधनों की कमी के कारण यदि किसी प्रकार की त्रुटि रही हो तो क्षम्य हूं। मुद्रण-संबंधी भूलें संभव हैं, किन्तु इस संबंध में आपके सुझावों का सदैव स्वागत है।

इस ग्रन्थ के सम्पादक डा० महावीर प्रसाद शर्मा साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने ग्रन्थ की भूमिका लिखकर इसे विद्वानों के लिए उपादेय बना दिया है।

गुरु पूर्णिमा, २०४१ वि.
श्री अवधबिहारी जी का मंदिर,
कोटपूतली (जयपुर)

भगवद्दासानुदास
महन्त पीताम्बरदास

श्री १००८ महात्मा ब्रह्मदास शृङ्गारअली जी

आदि महन्त, श्री अवधविहारी जी का मंदिर, कोटपूतली

जन्म
वि. सं. १८००

साकेतधाम प्रयाण
वि. सं. १८८२, द्वि. श्रावण शुक्ला ५

श्री १०८ श्री महात्मा पीताम्बरदास जी
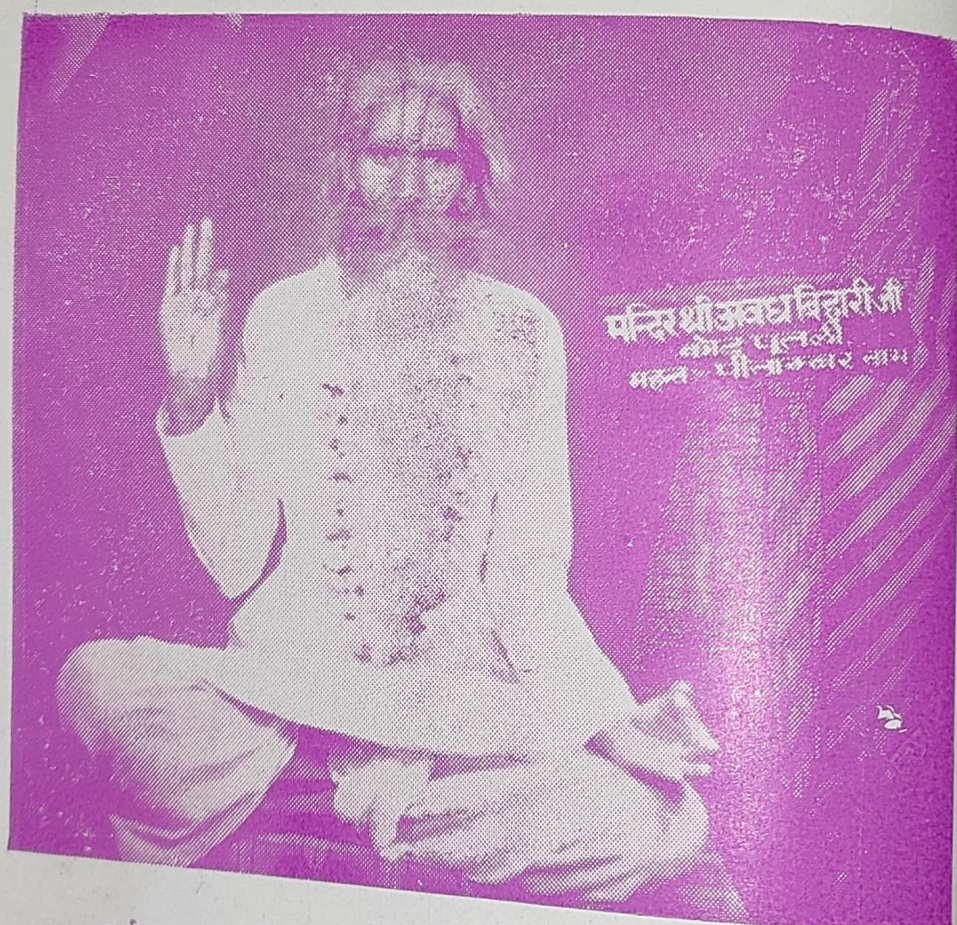
वर्तमान महन्त, श्री अवधबिहारी जी का मन्दिर, कोटपूतली

भगवद्भक्त रामश्रेणीजन
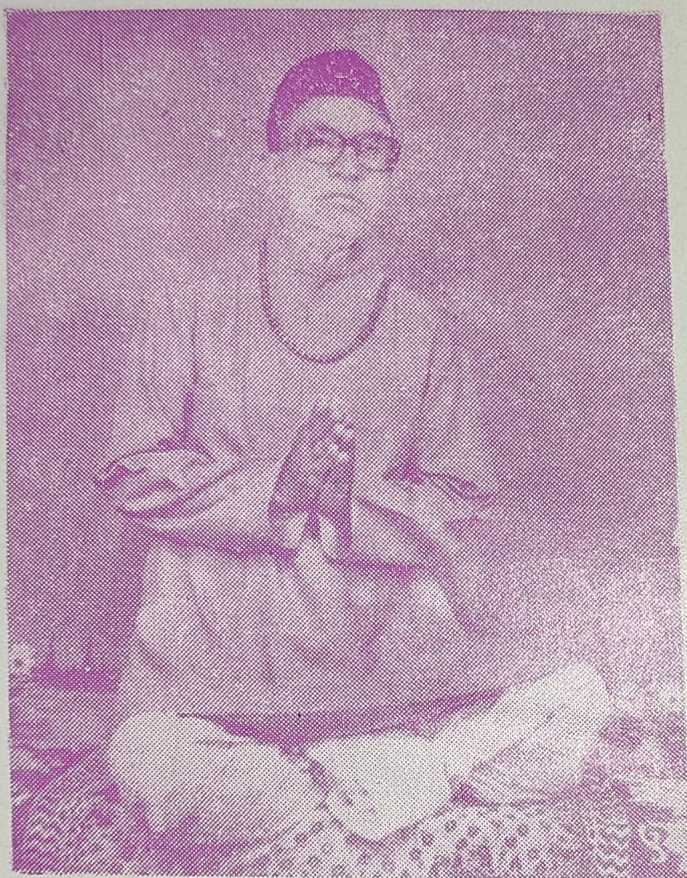
सेठ श्री प्रभुशरण जी चौधरी, कोटपूतली

श्री १०८ महात्मा रामदास उर्फ लट्टूरदास जी

महन्त, श्रीरामंदिर, पवाना

भूमिका

भारतीय इतिहास में राजस्थान अपना विशेष महत्व रखता है। मध्यकालीन भारत में जितने भक्त-संत-सम्प्रदाय राजस्थान की धरती पर पुष्पित-पल्लवित हुए हैं उतने अन्यत्र दुर्लभ हैं। निगुर्ण-सगुण संत-भक्तों की राजस्थान सम्मिलित रंगस्थली रही है। जहाँ एक ओर कृष्ण की प्रेम-दीवानी मीरा की स्वरमाधुरी कूंजती थी, वहीं दूसरी ओर गलता (गालवा) गद्दी के राम-भक्तों ने इस क्षेत्र को 'उत्तर तोताद्री' कहे जाने का सम्मान दिलाया। कृष्ण की माधुर्य भक्ति की जो लहर यमुना के करील–कुंजों में गुंजायमान थी, वही लहर राजस्थान के रामभक्तों की हृदयस्थली में आलोड़न–विलोड़न करने लगी थी। १७वीं शताब्दी तो इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय के विद्वान लेखक डा० भगवतीप्रसाद सिंह का यह कथन उल्लेखनीय है—"पूर्व मध्यकालीन राम-काव्य धारा में रसिक भावना के विकास सूत्रों का उद्गम स्थल एवं प्रसार-भूमि राजस्थान की मरुधरा ही थी। मरुधरा की यह भक्ति स्त्रोतस्विनी ही बाद में भारत के इतर प्रान्तों के जनमानस का सिंचन करती रही है।"

महात्मा रामानुजाचार्य के बाद रामभक्ति का शुद्ध रूप स्वामी राघवानन्द जी के शिष्य आचार्य रामानन्द से प्रारम्भ होता है। आचार्य रामानन्द के प्रधान बारह शिष्य माने गये हैं, जिनमें कुछ निर्गुणोपासक थे, जैसे कबीर, रैदास, पीपा, धन्ना, सेन आदि और कुछ सुगुणोपासक थे जैसे, अनन्तानंद, सुरसुरानन्द, नरहर्यानन्द आदि। राजस्थान में दोनों का ही बहुत प्रभाव रहा है। इन दोनों की ही विशेषता यह रही है कि इन्होंने राम को ही अपना आराध्य माना है। भक्ति का रूप भिन्न हो सकता है, पर लक्ष्य एक ही रहा है। सगुण भक्तों में रामभक्ति के दो रूप प्रधान रहे—दास्य एवं माधुर्य। दास्यभाव की भक्ति नरहर्यानन्द जी के शिष्य तुलसीदास ने समर्पणभाव से की थी, किन्तु गीतावली तक आते–आते भक्त-कवि तुलसी भी भगवान राम की माधुर्य–लीला के लोभ का संवरण न कर सके।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित्र के जिस स्वरूप की अभिव्यक्ति अपनी कृतियों में की वह ऐश्वर्य प्रधान है। उनके राम लोक–मर्यादा के रक्षक, लोक-विरोध-तत्वों के उन्मूलक और लोक-धर्म के संस्थापक हैं। किन्तु तुलसी की समकालीन राम-काव्य-धारा में रामोपासना के एक दूसरे पक्ष-के अस्तित्व के भी

चिह्न मिलते हैं जिसका दर्शन स्वयं तुलसीदास में भी यत्र–तत्र हो जाता है। "इस दूसरे पक्ष को रामावत सम्प्रदाय कहते हैं, जिसमें माधुर्य भक्ति का सर्वोत्कृष्ट उत्कर्ष हुआ। किन्तु यह धारा सामाजिक क्यों न हो सकी, इसका कारण था सिद्धान्तों की गोपनीयता। "सिद्धान्तों की गोपनीयता के कारण उनका उपदेश केवल अन्तरंग और दीक्षित साधकों को ही दिया जाता था। अतएव उनका सारा साहित्य आचार्य पीठों के बस्तों में बंधा अप्रकाशित और अविवेचित ही पड़ा रहा" –डा० अमरपाल सिंह, तुलसी पूर्व रामभक्ति साहित्य पृ० २०१.

रामभक्ति की पावन धारा का अजस्र स्त्रोत महात्मा तुलसीदास से पूर्व ही राजस्थान की साहित्य-भागीरथी में देखने को मिलता है। इसका अधिकांश श्रेय जैन मुनियों एव साहित्यकारों को जाता है। प्राकृत–अपभ्रंश काल से लेकर आज तक यह स्रोत सूखा नहीं है। वि. सं. १५०८ में रचित ब्रह्मजिनदास कृत 'राम-चरित्र', सं० १६०४ वि. में रचित विनय समुद्र कृत 'पद्मचरित्र', गुणकीर्ति रचित" श्रीराम सीतारास' मुनिलावण्यकृत 'रावण मंदोदरी संवाद', जिनराज सूरीकृत' 'जैन रामायण', कुशललाभ कृत, सीताचउपई, सीता-प्रबन्ध, सीता चरित्र, आदि अनेक साहित्यक कृतियाँ इस बात की साक्षी है। फिर भी राजस्थान की मरुधरा में दास्यभाव की भक्ति के साथ ही साथ माधुर्यभाव की अन्तः सलिला भी प्रवहमान थी, जो अवसर पाकर अनन्तानद जी के प्रशिष्य एवं कृष्णदास पयहारी जी के शिष्य स्वामी अग्रदास जी की स्वरमाधुरी में फूट पड़ी, जिसके प्रवाह में १८ वीं शताब्दी का उत्तर भारत उन्मुक्त भाव से सिहिर उठा और भगवान राम-सीता की प्रेमाभक्ति का स्वर अलापने लगा। इस स्वरमाधुरी में कृष्णभक्तों की प्रेमभरी वीना की झंकार की झंकृति भी थी।

राम-रसिक काव्य : नामकरण

राम–रसिक सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी अग्रदास माने जाते हैं। स्वामी अग्रदास जी ने मधुर-भाव की उपासना करने वाले उपासकों को "रसिक" नाम से संबोधित किया है। "रसिक' शब्द का यहां सामान्य अर्थ-रस-मर्मज्ञ न लेकर रूढ़ार्थ में ही किया गया है। इस अर्थ में भगवान राम एवं जगज्जननी जानकी के दाम्पत्य–जीवन की लीलाओं के ध्यान एवं चिन्तन करने पर अधिक बल दिया गया है। स्वयं अग्रदास जी ने अपना मन्तव्य इस प्रकार प्रकट किया है—

> यह दम्पति वर ध्यान रसिक जन नित प्रति ध्यावै।
> रसिक बिना यह ध्यान और सपनेहूं नहीं भावै॥

अतः रामभक्ति के इस रूप में रसिक भावना का होना अत्यन्तावश्यक है। इसलिए इस सम्प्रदाय को 'रसिक सम्प्रदाय' कहा जाता है। कालान्तर में इसके और भी अनेक नाम प्रचलित हो गये। अयोध्या के भक्तों ने इस सम्प्रदाय को 'स्वसखी' कहा, चिरान (छपरा) के श्री जीवाराम ने 'तत्सुखी' कहा, कृपानिवास एवं कुछ ने रामावत, जानकीवल्लभी, रहस्य, सिया-सम्प्रदाय, तथा कारोता कमानिया के भक्तों ने 'रामश्रेणी, सम्प्रदाय' आदि नाम दिये। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार कृष्ण-भक्ति में 'राधा-भाव' से भक्ति की जाने लगी थी उसी प्रकार राम-भक्ति में 'सीता-भाव' से भक्ति की जाने लगी और सम्प्रदाय के अनुयायी भी भगवान राम के साथ अपना मधुर सम्बन्ध स्थापित करते हुए अनेक शृंगारी-लीलाओं का ध्यान, चिन्तन एवं 'सखी' या 'सखा' भाव से दिव्य दम्पत्ति-राम-सिया-की सेवा करने लगे। साथ ही रसेश्वर श्री राम एवं रसेश्वरी श्री सीताजी की सेवामें आनन्दित रहने लगे।

कुछ विशिष्ट राम-रसिक-भक्त कवि : स्वामी अग्रदास—

राजस्थान के रसिक भक्त कवि अग्रदास जी का जन्म जयपुर के पास स्थिति पीकसी गांव में हुआ था। ये आचार्य रामानन्द के प्रपौत्र शिष्य, स्वामी अनन्तानन्द के पौत्रशिष्य तथा स्वामी कृष्णदास पयहारी के शिष्य थे। कृष्णदास जी पयहारी गलता गद्दी के आचार्य महन्त थे। उनके काल में गलता गद्दी का वही स्थान था जो रामानुज सम्प्रदाय के लिए दक्षिण में 'तोताद्री' का था। रामानन्दी भक्तों के लिए गलता 'उत्तर तोताद्री' मानी जाती थी। युगलप्रिया जी के अनुसार स्वामी रामान्द 'रहस्योपासना' के उद्धारक थे, किन्तु उनके शिष्य अनन्तानन्द रामरसिकोपासक थे। इनके शिष्य कृष्णदास पयहारी सीताजी के उपासक थे तथा उनकी भक्ति मधुरभाव की थी, किन्तु कृष्णदास पयहारी जी की एक 'राजयोग' नामक अप्रकाशित रचना के अतिरिक्त किसी रचना का पता नहीं चलता। इस रचना के आधार पर उनका प्रभाव 'तपसीश खा' पर उनकी योगसिद्धियों के कारण अधिक माना जाता है। वस्तुतः कृष्णदास पयहारी जिन्हें कुछ विद्वान भ्रमवश कृष्णभक्त मानते हैं—ने गलता के नाथपंथी साधुओं को परास्त कर रामानन्दी वैष्णव-गद्दी की स्थापना की थी। कृष्णदास पयहारी के अनेक शिष्य थे, किन्तु इनमें कील्हदास एवं अग्रदास अधिक प्रसिद्ध हुए। कृष्णदास जी पयहारी के बैकुण्ठवासी होने पर कील्हदास जी गलता गद्दी के आचार्य बने तथा उनकी आज्ञा से अग्रदास जी ने रेवासा (जयपुर) में एक और नई वैष्णवगद्दी की स्थापना की। कील्हदास और अग्रदास दोनों ही मधुर

रस के रसिक थे। इस प्रकार स्वामी अनन्तान्द से लेकर अग्रदास तक की समस्त परम्परा मधुरोपासक थी।

रैवासा में रहकर अग्रदास जी ने मधुरोपासना को सैद्धान्ति एवं व्यावहारिक रूप देकर सुदृढ़ आधार-भूमि प्रदान की वे स्वय को श्रीसीता की प्रिय सखी चन्द्रकला का अवतार मानकर, अग्रअली नाम से ध्यान करते थे। उनके शिष्य नाभादास के अनुसार वे आचारनिष्ठ रामभक्त थे। उनसे जयपुर नरेश मानसिंह भी अत्यधिक प्रभावित हुए थे उनकी एक विस्तृत शिष्य परम्परा थी, जिसमें निम्नलिखित प्रधान थे–

जंगी, प्रयागदास, विनोदी, पूरनदास, बनवारीदास, नरसिंहदास, गवानदास दिवाकर, किशोर, जगनदास, जगन्नाथदास, सल्कघो, खेमदास खींची, धर्मदास, लघु ऊधो एवं नाभादास।

अग्रदास जी राम की 'लाल साहब' नाम से उपासना करते थे। इस उपासना का उपदेश वे इसके अधिकारी रसिकों को ही देते थे। नाभादास के अनुसार लाल साहब की भक्ति-वल्लरी का ही बाद में विकास हुआ है—

श्री अग्रदेव गुरु कृपाते, बाढ़ी नवरस बेल।
चढ़ी लडैती लाल छवि, फूली नवल सुकेलि।।

स्वामी अग्रदास जी की रचनाओं के सम्बन्ध में अभी निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार की रचनाओं का उल्लेख किया है। और भी न जाने कितनी रचनायें पुराने बस्ते—बुगचों में पड़ी अपने उद्धार की बाट जोह रही हैं। किन्तु अब तक की प्राप्त जानकारी के आधार पर स्वामी अग्रदास की निम्नलिखित रचनायें प्राप्त होती हैं-श्रीराम ध्यान मंजरी या ध्यान मंजरी, हितोपदेश उपाषाण बावनी या कुडलियां, अष्टयाम् (संस्कृत) नाम प्रसाद प्रताप, रहस्य त्रय (संस्कृत), विश्व व्रह्मज्ञान, रागावली, श्रीराम भजन मंजरी, पदावली, राम ज्योनार, फगबागीत, शृंगार रस सागर या अग्रसागर (नोटिस मात्र), एवं रामचरित के पद।

नाभादास—

अग्रदास जी के प्रधान १६ शिष्यों में नाभादास जी का नाम सेवानिष्ठ पट्टशिष्यों में अग्रणी माना जाता है। ये बड़े भक्त एवं साधु-सेवी वैष्णव थे। इसी कारणअग्रदास जी ने इन्हे मन्दिर की सेवा पूजा करने का भार सौंपा था। 'रसिक प्रकाश भक्तमाल' में जीवनराम जी कहते हैं—

विनय विवेक सुभ सील दया नेह गेह।
नाभाजी को देखि संत सेवा में लगाए हैं।।

नाभादास जी का जन्म दक्षिण देश में हुआ था। जन्मांध, पितृहीन बालक को इनकी माता ने किसी तरह जयपुर तक आकर न जाने किन परिस्थितियों में कहीं जंगल में त्याग दिया था। उसी रास्ते पयहारी जी के शिष्य कील्हदास एवं अग्रदास जी आ रहे थे। इस सम्बन्ध में प्रियादास जी ने 'भक्तमाल' की टीका में विस्तार से प्रकाश डाला है। कील्हदास जी की आज्ञा से नाभादास जी को अग्रदास जी ने दीक्षा दी। बाद में उन्हें लेकर रैवासा आ गये। यहां अपने गुरु की आज्ञा से वि० सं० में १६४२ में उन्होंने 'भक्तमाल' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की।

भक्तमाल कल्पद्रुमकार के अनुसार 'नारायणदास नाम प्रसिद्ध नाभा जी मुख्यकर्ता भक्तमाल के हुए। हनुमान वंश में उनका जन्म हुआ। हनुमान वंश में वृतान्त यह है कि दक्षिण में तेलंग देश गोदावरी के समीप उत्तर में रामभद्राचल एक पहाड़ हैं। श्री रामचन्द्र जी ने वनवास के समय कुछ दिन उस पर निवास किया। वहीं रामदास नाम ब्राह्मण महाराष्ट्र हनुमान जी के अंश अबतार हुये। रामचन्द्र जी की उपासना में बहुत लोगों को प्रेरित किया, बड़े पंडित थे। उनके परिवार हनुमान अवतार होने से हनुमान वंश करके प्रसिद्ध है। अर्थात नाभदास जी हनुमान वंशी दक्षिण भारतीय ब्राह्मण थे।

नाभादास जी के जन्म एवं रचनाकाल के सम्बन्ध में विद्वानों का विचार है कि वे सं० १६४२ से १७०० वि. तक वर्तमान थे। आचार्य शुक्ल सं. १६५७ वि. के लगभग वर्तमान मानते हैं। किन्तु कुछ विद्वान भक्तमाल का रचनाकाल वि. सं. १६४६ से प्रारम्भ होकर १७१५ वि. तक मानते हैं। कहा यह भी जाता है कि महात्मा तुलसीदास नाभा जी के समकालीन थे। एक बार नाभादास जी के भण्डारे पर तुलसीदास जी पधारे थे और वहां नाभा-तुलसी मिलन हुआ था। 'भक्तमाल' में नाभादास जी का एक छप्पय भी इस सम्बन्ध में प्राप्त होता है। मराठी भक्त-कवि महिपति बूवा ने अपने 'भक्त लीलामृत' नामक ग्रंथ में नाभादास जी पर विशेष प्रकाश डाला है। कहने का अभिप्राय यह है कि नाभादास जी वि. की १८वीं शती के पूर्वार्द्ध तक वर्तमान थे।

नाभादास जी का जन्म नाम नारायणदास एवं आत्मसम्बन्धी नाम 'नाभा-अली' था। गुरुकृपा से उन्हें मधुरभाव की 'रस-रीति' का बोध हुआ था। भक्तों के कण्ठहार 'भक्तमाल' का अपने गुरु की आज्ञा से नाभादास जी ने प्रणयन किया था। विद्वान नाभादासजी की काव्य-भाषा ब्रजभाषा मानते है। किन्तु 'भक्तमाल'

की भाषा "ग्वालहेरी भाषा" थी। मराठी भक्त-कवि बूवा (वि. सं. १७७२-१८४७ अपने 'भक्तलीलामृत' नामक ग्रंथ में कहते हैं–

हिन्दुस्तान देशांत पूर्ण। नाभाजी नामे वैष्णव जन।
संत चरित्र वर्णिलो त्यागें। ग्वालहेर भाषे ने निश्चित॥

'भक्तमाल' में १९५ छप्पय हैं, जिनमें १५५ पौराणिक भक्तों के अतिरिक्त २२२ भक्तों के चरित्र हैं। जो विद्वान 'भक्तमाल' में २०० भक्तों की चर्चा ३१६ छप्पयों में मानते हैं, वे अभी भ्रमित हैं। 'भक्तमाल' के अतिरिक्त नाभादास जी की निम्नलिखित रचनाएँ मानी जाती हैं :— अष्टयाम (गद्य), अष्टयाम (पद्य) एवं रामचरित संग्रह। इन रचनाओं में राम की दिनचर्या एवं लीलाओं का रसिक भाव से सुन्दर मनभावन वर्णन किया गया है।

नरहरिदास —

१७ वीं शती के पूर्वार्द्ध में स्वामी अनन्तदासजी के प्रशिष्य तथा श्री रंगजी के शिष्य नरहरिदास जी राम और कृष्ण चरित्र के गायक कहे जाते हैं। नाभादास जी ने 'भक्तमाल' में इनके सम्बन्ध में एक कवित्त कहा है। इनके फुटकर पद प्राप्त होते हैं।

मुरारीदास —

मुरारीदास जी प्रसिद्ध भागवत तथा परम रसिक राम-भक्त थे। इनका जन्म मारवाड़ के बिलोदा गांव में हुआ था। उनकी किसी रचना का तो पता नहीं चलता किन्तु नाभादास जी ने इनके सम्बन्ध में एक छप्पय कहा है जिस पर प्रियादास जी ने टीका में ५ कवित्त कहे हैं। भक्तमाल में कहा है—

कृष्ण विरह कुंती शरीर त्यों मुरारि तन त्यागियो।
विदित बिलोदा गांव देश मुरधर सब जाने॥
महा महोछो मध्य सन्त परिषद् परवाने।
पगन घुंघरु बांधि रामा को चरित्र दिखायो॥
देशी शारंग बाणि हंस ता संग पढ़ायो।
उपमा और न जगत में वृथा बिना ना नहि बियो।
कृष्ण विरह कुंती शरीर त्यों मुरारी तन त्यागियो॥१२८॥

मुरारीदास जी जाति-पांति को नहीं मानते थे। वे परम राम-भक्त थे। भगवान राम के गुणानुवाद करते-करते विभोर हो जाते थे और इसी भावावेश में एक दिन उन्होंने प्राण त्याग दिये। भक्त कल्पद्रुम में भी ऐसा ही कहा है

विष्णुदास जी—

विष्णुदास जी स्वामी कृष्णदास पयहारी के शिष्य थे। ये भगवान राम की सखीभाव से उपासना करते थे। सं० १८८२ की प्राचीन हस्तलिखित प्रति 'पदमुक्तावली' (प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर) में विष्णुदास जी के कुछ फुटकर पद देखने को मिलते हैं।

कल्याण—

ये कृष्णदास भी पयहारी के शिष्य थे। 'भक्तमाल' में नाभादास जी ने इन्हें परम राम भक्त, जीवों पर दया करने वाले प्रधान २४ शिष्यों में से एक कहा है। पदमुक्तावली में इनके कुछ फुटकर पद मिलते हैं।

रामदास—

'भक्तमाल' नाभादास कृत में रामदास नामक अनेक सन्त-भक्तों का वर्णन मिलता है। किन्तु पद मुक्तावली में संग्रहीत पद या तो अनन्तानन्द जी के शिष्य सारी रामदास के होने चाहिये या खेमगोसांई के गुरु रामदास के 'पदमुक्तावली के प्राप्त पदों में तीन छाप मिलती हैं—रामदास अली (१ पद), श्रीराम दास (१ पद), रामदास (३ पद) डा० भगवती प्रसाद सिंह का इस संदर्भ में कथन है कि 'श्री रामदास' छाप स्वामी अनन्तानन्द के शिष्य 'सारी रामदास की है, शेष चारों पद किसी शृंगारी रामभक्त के हैं। ये खेमगोसांई के गुरु रामदास हो सकते है, किन्तु अधिक सम्भव है कि इनके रचयिता का संबंध अग्रदास की परम्परा से रहा हो। कारण कि 'अली' अथवा 'सखीभाव' की उपासना रामभक्ति की इसी शाखा में प्रचलित रही है। इधर हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के दौरान प्रस्तुत लेखक को १८ वीं शती उत्तरार्द्ध के लगभग की रचित पांच पत्रों की 'बावन गुरु द्वारा' शीर्षक रचना प्राप्त हुई है। इस रचना से स्पष्ट हो जाता है कि 'सारी रामदास' ही खेमदास जी के गुरु थे. कोई भिन्न व्यक्ति नहीं। इस रचना में ब्रह्म मूल आदि से लेकर शांतदास जी तक की ७८ गुरुओं की परम्परा अंकित है। रचना के क्र. सं. ६५ से गुरु-परम्परा निम्न प्रकार है—हरियानन्द, श्रीरियानंद, राघवानँद, रामानंद अनन्तानन्द, सारी रामदास, खेमदास, चरण दास, संतराम, शांतदास।

इनकी रचना का नमूना देखिये—

देषो मूरति राम सुजान की।
कौन पुन्य तैं यो बर पायो, बडभागिनी है जानकी ।।टेक।।
बावें कर कोदण्ड विराजत, दच्छिन फेरत बान की
सुर नर नाग नहीं कोउ सरभरि, मूरति मोद–निधान की ।।१।।
जनक-नगर नर-नारी सराहत गाथा गुन्न निधान की।
रामदास प्रभु की करि नेवछावरि तन-मन-धन अरु प्रान की ।।२।।

जनभगवान—

जनभगवान अग्रदास जी के शिष्य 'भगवानदास' ही हैं। यों कील्हदास जी के भी एक शिष्य का नाम 'भगवान' था। एक अन्य कृष्णभक्त 'जनभगवान' भी हुए हैं। डा० भगवती प्रसाद सिंह कहते हैं—नाभादास ने भगवान नाम के दो रामभक्तों का उल्लेख किया है। एक कील्हदास जी के शिष्य थे, दूसरे अग्रदास जी के। इनके अतिरिक्त एक कृष्ण-भक्त जनभगवान की चर्चा भक्तमाल के १४६ वें छप्पय में आयी है।

'पदमुक्तावली' में संग्रहीत पद शृंगारी राम भक्ति का है, अतः मेरी सम्मति में वह इसमें द्वितीय अर्थात् रसिकाचार्य अग्रदास के शिष्य भगवान की रचना है, कृष्णभक्त जन-भगवान की नहीं। अपने नाम के साथ 'दास' का पर्याय 'जन' लगाने की चलन मध्यकालीन संतों और भक्तों, दोनों में समान रूप में पायी जाती है। इससे भगवानदास और जनभगवान में कोई अन्तर नहीं पड़ता।

प्रियादास (१८वीं शती वि०)—

प्रियादास जी माध्व सम्प्रदाय के वैष्णव एवं नाभादास जी के शिष्य थे। इन्होंने सं० १७६६ वि. में नाभादास कृत 'भक्तमाल' (वि० १६४२) की भक्ति रस बोधिनी टीका लिखी थी। इस ग्रन्थ की दो प्रतियां प्रस्तुत लेखक के संग्रह में भी हैं। प्रथम का लिपिकाल वि.सं. १७७९ है। नाभादासजी के 'भक्तमाल' की सबसे सुन्दर एवं सर्वाधिक प्रसिद्ध टीका इन्हीं की मानी जाती है। बाद में तो 'भक्तमालों' की एक परम्परा चल पड़ी।

प्रियादास जी राम के परमभक्त थे। उनकी अब तक दो कृतियों का ही विवरण प्राप्त होता है (१) भक्ति रसबोधिनी, (२) भागवत भाषा।

बालकृष्ण (बालअली)—

राम-रसिक-काव्य-परम्परा में महात्मा बालकृष्ण जी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनका वास्तविक नाम बालकृष्ण तथा रस-साधना का नाम-'बालअली' था। ये राजस्थान के ही निवासी थे। प्रारम्भ में आप रामानुजी थे। साधु रहे और अनेक वर्षों तक इसी वेश में साधना की। किन्तु तृप्ति के अभाव में ये रैवासा आये और अग्रदास जी की चौथी पीढ़ी के आचार्य चरणदास जी से राम-भक्ति-रसिक भाव की दीक्षा प्राप्त की। रसिक-सम्प्रदाय के ये प्रसिद्ध भक्त हुए। बाद में आचार्य चरणदास के साकेत धाम जाने पर ये रैवासा गद्दी के आचार्य महन्त बने।

बालकृष्ण 'बालग्रली' का जीवनकाल वि. सं. १६७५ से वि. १७७५ श्रौर रचना काल वि. १७२६ से वि. १७६२ के मध्य माना जाता है। कुछ विद्वान रचनाकाल वि. सं. १७२६ से वि. सं. १७४६ मानते हैं। बालग्रली जी भगवान राम की रसिक भाव से भक्ति करते थे। इनकी निम्नलिखित ग्राठ रचनाएँ प्राप्त होती हैं—

(१) ध्यान मंजरी (२) सिद्धान्त तत्व दीपिका, (३) दयाल मंजरी (४) ग्वाल मंजरी (५) प्रेम पहेली (६) प्रेम परीक्षा (७) परतीत परीक्षा (८) नेह प्रकाश।

इनमें रचना पक्ष की दृष्टि से ध्यान मंजरी, सिद्धान्त तत्व दीपिका एवं नेह प्रकाश इनकी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ मानी जाती हैं। 'ध्यान मंजरी' में रस–साधना का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। 'सिद्धान्त तत्व दीपिका' में परमतत्व की व्याख्या कथानक के रूप में समासोक्ति के सहारे की गई है श्रौर 'नेह प्रकाश' में सीता के प्रति श्रीराम का प्रणय-निवेदन प्रस्तुत किया गया है। 'सिद्धान्ततत्व दीपिका' की दो प्रतियां, (हस्तलिखित) प्रस्तुत लेखक को भी प्राप्त हुई हैं, जो लगभग १८वीं शती के उत्तरार्द्ध में कभी लिपिबद्ध की गई होंगी।

श्री बालानन्द जी—

बालानन्द जी महात्मा बिरजानन्द जी के शिष्य थे। इनका जन्म राजस्थान के ही किसी ग्राम में वि. सं. १७१० में हुग्रा था। ग्राप लश्करी शाखा के प्रवर्तक राम-भक्त थे। ग्रापने १६ वर्ष की ग्रवस्था में ही दशनामी शैवों के ग्राक्रमण का मुकाबला करने के लिए, वैष्णवभक्तों की रक्षार्थ रामादल संगठन की स्थापना की थी। इस संगठन में सैनिक शिक्षा दी जाती थी। इस संगठन को राज्याश्रय भी प्राप्त था। सं. १८०२ में लश्करी मंदिर (चांदपौल बाजार, जयपुर) की स्थापना की गई थी। सं. १८५२ वि. में बालानन्द जी साकेतवासी हो गये थे।

बालानन्द जी की भक्ति में वात्सल्य, दास्य एवं माधुर्य का त्रिवेणी संगम था। वे भगवान राम की बालक भाव से उपासना करते थे।

> ब्रजानन्द महाराज के शिष्य श्री बालानंद।
> बालक राम उपासना, संत जनम सुख कंद ॥

बालानन्द जी की तीन रचनाएं प्राप्त होती हैं-मुष्टकलीला, शकुनविचार, पदसंग्रह। बालानन्द जी के 'पद संग्रह' में ग्रनेक रसिक–भाव के पद देखने को मिलते हैं।

श्री मधुराचार्य जी—अग्रदास जी की परम्परा में जो स्थान 'बालअली' जी का है, कील्हदास जी की परम्परा में वही स्थान मधुराचार्य जी का है। मधुराचार्य जी कील्हदास जी की छठी पीढ़ी में श्री हृदयदेव स्वामी के शिष्य थे। इनका मूलनाम राम प्रपन्न था। मधुरापोसना के ये प्रसिद्ध भक्त थे। जो स्थान गौडीय वैष्णवों में श्री जीव गोस्वामी पाद का है वही स्थान रामानन्दी मधुरापासकों में मधुराचार्य जी का है। जिस प्रकार श्री जीव गोस्वामी पाद ने श्रीमद्भागवत को आधार बनाकर सिद्धान्त प्रतिपादन का कार्य किया था उसी प्रकार इन्होंने बालमीकि रामायण का आधार लेकर रामरसिकोपासना का 'महल' तैयार किया था। 'रसिक प्रकास भक्तमाल' के अनुसार मधुराचार्य जी ने ही सर्व प्रथम रामरसिकोपासना को शास्त्र-सिद्ध प्रमाणों की पुष्टि से आधार सिद्ध किया था। गलता गद्दी के आचार्य के रूप में आप रामलीला का आयोजन करवाते थे। इससे आपके विरोधियों ने तत्कालीन नरेश सवाई रामसिंह से आपकी शिकायत की थी, जिससे अप्रसन्न होकर मधुराचार्य जी चित्रकूट-अयोध्या चले गये थे। मधुराचार्य जी संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे। रसिक प्रकाश भक्तमाल में श्री जीवाराम जी (युगलप्रिया जी) ने मधुराचार्य जी के सम्बंध में लिखा है—

मधुराचारज मधुर सरस शृंगार उपासी।
रंग महल रसकेलि कुंज मानसीख वासी।।
निमिकुल जन्मउदार सुखद संबंध प्रतापी।
पैहारी रसिकेन्द्र कृपा माधुर्य आयापी।
द्वादस वार्षिक रास रसलीला कर बहु सुख दिये।
विपुल ग्रंथ रच रसिकता राम रास पद्धति किये।

मधुराचार्य जी की सात रचनाएं मानी जाती हैं—(१) माधुर्य केलि-कादम्बिनी, (२) बालमीकि रामायण की शृंगारपरक टीका (अप्राप्य) (३) भगवद्गुण दर्पण (४) श्रीराम तत्व प्रकाश (५) श्री सुन्दरमणि संदर्भ, (६) श्रीवैदिक मणि संदर्भ (७) फुटकर पद। रचना का नमूना 'षड़्ऋतु पदावली' पृ० ११० से उद्धृत है—

सखि मैं आज गई सिय कुंज।
देखि नृपति किसोर दोरे, घेरि पिचका पुंज।
तब कहीं मैं सुनह लालन लाल कौशल चंद।
फाग मिस का करहु चोरी चलहु मेरे संग।
मधुर प्रीतम आज तुमको जीति हो रति रंग।।

श्री सूर किशोर—सूर किशोर जी का जन्म जयपुर में सनाढ्य ब्राह्मण कुल में हुआ था। वे कील्ह स्वामी के प्रपौत्र शिष्य थे। जयपुर नरेश सवाई रामसिंह के द्वारा अपमानित अनुभव करके मधुराचार्य जी जब गलता छोड़ कर चित्रकूट चले गये तब सूर किशोर जी भी राजा के इस व्यवहार से खिन्न होकर गलता से लोहार्गल (सीकर) अपने बड़े गुरु भाई के पास चले गये थे और वहीं रहकर माधुर्य भक्ति में लीन रहने लगे। सूर किशोर जी सीता की पुत्री (भतीजी) रूप में राम की दामाद रूप में और जनक जी की भाई के रूप में उपासना करते थे। वे सीता की एक प्रतिमा सदैव अपने पास रखते थे और उसे पितृभाव से नाना प्रकार के मिष्ठान्नादि का भोग लगाते थे। एक बार उनके विरोधियों ने जब प्रतिमा को गायब कर दिया तो वे बड़े दुःखी रहने लने। अन्त में वही प्रतिमा जब मिथिला में प्रकट हुई तो सूर किशोर जी भी वहां पहुँच गये।

विद्वानों को सूर किशोर जी की अब तक एक रचना—'मिथिला विलास' एवं कुछ फुटकर पदों का ही पता था किन्तु इधर हमें उनकी 'हनुमानदण्डक स्त्रोत', शीर्षक एक और रचना वि. सं. १८४५ की लिपिबद्ध भी प्राप्त हुई है। रचना का नमूना देखिए—

मिथिला वासि औध सहाय चहै तो उपासक कौन कहै भल की।
जिन के कुल बीच सपूत नहीं करे आस दमादन के बल की।

—मिथिला महात्म्य, पृ० ६

सुन्दर कुंवरी (वि. सं. १७९१ से वि. सं. १८५३ तक)

सुन्दर कुंवरी बाई किशनगढ़ के महाराजा राजसिंह की पुत्री, भक्त कवि नागरीदास की बहन एवं भक्त कवयित्री छत्र कुंवरी बाई की फूफी थी। इनको साहित्यिक एवं भक्ति प्रधान वातावरण में १५ वर्ष की अल्पायु में ही भगवान राम के प्रति अटूट प्रेम प्रकट हुआ था। इनकी रचनाओं का मुख्य विषय प्रेम और भक्ति हो रहा है। आपकी ११ रचनायें प्राप्त होती हैं—नेह निधि, संकेत युगल, वृन्दावन गोपी महात्म्य, रंगझर, रसपुंज, प्रेम सम्पुट, सार-संग्रह, भावना प्रकाश, राम रहस्य, पद तथा स्फुट काव्य।

राम सखे जी—

जयपुर के एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न राम सखे जी विरक्त होकर उडूपी पहुंचे और वहां माधव सम्प्रदाय के आचार्य वशिष्ठ तीर्थ से दीक्षा ग्रहण

की। वहां से अयोध्या और चित्रकूट गये। यहां १२ वर्ष तपस्या कर राम नाम का जाप किया। इसके बाद वि. सं. १८३१ में मैहर चले गये और मृत्यु पर्यन्त वहीं रहे। मैहर के महाराजा दुर्जनसिंह ने अपने गुरु राम सखे जी की स्मृति में मैहर में प्रधान गद्दी स्थापित की तथा अयोध्या में 'नृत्यराघव कुंज' नामक श्रीराम मन्दिर का निर्माण कर उन्हें समर्पित किया। आज भी राम सखे जी की शिष्य परम्परा मैहर एवं अयोध्या में मिलती है। राम सखे जी की निम्नलिखित रचनाएँ मिलती है—द्वैतभूषण, पदावली, रूप रसामृतसिंधु, नृत्यराघव मिलन दोहावली, कवितावली, रास पद्धति, दान लीला, बानी, मंगल शतक, रागमाला। मिश्रबन्धु विनोद में इनके अतिरिक्त कुछ और कृतियों का भी उल्लेख है। (१) राम सखे के गीत (२) मँगल लतिका (३) कवित्त मंगलाष्टक (४) राघवेन्द्र रहस्य रत्नाकर (५) सीताराम चन्द्र रहस्य पदावली।

इधर हमें भी रामसखे जी की कुछ रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त हुई हैं, जिनमें दोहावली (लि. का, १९५१ वि,) नृत्यराघव मिलन (२ प्रतिया लिपिकाल वि. सं. १९३० के लगभग) और अखिल रामायण मुकर प्रमुख हैं। इनमें भी अन्तिम रचना हिन्दी-साहित्य के विद्वानों के लिए अब तक अज्ञात रही है। वि. सं. १९३० के आस-पास की लिपिकृत यह प्रति प्रस्तुत लेखक के निजी संग्रह में सुरक्षित है। यह रचना छ: कवित्तों में समाप्त होती है। रचना का मूल पाठ निम्नलिखित है—

कहियै अनंत जो अनंत ही चरित जाको, सत कोटि ग्रंथन वाल्मीकि नै बषान्यो हों।
कहियै औतारी जो औतार को नियंता होई, परसराम दंड दीन्हो सौ तो जग जान्यो हों
कहियै वर रूप जाको चोरे जनीन चित, दंडक वन मुनि मोहे काम उर ठान्यों हों।
राम सखे कहिये सर्व ऊपर है नाम जाको, संकर तप ताहि याते राम मान्यों हों।१।
बाललीला रघुवंसिन सों अवधि वीथिन, व्याहलीला जानकी सौ मिथिलापुर भारी है
रामलीला कोटिन सषिन सों प्रमोदन, बन लीला दण्डक में लषन संग धारी है।
रनलीला अद्भुत अति लंका में रावन सों, रामलीला अयोध्या पुनि आई के सम्हारी है
लीलायें अनन्त राम सषे नृत्य राघोजी की, पावै को अंत बालमीक गतिमति हारी है२
ताको रिछ बन्दर है ब्रह्मा रवि संकरह, निसदिन रिझावत कौतुक वपुधारी हैं।
दीन्हो तानै दंडतार परसराम हूंको गैन को रावन आदि के जे मारिरिपुचारी हैं।
पठये गोलोक तिहिं अवधि जीव चींटी लयै ऐसी को प्रतापी अति लीन्हा सब निहारी है
करिके विचार कहे राम सखे चित्त माँहि यातै सकल औतारन के राम औतारी है।३।

जल में पथरा तारे मुनि व्है के मृगमारे, वाहन बंदरा प्यारे, करे ग्रैसे काम है।
जग की मरजाद मेटि, पगसो ग्रहल्या भेंट, रहे दस के ग्यारह हजार वर्ष श्याम है।
ग्रनहोनी होनी लीला महातेज वानन की रामलषै सकल ही जाती ग्रभिराम है।
तसै देवै करिवेमजादि कोटिन हूय ते मैं कहावत मर्जाद सिंधु राम हैं ।।४।।

हरी रक्त रंग धनु भंगी, ग्रनंगमान जैसोई विचित्रवान स्वर्णपंख यान है।
पंच षड्क्रीट मुनिकुंडल निरषि गडमिटी मार्तण्ड गुर कदि उदंड सान है।
बाजूबंद कंकन रचल चौकी कंद छहन पीरो कटि पट कोऊ तड़ित ग्रमान है।
वन प्रमोद रंगी स्याम ग्रंगी कलापी कंठ, रामसखे संगी नृत्य राघव सुजान है ।।५।।

मकार में ग्रकार ह्रस्व विश्नस्वरूप, मीन रुद्र को स्वरूप जानि हलंत मकार है।
रकार में ग्रकार दीर्घ ब्रह्मा को रूप लेषि, राम को स्वरूप देख व्यंजन मकार है।
राम सखे लीजै राम नाम निर्गुन को होत, राम नाम तैं ऊंकार को उच्चार हैं।
राम न ग्रभिराम ग्राराम राम नाम मांहि, ग्रैसो राम नाम सोई गात को ग्रधार हैं।६।।

।।इति श्री रामसते विरचिते ग्रखिल रामायण मुकर षट्कवित्त संपूर्ण ।।

रामसखे जी की उपासना पद्धति 'सखीभाव की थी। वे नृत्यराघव श्रीराम के रसिक थे। उनका सम्पूर्ण साहित्य रसिक-सम्प्रदाय की ही सिद्धान्ततः व्याख्या है। इनकी भाषा सरल एवं स्पष्ट है। डा० भुवनेश्वर नाथ मिश्र माधव के ग्रनुसार राम सखे जी की 'भाषा साफ सुथरी है ग्रौर कहीं-कहीं उर्दू-फारसी के शब्दों की भरमार है। इस शाखा के उपासक में सूफी प्रभाव स्पष्ट है क्योंकि ग्रनेक स्थलों पर सूफी शब्दावली मिलती है। इतना ही नहीं भाव-व्यंजना भी लगभग वैसी ही है। इश्क मजाजी की मांसलता ग्रौर हकीकी की सूक्ष्मता का एक साथ दर्शन होता है। कुछ पदों में पछाहीं प्रभाव स्पष्ट है। कहीं-कहीं मारवाड़ी मिश्रित पंजाबी का भी पुट है। लगता है श्री रामसखे जी बहुश्रुत ग्रौर बहुज्ञ थे ग्रौर देश का पर्यटन भी किया था जिससे उन स्थानों के प्रभाव उनकी भाषा पर सहज रूप में परिलक्षित है। मुक्तक ग्रौर गीतशैली पर कवि का ग्रधिकार है।

प्रताप कुंवरी बाई—

इनका जन्म जोधपुर राज्य के जाखण नामक ग्राम में देवरिया रावलोत वंश के भाटी राजपूत-परिवार में गोविंददास जी के घर में हुग्रा था। बाल्यावस्था से ही प्रताप कुंवरी बाई-भक्ति की ग्रोर उन्मुख थी, किन्तु जोधपुर महाराजा रामसिंह जी की विधवा होने के बाद (सं. १९०० वि.) ग्रापने सांसारिकता से

सन्यास ले लिया। इनका हृदय दयापूर्ण था। फलतः बहुत-सी सम्पत्ति इन्होंने गरीबों, साधुओं, कवियों, विद्वानों एवं भाटों को भेंट में दे दी। इनका हृदय भक्ति-भाव से ओत-प्रोत रहता था। इन्होंने महन्त पूर्णदास जी से दीक्षा ली थी। पति की मृत्यु के बाद आपने अनेक देव-मन्दिरों की स्थापना करवाई। पूर्णदास जी के अतिरिक्त महात्मा दामोदर दास गोसाई जी के प्रति भी इनके हृदय में श्रद्धा थी, जिसका प्रमाण जोधपुर में निर्मित 'रामदारा' आज भी उस पुनीत स्नेह की कहानी कह रहा है।

प्रताप कुंवर बाई ने लगभग १५ ग्रन्थों की रचना की थी जिनमें अधिकांश का विषय रामचरित्र ही रहा। आपकी निम्नलिखित रचनाएं हैं—ज्ञान सागर, ज्ञान प्रकाश, प्रेम सागर, प्रताप पच्चीसी, रघुवर स्नेहलीला, रामगुण सागर, रामचन्द्र नाम महिमा, राम प्रेम सागर, रघुनाथ जी के कवित्त, रामसुजस पच्चीसी, भजन पद हरिजस, प्रताप विनय, रामचन्द्र विनय, हरिजस गायन पत्रिका।

श्री जयतराम—

महाकवि जयतराम के सम्बन्ध में हिन्दी संसार को सर्व प्रथम जानकारी हमने 'विश्वम्भरा' बीकानेर, वर्ष ६ अंक ४, १९७१ ई. के द्वारा दी थी। इनके सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है। बाह्य-साक्ष्य का सर्वथा अभाव है। अन्तः साक्ष्य के आधार पर कहा जा सकता है कि ये १८ वीं शती के पूर्वार्द्ध से उत्तरार्द्ध तक वर्तमान थे। अभी तक उनका एक ही ग्रंथ—'सदाचार-प्रकास' ही प्रकाश में आया है, जिसका प्रकाशन हमारे सम्पादन में सन् १९७१ ई. में हो चुका है।

पूर्वोक्त ग्रन्थ के आधार पर कहा जा सकता है कि जयतराम जी परम रामभक्त थे। प्रारम्भ में आपने किसी श्री योगीदास जी से दीक्षा ली थी। बाद में श्री कृष्णदास जी के प्रति भी समान श्रद्धा रखने लगे थे। 'सदाचार प्रकाश' में कहा है—

> श्री गुरु जोगीदास ही जोई। अरु श्री कृष्णदास जी सोई।
> येक भक्ति मेरी इन माही। मन वच कर्म विषमता नाहीं।

यदि ये जोगीदास जी और कृष्णदास जी, अनन्तदास जी के ही शिष्य हैं तो जयतराम जी भी अग्रदास एवं नाभादास जी की परम्परा के ही कवि माने जाने

चाहिए। समग्र रूप में 'सदाचार प्रकास' को वैष्णव भक्ति का सिद्धान्त ग्रन्थ कहना चाहिए। किन्तु सिद्धान्त ग्रंथ होने के बावजूद कवि का झुकाव राम के प्रति मधुरा-भक्ति पूर्ण ही दिखता है।

जयतराम जी ने दोहा---चौपाई शैली में संवत १७९५ वि. के अश्विन पूर्णिमा, सोमवार को १६४६ छन्दों की 'सदाचार-प्रकाश' नाम रचना का प्रणयन किया था। इस रचना का नमूना देखिये—

बामवोर श्री जानकी कुंदन वर्णी देह।
नील अलक कर मैं कमल, प्रभु सौ अधिक सनेह।
छत्र चवर पुनि हस्त में, निरषत प्रभु की वोर।
लषन भरत अरु शत्रुघन, सेवत है कर जोर॥

श्री हर्याचार्य जी—

श्री हर्याचार्य जी का मूलनाम हीरालाल था जो जोहता के वैश्य परिवार में उत्पन्न हुए थे और व्यापार करते थे। लेकिन फिर गृहस्थी से विरक्ति रहने लगे और मधुराचार्य जी के शिष्य बन कर गलता में रहने लगे। लेकिन मधुराचार्य जी के गलता से चले जाने के बाद ये स्वयं भी अपने गुरु के पास चित्रकूट पहुंच गये। किन्तु गुरु के समझाने बुझाने से वापस गलता आ गये और गद्दी के महन्त बने। अपने गुरु के समान हरि सहचरी (हर्याचार्य) जी भी गलता में रसिक भाव के भक्त थे और गलता में रामलीला का आयोजन करते थे। इस परम्परा का निर्वाह इनके शिष्य श्रियाचार्य ने भी किया। हर्याचार्य जी सं. १९२० वि. तक वर्तमान थे। हर्याचार्य जी के दो ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं (१) जानकी गीतम् (संस्कृत) (२) अष्टयाम (हिन्दी) इनके अतिरिक्त फुटकर पद भी मिलते हैं। उनकी रचना का नमूना देखिए—

जनकलली को सोहिलो गाऊं।
धन्य जनक धनि रानी सुनैना, निरखि लली मुख नयन जुडाऊं।
या कन्या कुल प्रकट कियो है, सुर मुनि जाको सुमिरत नाऊं।
हरि सहचरि बारति तन मन धन भक्ति बधाई नित नई पाऊं।

महात्मा ब्रह्मदास 'शृंगार अली' (१८००-१८८२ वि.)

राम-रसिक भक्ति काव्य परम्परा में महात्मा ब्रह्मदास का स्थान उतना ही महत्वपूर्ण है जितना मधुराचार्य, रामसखे आदि महात्माओं का है। किन्तु अब तक विद्वानों को इस विद्वान राम-भक्त कवि के सम्बन्ध में जानकारी नहीं थी। हमने सर्व प्रथम इस भक्त-कवि को सन् १९७१-७२ में साहित्य संसार के समक्ष प्रस्तुत किया था। ब्रह्मदास जी सुरसुरानन्द जी की परम्परा में राजनोता (जयपुर) के महात्मा गिरधारीदास जी के शिष्य थे। इस प्रकार रामानन्द स्वामी की परम्परा में ब्रह्मदास जी १३वीं पीढ़ी में हुए थे। ब्रह्मदास जी की गुरु परम्परा इस प्रकार है-(१)श्री१००८ गुरु रामानन्द जी (२) सुरसुरानन्द जी (३) माधवानन्द (४) लक्ष्मीदास कोटिया (५) घुगरिया गोपालदास (६) नरहरिदास (७) केवल कूबाजी (८) केसोदास ठाढेश्वर जी (९) खेमदास गुदडी जी (राजनोता गद्दी के महन्त सन् १५३० ई.) (१०) श्री धर्मदास जी (११) श्यामदास जी (१२) गिरिधर दास जी (१३) ब्रह्मदास जी (सन् १७४३ ई. से १८२५ ई.)। अपने गुरु के सम्बन्ध में ब्रह्मदास जी अपने 'राम परत्व ग्रंथ की टीका' नामक ग्रंथ में कहते हैं—

> गिरिधरं गुरुं बन्दे साधुमध्ये शिरोमणिः।
> धनुषांक भुजसम्पन्नों राममंत्र विधारकः ॥८॥
> नदीनां शाव्यका तीरे राजनग्रेप्य शोभिताम्।
> शमीवन समायुक्ता आसनं परिकल्पितम् ॥९॥

अर्थात् साधुओं में शिरोमणि, भुजाओं पर धनुषांक धारण करने वाले एवं राममंत्र के धारक श्री गिरिधर दास जी गुरुदेव को नमस्कार है। गुरुदेव साहबी (साबी) नदी के किनारे स्थित राजनोता नगर के शमीवन में विराजते हैं। इसी ग्रंथ में ब्रह्मदास जी अपने सम्बन्ध में भी कहते हैं—"श्री गिरधरेण नामे स्वरेषु धनेन शिष्येन श्री ब्रह्मदासेन मयेयं मति नामर्थं रत्नाकर श्रीराम परत्वरिति। यद्वा ॥ मम स्थाने परमोप्रकृष्ट कोट नगरेषु तस्यांतरेणु श्रीमद्रामदिव्या स्थान तनमध्येस्तु श्री श्री राम परत्व ग्रंथार्थोक्ति निर्मायतमित्यर्थं"। इसी प्रकार का विवरण ब्रह्मदास जी के दूसरे ग्रंथ 'राम उपासना' (हस्त लिखित वि. सं. १८५५) में भी मिलता है। ग्रंथ की पुष्पिका में लिखा है—"इति श्री स्त्रूति संमृति पुराण इतहास समस्त ग्रंथ संग्रह श्रीराम उपासना सम्पूर्ण शुभम् भवत् ॥ संवत् १८५५ का वर्षे आश्वन कृष्णा २ द्वितीया गुरुवासरे लिष्यंत जथामति सदा शुभ वांछिक ब्राह्मण इन्द्रमनि लिषायतं श्री रघुनाथ उपासिक वैश्नव षेमजी के परपौत्र शिष्य गिरधारी दास जी तस्य शिष्य ब्रह्मदास जी।"

ब्रह्मदास जी का काल सं. १८०० से १८८२ वि. माना जाता है। ये लगभग १८५० वि. तक तो राजनोता ही में रहे, जैसा कि उन द्वारा लिपिकृत ग्रन्थों की पुष्पिकाओं से पता चलता है। बाद में १८५० वि. के आस-पास कोटपूतली (जयपुर) में श्री अवध विहारी जी का मंदिर की स्थापना कर उसके प्रथम आचार्य-महत बने। आप श्री अग्रअली अग्रदासजी की तरह 'श्रृंगारअली' छाप से काव्य-सृजन करते थे। आपकी भक्ति रसिक भाव की थी। आप बड़े विद्वान-भक्त एवं चमत्कारी साधु थे। यह बात १८६६ बि. के एक पत्र, जो गलता गद्दी के तत्कालीन आचार्य, सीतारामाचार्य द्वारा महाराज अभयसिंह, खेतड़ी नरेश को लिखा गया था, से विदित होती है। कोटपूतली में आपकी ७ वीं पीढ़ी में महन्त पीताम्बर दास जी वर्तमान हैं। पूरी परम्परा व्याख्याकार के वक्तव्य में दी गई है।

ब्रह्मदास जी संस्कृत-हिन्दी के विद्वान थे। काव्य के क्षेत्र में 'सखी श्रृंगारनी' या 'श्रृंगारअली' के नाम से लिखते थे। प्रस्तुत लेखक को अब तक आपकी निम्नलिखित रचनाएं प्राप्त हुई हैं—

१. श्रीराम उपासना (१८५५ वि. संस्कृत)।

२. श्रीराम परत्व ग्रंथ की टीका (सं. १८६६ वि. संस्कृत)

३. होरी, गीत आदि (हिन्दी लिपिकाल १९३० वि.)।

ब्रह्मदास जी की चरण चौकी पर आपका साकेत धाम वि सं. १८८२ के दूसरे श्रावण सुदी पंचमी लिखा है। आप राम की रसिक भाव से उपासना करते थे। आपकी मान्यता थी कि सीता की विमला, चन्द्रकला आदि सखियां हैं। रचना का नमूना देखिए—

सींगार सषी जी राम पियारी ॥
पुर साकेत नौवल रस-क्रीड़ा रूप रास उजयारी।
उड़त गुलाल धुंध अंधीयारी, केसर की पिचकारी ॥
छूटत चहुं दिसतैं न्यारी ॥१॥

राज कुवर वर सुंद्र नायेक सावल अवधि बिहारी।
मंद मंद मुसकात माधुरी, चीतवै नैन कटारी।
सषी उर बेदत भारी ॥२॥

चंचल चपल सरस रस मातो कर गही के पिचकारी ।
डारत रंग हुलस हीयो हरषत भीजवत राजकुमारी ।
सषी सब तक तक मारी ।।३।।

बिमला चन्द्रकलादिक नारी, संग सहचरी सारी ।
सिय हिय की निज सैन जानकै, पकरे अवध बिहारी ।
कहत जै जै सीये प्यारी ।।४।।

केसर कुम कुम मेल मुष ऊपर, मोतीयन मांग संवारी ।
आये आज मुष भीड़ अनोषी, गावत तानन गारी ।
छीपत पिय गह सिय सारी ।।५।।

सब सषी कहत कहो पिये सांवरे अपना मुषतै होरी ।
कह सिय चरनन गही कर जोरी, हाहा बात हजारी ।
ईही सुष मूल निहारी ।।६।।

सिय आधीन रहो कहो लालन, मुषतै सब्द उचारी ।
सषी श्रृंगार छुटे रहे फगवा, सुंद्र चतुर षिलारी ।
जीती मिथलेस कुमारी ।।७।।

प्रस्तुत ग्रंथ—

'श्री राम परत्वम्' में श्री १०८ महात्मा श्री ब्रह्मदास जी महाराज 'श्रृंगारअली' जी ने अनेक धर्मतत्व ग्रंथों का सार प्रस्तुत किया है। ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के प्रतिपाद्य, विषय को पृ० सं० ३-४ पर स्पष्ट करते हुए कहा है—

श्रीरामेत्यादि मन्त्राणां व्याख्या सन्ति सहस्रशः ।
तथाप्यर्थानुसारेण व्याख्येयं क्रियते मया ।।१।।

रामतत्त्व प्रभावेण सारसिद्धान्त संग्रहः ।
सर्वानुस्यूतपरं तत्त्वं तस्यार्थौ हि प्रकाशितः ।।२।।

नानाशास्त्रविधानेन अग्रगण्यो वरेण च ।
भिन्न भिन्न प्रभावश्च वाक्यसार प्रकाशितः ।।३।।

पूर्वश्चोत्तरतापनीयरखिलं कल्पं वरं मारुतेः-
ब्रह्मा विष्णु वशिष्ठ शंकरयुजः वाल्मीक व्यासादिभिः ।
शास्त्रं सर्वपुराणवेदभणितं तत्त्वं परं निर्मितं-
श्री-रामपरत्वप्रकाशिका कलिमलप्रध्वंसिका प्रोच्यते ।।४।।

श्रीरामस्य परत्व गुम्फित सदा नामाख्यध्येयं परं-
श्रीसाकेतप्रकाशिका परसुखं रूपं परं भाविकम् ।
रामः तेज प्रतापराशि भणितं यं संगिरन्तेरसं-
एवं पञ्चमहापरं गुणवरं सारं पुराणेस्वपि ।।५।।

अतः रसेश्वर श्रीराम एवं रसेश्वरी श्री सीता जी के रस-रहस्य के ज्ञान हेतु यह ग्रन्थ सेतु के समान है।

इनके अतिरिक्त राजस्थान की राम-रसिक-काव्य-धारा के अन्य भक्त-कवि एवं कवयित्रियां तुलछराय, सिया-सखी, चन्द्रअली, रूप सरसजी, शुभशीलाजी. सुख प्रकाशिनी जी, रसिक प्रिया जी आदि हुए हैं। विस्तारभय से हम यहां इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश नहीं डाल पा रहे हैं।

इस प्रकार राम-रसिक-भक्ति-काव्यकारों की राजस्थान रंगस्थली रही है। यहीं से भक्तजन बाद में अयोध्या-चित्रकूट, जनकपुरधाम आदि स्थानों पर गये थे। यदि इन भक्तों का भी इतिहास एकत्र किया जाये तो बिपुल साहित्य प्रकाश में आपायेगा। इस प्रकार रसिक-साहित्य के परम प्रतिष्ठित कवि कृपानिवास (कृपाअली) एवं रामचरणदास का सम्बन्ध भी दीक्षा की दृष्टि से राजस्थान ही रहा है। रसिक-भाव की भक्ति की दीक्षा 'रेवासा गद्दी के तत्कालीन आचार्यो से इन दोनों कवि-भक्तों ने प्राप्त की है। कुछ भी हो, राम-रसिक साहित्य की प्रारम्भ में बहुत तीखी आलोचना हुई थी, किन्तु समय की सान पर चढ़ कर यह धारा और भी अधिक परवान पर चढ़ गई। कुछ आलोचकों ने इस काव्य धारा को शृंगारी भावनाओं में लपेट कर 'विकृत राम-काव्य धारा' कहा तो किसी ने इस पर कृष्ण काव्य का प्रभाव स्वीकारा है। वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। इस धारा का स्रोत स्वतः प्रस्फुटित एवं स्वतन्त्र प्रवहमान है। आज भी राजस्थान में इस धारा के रसिक भक्त-कवि विद्यमान हैं।

अन्त में, इस ग्रन्थ-'श्रीराम परत्व' की प्रकाशन-योजना के सम्बन्ध में भी दो शब्द कहना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हुं। यह ग्रंथ सन् १९७१ से ही हमारे मन में भा गया था। ईश-कृपा से इसके प्रकाशन का बिचार करके महात्मा पीताम्बरदास जी महाराज ने यत्रन्तत्र प्रयास किये। आखिर 'जहाँ चाह वहाँ राह' की उक्ति के अनुसार त्रिवेणी पीठ के श्री १००८ श्री बाबा नारायणदास जी महाराज की अनुकम्पा से उनके शिष्य श्री मदन जी शास्त्री, राणावास (शाहपुरा) ने उक्त

ग्रंथ की प्रेस कापी तैयार करने में मदद की । अतः हम परम वैष्णव बाबा श्री नारायणदास जी महाराज जो श्रीसियाराम जू के परम भक्त हैं, के हृदय से आभारी हैं।

इसके बाद कुछ सज्जनों ने कहा कि इस ग्रंथ को सर्वजन हिताय बनाने के लिए इसकी हिन्दी-टीका भी होनी चाहिएं । इसके लिए यह आवश्यक था कि ग्रंथ के मर्म को समझने वाला धर्मनिष्ठ विद्वान ही यह कार्य करे। अन्त में श्री किशोरी जू की कृपा से यह इच्छा भी पूरी हुई । इस महान भक्ति सिद्धान्त ग्रंथ के टीकाकार १०८ महात्मा पं० अवधकिशोरदास श्री वैष्णव 'श्री प्रेमनिधिजी' महाराज श्री रामानन्द आश्रम, जनकपुर धाम ने अनेक असुविधाओं के बावजूद इस महान ग्रंथ की ठीका-व्याख्या हिन्दी में करके अनेक धर्मलिप्सुओं की जिज्ञासा को शांत किया है। 'प्रेमनिधि जी' महाराज से मेरी मुलाकात महन्त श्री पीताम्बरदास जी महाराज अवधबिहारीजी का मन्दिर, कोटपूतली के माध्यम में जून ८३ में हुई थी। पंडित जी में एक सौम्य-शांत, गम्भीर एवं विद्वान व्यक्तित्व के दर्शन करके मैं कृतकृत्य हो गया। प्रेमनिधि श्रीमहाराज सौभाग्य से उसी सम्प्रदाय के अधिकारी विद्वान-महात्मा हैं, जिसका यह ग्रंथ है।

यों तो प्रेमनिधि जी महाराज ने सैकड़ों ग्रंथों का प्रणयन–सम्पादन किया है जिनमें कुछ ग्रंथों की सूची तो 'श्री सीतास्त्रोत सुधा सागर' के उत्तरार्द्ध में, तथा 'श्रीरामचरित मानस माहात्म्य में प्रकाशित हुई है, किन्तु मेरी नजर उनके केवल प्रेमरस-माधुरी, आचार्य स्मृति ग्रंथ (गुजराती), श्री सीतामन्त्रार्थ रहस्यम्, रसप्रेम भरी आरती, श्री जानकी नवमो व्रत कथा, श्री अर्थ पञ्चक-प्रदीप, श्री वैष्णवमताम्बज भास्कर. श्री जानकी चालीसा एवं श्री सीता स्तोत्र सुधा सागर (दो भाग) आदि ग्रंथो पर पड़ी है। यद्यपि मैं अल्प बुद्धि, अज्ञान अन्धकारावृत्त एवं संसार-सागर का सामान्य प्राणी उनके विद्वतापूर्ण ग्रन्थों के सम्बन्ध में कुछ कहने का अधिकारी तो नहीं हूँ, लेकिन जितना मैं समझ सका हूँ महाराज जी के प्रत्येक ग्रंथ में मीठी खांड की रोटी का-सा स्वाद मिला है जिसेजिधर से खावो वह मीठी ही लगेगी। श्री युगल प्रिया सरकारकी रस-रहस्य-माधुरी का में पात्र तो नहीं हूँकिन्तु कृपा पात्रअवश्य हूँ।

श्री किशोरी जी के अनन्य भक्त, उपासक एवं परिकर महात्मा' प्रेमनिधि' जी अनेकानेक ग्रंथों के रचियता श्री सीतारामीय महात्मा श्री मथुरादास जी महाराज श्री अयोध्या के प्रधान धर्म एवं भक्ति प्रवण शिष्य रहे हैं। अनेक भक्त-लेखकों के आप प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। आपका समस्त विपुल साहित्य श्री रामानन्द साहित्य माला, जनकपुरधाम (नेपाल) के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ है।

'श्रीराम परत्वम्' ग्रन्थ महात्मा श्री ब्रह्मदास जी महाराज की एक प्रसिद्ध रचना श्रीराम परत्व ग्रन्थ की टीका' (संस्कृत) का संक्षिप्त रूप ही है। मूल ग्र थ बहुत बड़ा होने से हमने इसे सक्षिप्त रूप में ही प्रकाशित करना चाहा। इस सक्षपण में प० प्रेमनिधि जी महाराज ने बहुत सुन्दर टीका सहज भाषा में की है। ग्र थ में अनेक श्लोकों की पुनरावृत्ति हुई है, किन्तु वह सैद्धान्तिक रूप से सापेक्ष्य हैं। उनकी टीका दुबारा नहीं की गइ है। फिर कभी श्री अवधबिहारी जी महाराज की कृपा हुई तो पूण ग्र थ भी प्रकाशित कर सकेंगे। राम-रसिक भक्तों के लिए श्रृंगार अली महात्मा ब्रह्मदास जी का यह ग्रंथ एक सार-ग्रंथ मानना चाहिए। रसेश्वर श्रीराम एव रसेश्वरी श्री किशोरी जी के महात्म्य का पूर्ण दिग्दर्शन इस ग्र थ का विषय है। जिसे सामान्य पाठक के लिए सहज, सरल एवं बोधगम्य भाषा में महात्मा 'प्रेमनिधि' जी महाराज ने प्रेमामृत वर्षिणी भाषा टीका से अलंकृत किया है। मैं अपने हृदय के गहनातिगहनतल से श्री १०८ श्री प्रेमनिधि जी महाराज का हृदय से आभारी हूँ और श्री किशोरी जू से करबद्ध प्रार्थना करता हूं कि आप जैसे निष्ठावान, धर्मप्राण, विद्वान महात्मा शतायु हों जिनकी प्रेरक वाणी एवं लेखनी द्वारा हम सभी लाभान्वित होते रहें।

इस महान ग्रंथ के प्रकाशक महात्मा श्री १०८ श्री पीताम्बरदास जी महाराज, श्री अवधबिहारी जी का मन्दिर, कोटपूतली का आभारी हूँ, जिन्होंने इस सत्कार्य के लिए तन, मन एवं धन से इस ग्रंथ को प्रकाशित करवाने की कृपा की। महन्त श्री पीताम्बरदास जी महाराज, श्री १०८ श्री महात्मा ब्रह्मदास जी महाराज की ७ वीं पीढी में योग्य उत्तराधिकारी हैं। परम वैष्णव धर्मपरायण महात्मा जी ने ७ फर. ८४ से १५ फर. ८४ तक वृन्दावन धाम के सुप्रसिद्ध रामायणी व्यास श्री १०८ श्री वैष्णवदास जी महाराज एवं उनके १०८ सहयोगी संतों द्वारा श्री अवधबिहारी जी के मन्दिर, कोटपूतली में श्री रामचरित मानस के १०८ नवाह्न पाठ के अनुष्ठान का सुमधुर गायन के साथ आयोजन किया था जिससे 'कलियुग केवल नाम अधारा' वाली नगर की जनता को श्री रामचरित सुनने को मिला। सन् १९७१ ई० में भी आपने 'सदाचार प्रकाश' नामक भक्ति ग्रंथ का प्रकाशन करवा कर न्योछावर किया था। सहज, सरल एवं श्री अवधबिहारी जी में अनुरक्त महन्त श्री पीताम्बर दास जी महाराज के इस महदायोजन के लिये हम हृदय से आभारी हैं।

इस ग्रंथ के प्रकाशन में श्री प्रभुशरण जी चौधरी कोटपूतली द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग भी स्तुत्य है। श्री प्रभुशरण चौधरी परम वैष्णव रामश्रेणी

जन हैं। साथ ही महात्मा रामदास जी उर्फ लटूरदास जी महाराज, सीताराम जी का मंदिर, पवाना (कोटपूतली) के भी आभारी हैं। इसके अतिरिक्त महात्मा श्री सीतारामशरण दास जी, जनकपुरधाम (नेपाल) एवं प्रो० लालबहादुर जी, राजकीय महाविद्यालय, चिमनपुरा (शाहपुरा) के भी आभारी हैं, जिनका परामर्श एव प्रेरणा सदैव इस कार्य सम्पादन हमारे साथ रही।

'अग्रवाल मुद्रणालय' शाहपुरा के श्री सीताराम शर्मा, चन्द्रशेखर शर्मा एवं श्री इन्द्रसिंह शेखावत (बाइण्डर) के प्रति आभार व्यक्त करना उचित समझता हूँ, जिन्होंने अनेक असुविधाओं के बावजूद इस ग्रंथ को समय पर प्रकाशित करने में सहयोग किया है।

विद्वत् समाज एवं धर्म-प्रेमी पाठकों से करबद्ध निवेदन है कि इस ग्रंथ में कुछ मुद्रण की अशुद्धियां हो सकती हैं, उनकी ओर ध्यान दिलाने का कष्ट करें ताकि आगे उनमें सुधार किया जा सके। अस्तु।

'त्वदीयवस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये'

रामनवमी, १० अप्रेल १९८४
कोटपूतली (जयपुर)

विनीत—
डॉ० महावीरप्रसाद शर्मा
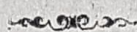
व्याख्याकार का वक्तव्य

प्रस्तुत ग्रंथ के ग्रन्थकार के परिचय की जिज्ञासा स्वाभाविक है, मैं स्वयं, नाम की एकता के कारण हमारे आचार्य स्वामी श्री ब्रह्मदास जी रचित यह ग्रन्थ है ऐसा ही जानता था, परन्तु ग्रन्थावलोकन के पश्चात् ज्ञात हुआ कि ये महापुरुष राजस्थानी सन्त हैं। अतएव यहां उनका संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

आप अनन्य श्री सीताराम प्रभु के उपासक थे, आपने अपने ग्रन्थ का नाम भी "श्रीराम परत्वम्" ही रखा है, आप अपने आराध्य इष्टदेव श्रीराम से परमश्रेष्ठ किसी को मानने के लिये स्वप्न में भी तैयार नहीं है। यही कारण है कि आपने अपने परत्व के प्रतिपादक शास्त्रीय प्रमाणों को वारंवार दोहराया है।" द्विबद्धं सुबद्धं भवति" दुवारा कस करके बांधने से ढिलाई नहीं आती है, इसी न्याय को आपने सप्रेम अपनाया है। यद्यपि मैंने ग्रन्थविस्तार के भय से उन वाक्यों की वारंवार टीका नहीं की है, परन्तु उन उद्धरणों को मूलरूप में ज्यों का त्यों रहने दिया है।

श्रीराम ही परात्पर पर ब्रह्म परमाराध्य हैं, उनकी माधुर्य रस भरी उपासना ही परमश्रेष्ठ उपासना है, श्रीराममंत्र ही परात्परतम श्रेष्ठ मन्त्रराज है। श्रीराम के प्रिय धनुषबाणों की तप्त छाप मुद्रा ही सर्वोत्कृष्ट मुद्रा है। तुलसी की माला तथा श्रीराम के रसिक सन्तों का परम प्रिय तिलक चन्द्रिका-मुद्रिका विन्दु सहित श्री सीताराम नामाङ्कित तिलक ही आपका परम प्रिय तिलक है। श्रीराम का प्रिय धाम श्री अयोध्या धाम (साकेतधाम) ही प्रभुभक्तों का प्राप्य परमोत्तम परात्परतम दिव्यधाम है तथा श्री जनक राज किशोरी जू की सखियों सहेलियों के साथ हिल-मिल कर श्री सीताजी के सम्बन्ध-ज्ञान सहित रसमय माधुर्योपासना ही आपकी आन्तरिक भावना का सार सर्बस्व है।

मैंने आपका केवल यही एक "श्रीरामपरत्वम्" ग्रन्थ का ही अवलोकन किया है परन्तु डा० श्री महावीरप्रसाद शर्मा, प्राध्यापक, हिन्दी-विभाग राजकीय महाविद्यालय, कोटपूतली (राजस्थान) के द्वारा लिखित "राजस्थान का राम-

रसिक-भक्ति काव्य" नाम का एक विस्तृत निबन्ध महन्त श्री पीताम्बर दास जी ने मेरे पास भेजा है। उसके पढ़ने से श्री ब्रह्मदास जी महाराज के विषय में कुछ ज्ञात हुआ। यों तो विस्तार से तो इस ग्रंथ की भूमिका में विद्वान लेखक ने लिखा ही है। उसका सारांश नीचे की पंक्तियों में उद्धृत किया जा रहा है—

आप रामभक्ति के महान प्रचारक आचार्य शिरोमणि श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज के प्रधान द्वादश शिष्यों में स्वामी श्री सुरसुरानन्द जी महाराज (जो श्री नारद जी के अवतार माने गये हैं) की परम्परा के सन्त थे। आप भक्तमाल प्रसिद्ध तथा रामानन्द सम्प्रदाय में परम प्रसिद्ध श्री कूबा जी महाराज भीथडा (पाली) स्थान की आचार्य परम्परा के सन्त थे। यह विवरण आपकी गद्दी के वर्तमान महन्त श्री पीताम्बर दास जी से प्राप्त हुआ है। आपकी जन्मभूमि तथा वंश का परिचय तो अभी तक हमें प्राप्त नहीं हुआ है, परन्तु "राजनोता" तथा "कोटपूतली" नगर में आपके निवास का पुष्ट प्रमाण तो प्राप्त होता ही है। इनके जीवन काल का तथा ग्रंथ-निर्माण का विवरण डा० महावीर प्रसाद शर्मा ने जो लिखा है वह इस प्रकार है—

"ब्रह्मदास जी का काल वि. संवत् १८०० से १८८२ वि. संवत् माना जाता है। १८५० वि. सं. तक तो "राजनोता" ही में रहे जैसा कि उनके द्वारा लिपिकृत ग्रंथों की पुष्पिकाओं से पता चलता है। बाद में १८५० वि० के आस-पास कोटपूतली (जयपुर) में श्री अवधबिहारी जी का मन्दिर की स्थापना कर उसके प्रथम आचार्य आप बने। आप "अग्रअली" की तरह "शृंगार अली" छाप से काव्य सृजन करते थे। आपकी भक्ति रसिक–भाव की थी। आप बड़े विद्वान–भक्त एवं चमत्कारी साधु थे। यह बात १८९९ वि० के एक पत्र. जो गलता गद्दी के तत्कालीन आचार्य सीतारामाचार्य द्वारा महाराज अभयसिंह खेतड़ी नरेश को लिखा गया था से विदित होती है। कोटपूतली में आपकी शिष्य–परम्परा में ७ वीं पीढ़ी (महन्त पीताम्बरदास जी) चल रही है।

ब्रह्मदास जी संस्कृत हिन्दी के विद्वान थे। काव्य के क्षेत्र में "सखी–शृंगारनी" या "शृंगार अली" के नाम से लिखते थे। प्रस्तुत लेखक को अब तक आपकी निम्नलिखित रचनायें प्राप्त हुई हैं—

(१) श्री राम उपासना (लि. का. एवं रचना काल १८५५ वि. संस्कृत)।

(२) श्रीराम परत्व ग्रंथ की टीका (ह० लि०) लिपिकाल एवं रचना-काल सं. १८६६ वि. (संस्कृत)।

(३) होरी गीत आदि (हिन्दी) लिपिकाल १९३० वि. ।

ब्रह्मदास जी की चरण चौकी पर आपका साकेत धाम वि० १८८२ दूसरे श्रावण की पंचमीं लिखा है। आप राम की रसिक भाव से उपासना करते थे। आपकी मान्यता थी कि श्री सीता की विमला चन्द्रकला आदि सखियां हैं"

विद्वान लेखक जो उसी नगर के निवासी हैं, उनके द्वारा लिखा हुआ विवरण आपके जीवन का समय, सम्प्रदाय, सिद्धान्त आदि पर स्पष्ट और सत्य प्रकाश डालता है। हिन्दी-साहित्य-जगत् में ही नहीं, उपासना तथा सम्प्रदाय के क्षेत्र में भी आपने ही सर्वप्रथम अपने विचार सुव्यक्त किये हैं।

ग्रंथकार का सम्प्रदाय—

श्री रामोपासना के रसिक सन्त प्राय: श्री रामानन्दीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय के ही अधिक हुए हैं। आपको भी इसी महान् सम्प्रदाय में दीक्षित-शिक्षित होने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपने अपने "श्रीराम परत्वम्" ग्रंथ में ही अपनी परम्परा के सुपुष्ट प्रमाण उपस्थित किये हैं। जैसे—

हनुमत्परमाचार्यो विनाचार्यो न कोऽपि च।
इति पद्धति निर्णीतं पूर्वोक्तं च मयोदितम् ।।७०२।।
राजमार्गमिमं विद्धि रामोक्तं जानकीकृतम्।
यदृते चान्य मार्गास्तु चौराणां वीथिका यथा ।।७१९।।
आद्याचार्यं हनूमतं त्यक्त्वा चान्यमुपासते।
क्लिश्यन्ति चैव ते मुग्धा: मूलहा पल्लवाश्रिता: ।।७२०।।
श्री जानकी सम्प्रदायं राम रास समन्वितम्।
ऋते कोऽपि न यास्यन्ति वाञ्छितं फलमेव वा ।।७२२।।

"श्री हनुमान जी ही परमाचार्य हैं। उनके बिना अन्य कोई इस राम भक्ति के समर्थ आचार्य है ही नहीं। यह बात सैद्धान्तिक पद्धति पूर्वक मैंने पूर्व ही स्पष्ट शब्दों में कही है।"

"श्री रामजी का कहा हुआ तथा श्री जानकी जी द्वारा प्रवर्तित यह राज मार्ग है। इसके बिना अन्य सभी मार्ग चोरों को अंधेरे में भटकाने वाली गलियों के समान है।"

"श्रीराममन्त्र के आद्य प्रवर्तक आचार्य श्री हनुमान जी को त्याग कर जो अन्य मार्गों में भटकते हैं वे मूल को काट कर पत्तों का आश्रय लेने वाले मूर्खों की भांति केवल कष्ट ही कष्ट भोगते हैं।"

"यह हमारा श्री जानकी सम्प्रदाय है, जो श्री राम की रासलीलाओं से परिपूर्ण है। इसका त्याग कर अन्य सम्प्रदाय का आश्रय लेने वाले कोई भी कदापि मन के माङ्गलिक मनोरथों को सफल नहीं कर सकते हैं।"

महाशम्भु संहिता के इन प्रमाणों को उद्घृत करके आप डंके की चोट से सिद्ध करते हैं कि हम "श्री सीतानाथ समारम्भा परम्परा के ही अनुयायी हैं। आगे आप पुन: श्री सदाशिव संहिता का प्रमाण देकर सिद्ध करते हैं कि—

रामशिस्याऽभवत् सीता तच्छिष्यो शम्भुरेव च।
स एव हनुमादाख्यो जानकी शिष्य विश्रुत: ।।७२३।।

"श्री सीताजी श्रीराम जी की शिष्या बनीं, तथा श्रीराम के द्वारा तारक श्रीरामषडक्षर प्राप्त कर श्री सीताजी ने हनुमान जी को शिष्य बनाया, वही हनुमान जी महाशम्भु के नाम से विख्यात हैं। आप पुन: अधिक स्पष्ट करते हैं कि—

अद्वैते य: परे व्योम्नि धाम्नि च प्रभुरीश्वर: ।
सीता प्रेम रसामोद विनोदरति विभ्रम: ।।१००१।।
प्रसन्नोऽभूत् तदादेव: श्रीराम: रसिकांवर: ।
मन्त्रराज स्वरूपेण कथितं जानकीं प्रति ।।१००२।।
गृहीत्वा श्रीराम प्रिया मन्त्रराज स्वरूपकम् ।
सीतादत्त ततो मन्त्रो महाशम्भुर्महाबल: ।।१००३।।
कथामास वै तत्वं जानकी महाशम्भवे ।
मन्त्रं षडक्षरं तारं मन्त्राणां कल्पभूरुहम् ।।१००४।।
महाशम्भु: महामन्त्रं ब्रह्माविष्णु शिवादिकान् ।
कथयामास देवेशो मूलमन्त्रं षडक्षरम् ।।१००५।।

श्री शिव संहिता में श्री महामाया श्री महाविष्णु भगवान् से कहतीं है कि परम व्योम दिव्य धाम साकेत में जिसके समान कोई नहीं है उस अद्वितीय परमधाम में ईश्वरों के भी परमेश्वर प्रभु श्रीराम श्री सीताजी के परमपावन प्रेमरस में आमोद-प्रमोद-विमोद में छके हुए अपनी प्राणप्रिया जू पर परम प्रसन्न होकर रसिक राज शिरोमणि श्रीरामजी ने यह मन्त्रराज प्रकट स्वरुप से श्रीजानकी जी के प्रति कथन किया। श्रीमन्त्रराज को यथार्थ स्वरुप ज्ञान पूर्वक ग्रहण करके श्रीरामप्रिया श्री जानकी जी ने प्रौढ़ प्रेम के दिव्यबल से महान बलवान् श्रीमहाशम्भु (श्री हनुमान जी) को यह षडक्षर तारकब्रह्म श्री रामन्त्र जो अन्य सभी-मन्त्रों को कल्पवृक्ष की भांति महान् शक्ति प्रदान करने में समर्थ है, ऐसा महामन्त्र प्रदान

किया । महाशम्भु श्री हनुमान जी ने यह मन्त्र ग्रहण करके ब्रह्मा-विष्णु-शंकर आदि देवताओं को प्रदान किया ।

इतना स्पष्ट आग्रह पूर्वक श्रीराम मन्त्रराज की परम्परा वर्णन करने वाला महापुरुष दूसरे आचार्यों की परम्परा में प्रवेश करने का स्वप्न में भी विचार कैसे कर सकता है ? इसलिये परमपूज्य स्वामी श्रीब्रह्मदास जी महाराज "श्रीसीतानाथ समारम्भाम्" परम्परा को ही मानते थे, यह सूर्य के प्रकाश की भांति निर्विवाद सिद्ध होता है । पाठकों की जानकारी के लिये अब उनकी पूरी आचार्य परम्परा का उल्लेख किया जाता है, स्मरण रहे—श्रीमन्नारायण द्वारा प्रचलित श्रीराम-मन्त्रपरम्परा आगे चल कर कलियुग में छिन्न-भिन्न हो जायगी तथा उसमें श्रीराममन्त्र की उपेक्षा करके मनमानी बातें लोग चलावेंगे, ऐसा आपने महाशम्भु संहिता का प्रमाण देकर श्लोक सं० ७०८ से श्लोक सं० ७१२ तक वर्णन किया है । अतः आपके द्वारा सिद्धान्त पक्ष से समर्थित परम्परा यही है । यह बात कभी भूलनी नहीं चाहिये ।

श्री अयोध्या जी में श्रीकूबाजी महाराज की परम्परा के लक्ष्मणकिला तथा श्रीसद्गुरु सदन गोलाघाट दो सुप्रसिद्ध स्थान हैं, उनकी परम्परा में श्रीमाधवानन्द जी के पश्चात् श्री गरीबानन्द जी का नाम अधिक है । चिरान छपरा के श्रीयुगल-प्रियाजी श्रीजीवाराम जी महाराज भी इसी परम्परा के थे । गुजरात में सौराष्ट्र में सापला स्थान इसी द्वारा का सुप्रसिद्ध स्थान है । मुख्यगद्दी झीथड़ा द्वारा प्रमाणित परम्परा भी यही है । इसीलिये मैंने खोजबीन करने के पश्चात् ग्रन्थकार की इस परम्परा को यहां उल्लिखित की है । इसमें श्रीरामानन्दाचार्य से लेकर श्रीब्रह्मदासजी महाराज तक की नामावली डा० महावीर प्रसाद जी के अनुसार तथा श्रीब्रह्मदास जी महाराज से वर्तमान महन्तजी पर्यन्त परम्परा महन्त श्रीपीताम्बर दासजी महाराज के द्वारा प्राप्त पत्र में प्रदर्शित क्रमानुसार दी गयी है ।

सीतानाथ समारम्भां रामानन्दार्य मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम् ।।

१—श्री भगवान् श्रीरामजी
२—जगदम्बा श्री जानकी जी
३—श्री हनुमान जी (महाशम्भु)
४—श्री ब्रह्मा जी
५—श्री वशिष्ठ जी
६—श्री पराशर जी

७–श्री व्यास जी
८–श्री शुकदेव जी
९– ,. बौधायन जी
१०–श्री गंगाधराचार्य जी
११– ,, सदाचार्य जी
१२– ,, रामेश्वराचार्य जी
१३– ,, द्वारानन्दाचार्य जी
१४– ,, देवानन्दाचार्य जी
१५– ,, श्यामानन्दाचार्य जी
१६– ,, श्रुतानन्दाचार्य जी
१७– ,, चिदानन्दाचार्य जी
१८– ,, पूर्णानन्दाचार्य जी
१९– ,, श्रियानन्दाचार्य जी
२०– ,, हर्याचार्य जी
२१–श्री राघवानन्दाचार्य जी
२२–श्री जगत्गुरु श्री रामानन्दाचार्यजी
२३–श्री सुरसुरानन्द जी
२४– ,, माधवानन्द जी
२५– ,, लक्ष्मीदास जी (कोटिया)
२६– ,, घुगरिया श्री गोपालदास जी
२७– ,, नरहरि दास जी
२८– ,, केवलराम जी (कूवा जी)
२९–श्री केशवदास ठाडेश्वरी जी
३०– ,, खेमदास जी (खेम गूदड़ीजी राजनौता-जयपुर)
३१– ,, धर्मदास जी
३२– ,, श्यामदास जी
३३– ,, गिरधर दास जी
३४– ,, ब्रह्मदास जी ग्रंथकर्ता
३५–श्री स्वामी रामदास जी
३६– ,, रघुवरदास जी
३७– ,, स्वामी चरणदास जी
३८– ,, मङ्गलदास जी
३९ श्री पीताम्बरदास जी (बर्तमान)

ग्रन्थ प्रकाशन का कारण—

आज प्रेस तथा प्रकाशन के युग में नित्य नये-नये ग्रन्थ छपते ही रहते हैं परन्तु श्रीराम उपासना भावना में वृद्धि करे ऐसे साहित्य का प्रकाशन अत्यल्प नाम मात्र ही होता है। आज से लगभग पचास साठ वर्ष पहले कुछ पुस्तकें छपीं जिसमें कविता, भजन की पुस्तकों के साथ-साथ श्रीरामरसिक भावना उपासना के प्रचारक श्रीअग्रस्वामी जी महाराज का "श्रीरामरहस्यत्रय" श्रीरामसारसंग्रह" "अष्टयाम" आदि संस्कृत के ग्रन्थ भी छपे ठीक उनकी ही शैली का शास्त्रीय सिद्धान्त प्रतिपादक अयोध्या जानकीघाटके श्रीरामचरणजी (श्रीकरुणासिंह जी) महाराज का "श्रीरामनवरत्न" ग्रन्थ महर्षिकल्प अभिनव वशिष्ट श्रीरामानन्द सम्प्रदाचार्य सन्तशिरोमणि पं० श्रीरामवल्लभशरण जी महाराज की टीका सहित छपा पं० श्रीसरयूदास जी महाराज श्रीवैष्णवधर्म प्ररोचक के भी ११ ग्रन्थ अप्रतिम सिद्धान प्रतिपादक प्रकाशित हुए। हमारे आचार्य देव श्रीसीतारामीय स्वामी श्रीमथुरादास जी महाराज के "कल्याणकल्पद्रुम" पञ्चसंस्कार आदि 'श्रीरामान्द साहित्यमाला" के अन्तर्गत प्रकाशित हुए। श्रीजानकीघाट के ही आचार्य प्रवर श्रीहरिदासजी महाराज के श्रीरामतापनी उपनिषद् भास्य" श्रीरामस्तवराज भाष्य"

रहस्य त्रय भाष्य" आदि ग्रन्थ प्रकाशित हुए। स्वामी श्रीभगवदाचार्य जी महाराज के "श्रीरामानन्द-दिग्विजय" आदि ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ, स्वामी श्रीरघुवराचार्य जी महाराज के द्वारा "श्रीआनन्द-भाष्य" आदि ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ। परन्तु तत्पश्चात् प्रकाशन का प्रवाह शिथिल पड़ गया। किसी प्रकार "श्रीरामानन्द साहित्वमाला" श्रीजनकपुरधाम से तथा श्रीरामान्द वेदान्त प्रकाशन" श्रीकोशलेन्द्रमठ अहमदाबाद से अभी चल रहा है। स्वामी श्रीवैष्णवाचार्य जी महाराज अहमदाबाद ने भी आचार्यों के बड़े सुन्दर ग्रन्थों का प्रकाशन किया कराया जो कभी भूला नहीं जा सकता परन्तु अब वे भी वृद्धावस्था के कारण शिथिल हो गये हैं। रसिक उपासना के साहित्य ग्रंथ श्री लक्ष्मण किलाधीश आचार्य श्री सीताराम शरण जी महाराज अयोध्या जी के प्रकाश पथ में लाये गये। परन्तु वर्तमान में मन्द गति से ही कार्य चल रहा है। हाँ मणि पर्वत श्रीराम ग्रंथागार के संस्थापक पं० श्री रामकुमारदास जी रामायणी जी का श्री रामायण साहित्य प्रकाशन कार्य अब भी चल रहा है। यों तो यत्र-तत्र से भी कभी-कभी छोटे-मोटे श्रीराम उपासना तथा रामायण के प्रसंगों पर कुछ न कुछ प्रकाशन होता ही रहता है। परन्तु उपर्युक्त प्रकाशित पुस्तकों की पुनरावृति न होने से तथा प्रचार के अभाव से वे सबके सब प्रायः अब अप्राप्य हो गये हैं।

इतना ही नहीं काल की कराल गति से मेरे देखते-देखते सन्तों की रसमयी वाणी से प्रेमरस विभोर कर देने वाले सैकड़ों ग्रंथ दीमक तथा चूहों द्वारा नष्ट हो जाने से बोरों में भर-भर कर श्री सरयू की धारा में प्रवाहित कर दिये गये हैं, परन्तु बचे-खुचे टूटे-फूटे पन्ने भी लज्जा के मारे हमारे हाथ नहीं लगने दिये। यदि आज श्रीराम भक्तिरस भरित हिन्दी तथा संस्कृत की वे रचनायें प्रकाश पथ में आती तो श्री रामोपासना का साहित्य कितना गौरवान्वित होता, उसकी तो अब कल्पना मात्र ही की जा सकती है। अभी भी अनेकानेक हस्तलिखित ग्रंथ अयोध्या आदि स्थानों की अलमारियों में कैद पड़े सड़ गल रहे हैं, परन्तु उनका उद्धार करने वाला कोई दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। केवल प्रभु की इच्छा कहकर संतोष करना पड़ता है।

श्री ब्रह्मदास जी महाराज का यह "श्रीराम परत्वम्" ग्रंथ श्री रामोपासना का सर्वोत्कृष्ट अप्रतिम ग्रंथ है। यदि इसको भी प्रकाशित न कराया गया तो यह भी नष्ट ही हो जायगा, इसी पवित्र भावना से महन्त श्री पीताम्बरदास जी महाराज ने "यह एक पूर्वाचार्य चरणों की परम श्रेष्ठ आराधना है" इस दिव्य

ज्ञान से प्रेरित होकर इसे प्रकाशित करने का दृढ़ संकल्प कर लिया। इसकी टीका करने के लिए–वृन्दावन के वरिष्ठ गुणगरिष्ठ सन्त श्री गणेशदास जी महाराज, जो स्वयं ग्रंथकार, साहित्यिक, कवि, लेखक तथा "भक्तमाल" की सर्व प्रिय तथा सर्वोत्तम टीका करने वाले हैं, एवं वंशीवट श्री सुदामा कुटी "श्रीरामानन्द पुस्तकालय" के संचालक के द्वारा यह ग्रन्थ टीका हेतु मेरे पास श्री जनकपुर धाम भेज दिया।

यद्यपि मेरा स्वास्थ्य दिनो दिन गिरता ही जा रहा है, नेत्र की ज्योति जो पढ़ने–लिखने में प्रधान अङ्ग है, निरन्तर क्षीण होती जा रही हैं, तथापि आपका प्रेमाग्रह मैं टाल न सका एवं अब जो भी सेवा बन जाय कर लिया जाय ऐसी भावना भी सन्त भगवन्त की कृपा से हृदय में प्रकट हुई तथा जैसी-तैंसी यह व्याख्या लिखी गई। स्वास्थ्य सानुकूल न रहने तथा विस्मृति दोष के कारण मनोनूकूल टीका तो नहीं हुई है तथापि जो कुछ सन्तों की कृपा ने हाथ पकड़ कर लिखवाया वह आपकी सेवा में समर्पित है। मैं इसमें त्रुटियां ही त्रुटियां देख रहा हूँ तथापि गुणग्राही सारतत्वरस भोगी सज्जन इसे अपना कर मुझे अवश्य कृतार्थ करेंगे, ऐसी भावना से ही यह ढीठता की गई है। इसी बहाने प्रभु श्रीराम के चिन्तन मनन का सुयोग सन्तों ने प्रदान किया यह मेरा अहोभाग्य मानता हूँ।

निवेदक—
संत चरण रेणु
अवधकिशोरदास "प्रेमनिधि"

जनकपुर धाम
(नेपाल)
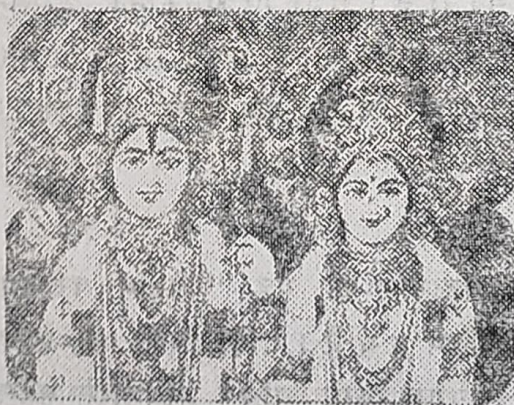
।। श्रीमते रामानन्दाय नमः ।।

मेरे विचार

स्वामी श्री पं० अवधकिशोर दास जी 'प्रेमनिधि' जी श्री सम्प्रदाय के तत्वचिन्तक मनीषियों में एक सुलझे मस्तिष्क वाले अनन्य सीतारामोपासक हैं। आपने श्री रामोपासकों के लिये अनेक ग्रन्थ रत्नों को भेंट किया हैं। आपका अधिकांश समय श्री सीताराम जी के नाम-रूप-लीला-धामादि के सेवा-चिन्तन में व्यतीत होता है। आप सदैव सच्छास्त्रों का आलोडन किया करते हैं। 'श्री रामपरत्वम्' नामक संग्रह उसी आलोडन का सुपरिणाम है। श्री रामतापनी भाष्यकार स्वामी श्री हरिदासाचार्य जी ने लिखा है कि—

"सूक्ष्म तत्व विचारे हि पुनरुक्तिर्न दोषभाक्।
मण्यादीनां परीक्षादौ यतो दृष्टिर्गुणावहा ।।"

इस न्याय से 'श्रीरामपरत्वम्' संग्रह में अनेक श्लोक अनेक बार आये हैं और उनकी टीका भी अनेक बार हुई है। परन्तु आज के लोग बहुत-सी पुनरुक्तियों को पसन्द नहीं करते। इसलिए जो श्लोक एक बार आ गया है उसका प्रतीक मात्र दूसरी जगह दिया जाय तथा उसकी संख्या निर्देश कर दिया जाये। ऐसा करने से ग्रन्थ का कलेवर भी नहीं बढ़ेगा। क्योंकि आज का प्रबुद्ध कहलाने वाला समाज समयाभाव को बताकर ऐसे उपादेय तथ्यों को दो से अधिक बार पढ़ने पर उसकी अवहेलना कर देता है। इस संग्रह में 'श्री प्रेमनिधि' ने कितना परिश्रम किया है उसका मूल्यांकन कोई विद्वान ही कर सकता है। सम्वत् २०२२ विक्रम में 'श्री जानकीदास जी' जयपुरी ने एक संटिप्पण भक्तमाल छपाया था, उसके अन्त में परिशिष्ट रुप से चार सौ छप्पयों में लिखे गये मेरे नाम से छपा था। जिसका ६१ संख्या का छप्पय निम्न लिखित है—

मध्य जनकपुर आश्रम रामानन्द बनाये।
राम भक्तिमय ग्रन्थ अनेकन लिखे छपाये ।।
वक्ता परम गंभीर लेखनी महँ बल भारी।
श्री हरी गुरुपद प्रीति नीतिरत रहत सुखारी ।।
निज गुरु मथुरादास जी सीतारामिय चरण वर।
अवध किशोर सुदास हरि भक्ति प्रचारक विज्ञवर ।।

भगवद्दासानुदास
पं० रामकुमारदास
श्रीमणि पर्वत, श्री अयोध्याजी

जेष्ठ कृष्णा सप्तमी—शुक्रवार
सं० २०४० विक्रमीय

श्री गणेशाय नमः   श्री सीतारामाभ्यां नमः   श्री सरस्वत्यै नमः

श्रीमङ्गलमूर्तये श्रीमन्मारुतनन्दनाय नमः

श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः

श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः

श्रीराम परत्त्वम्

:: मंगलाचरणम् ::

नमामि राजराजानं चरणाम्बुरुहं हि मे ।
यत्प्रसादेन वेदार्थो हस्तामलकतां गतः ।।१।।

राजाधिराज श्री रामचन्द्र जी के श्रीचरण कमलों में मैं प्रणाम करता हूँ जिनके कृपा प्रसाद से वेदों का रहस्यमय अर्थ मुझे हस्तामलक (हाथ में रखे आमला के) समान स्पष्ट प्रत्यक्ष हुआ है ।।१।।

वन्दे रामं परंब्रह्म सच्चिदानन्द विग्रहम् ।
द्विभुजं श्यामलं नित्यं पादाम्बुज समाश्रये ।।२।।
जानकी जगतामीशा नित्या ह्येषानुपायिनीम् ।
सर्वशक्तिकरी धात्री तस्याः पादं समाश्रये ।।३।।

द्विभुज, श्यामसुन्दर, नित्य सच्चिदानन्द स्वरूप, परमब्रह्म श्रीराम के चरण कमल का मैं आश्रय लेता हूँ ।।२।।

जगदीश्वरी, श्रीराम की नित्य अनपायिनी पराशक्ति, सभी शक्तियों को शक्ति प्रदान करने वाली, जगन्माता श्री जानकी जी के श्रीचरणों का मैं आश्रय लेता हूँ ।।३।।

हनूमन्तं महावीरं नित्य मङ्गल विग्रहम् ।
रामभृत्यं परं प्राहुः तस्य पादं समाश्रये ।।४।।

नित्यमङ्गलविग्रह, महावीर श्री हनुमान जी, जो श्रीराम के सेवकों में परम श्रेष्ठ कहे गये हैं, मैं उनके श्री चरण कमल का आश्रय लेता हूँ ।।४।।

वन्दे श्रीअस्मदाचार्यं सर्ववेद समाश्रयम् ।
श्रीमन्त्रयन्त सिद्धान्त देशिकेन्द्रेण वर्णितम् ।।५।।

समस्त वेदों का जो आशय है, ऐसे वेद वेदान्त के सिद्धान्त का वर्णन करने वाले सभी आचार्यों में सर्वश्रेष्ठ अपने आचार्य चरणों की मैं वन्दना करता हूँ ।।५।।

रामानुजं गुरुं वन्दे मर्त्यानां भरणं महन् ।
तत्वार्थ निखिलं प्राहुः पादपद्मं समाश्रये ।।६।।
सुखनिधिं गुरुं वन्दे सर्वतत्त्वार्थविन्महान् ।
माधुर्यरससम्पन्नं रामचन्द्रगुणालयम् ।।७।।
गिरिधरं गुरुं वन्दे साधुमध्ये शिरोमणिः ।
धनुषाङ्क भुजसम्पन्नो राममन्त्र विधारकः ।।८।।
नदीनां शाव्यकातीरे राजनग्रेण्यशोभिताम् ।
शमीवन समायुक्तां आसनं परिकल्पितम् ।।६।।
सीतानाथ समारम्भां बहु सिद्ध समन्विताम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ।।१०।।

मृत्युभुवन के मानवों का जो महान् आश्रय है तथा जिन्होंने परम-तत्व का सम्पूर्ण सार सिद्धान्त वर्णन किया है, उन श्री रामानुज शरण नाम के परम् गुरुदेव के श्रीचरण कमलों का मैं आश्रय लेता हूँ ।।६।।

सम्पूर्ण सुखों के सागर सभी तत्वों के अर्थों के महान् विज्ञाता, माधुर्य रस से भरपूर, श्री रामचन्द्र जी के दिव्य गुणों के निवास (अर्थात् जिनका हृदय प्रभु के गुण-गणों के वर्णन के आनन्द से भरा हुआ है) सन्तों के समाज में जो शिरोमणि हैं, श्री धनुर्बाण की मुद्रा से जिनकी भुजायें अलंकृत हैं, जो श्रीराममन्त्र के धारण करने वाले हैं ऐसे श्री गिरधरशरण जी महाराज गुरुदेव की मैं वन्दना करता हूँ। राजनोता नगर में सुशोभित, तथा समीवन से सम्पन्न शाव्यका (साबी) नदी के तीर पर जिनका आसन लगा है ऐसे श्री गुरुदेव को प्रणाम है ।।६।।

श्री सीतानाथ प्रभु श्रीराम से प्रारम्भ हुई तथा बीच में बड़े-बड़े सिद्ध-सन्तों के द्वारा प्रचार की गई, हमारे श्री गुरुदेव पर्यन्त श्री गुरु-परम्परा की मैं वन्दना करता हूँ ।।१०।।

नित्यं नौमि परेशराम रमणं माधुर्यलीला वरं-
रूपं राशिवरं तथा गुणवरं लावण्य शोभावरम् ।
सौन्दर्यं वरवेश चैव सततं विहरन्त सरयूतटे-
सीतासङ्ग रसादिमोदकरणं श्रीमन्त सर्वेश्वरम् ।।११।।

सभी में रमण करने वाले, परात्पर परमेश्वर, माधुर्य लीला के सर्वोत्तम नायक, जिनका रूप-गुण-लावण्य-शोभा-सौन्दर्य सभी अत्यन्त श्रेष्ठ है, ऐसे वर वेश श्री दूलहा रूप धारण किये हुए, श्री सीताजी के सङ्ग में आनन्द रस विभोर होकर सदैव श्री सरयूतट पर कुंज निकुञ्जों में विहार करने वाले सर्वेश्वर श्रीमान् रामचन्द्र जी को मैं नित्य निरन्तर प्रणाम करता हूँ ।।११।।

नित्यं सर्वगुणेशवीरकरुणाशृंगारमालंत्रये-
हास्यं वारितरङ्ग यौवनशरं चातुर्यगुणसागरम् ।
धीरं सीम परावरं सुखकरं रासादि क्रीड़ाकरं-
ध्येयं योगिवरैस्तथापि मुनिना वाल्मीक व्यासदिभिः ।।१२।।

जो नित्य है सभी सद्गुण, कल्याण गुण-गणों के आगार हैं, वीर-करुण ा, शृङ्गार-हास्यादि गुण जिनके समुद्र की तरङ्गों की भांति सुशोभित हो रहे हैं, चातुर्य गुण के समुद्र नित्यनवल युवा, धीरता की चरम सीमा, परमधाम और लीलाविभूति दोनों को सुख प्रदान करने वाले रासादि क्रीड़ा केलि कौतुक पारायण, श्रेष्ठ योगीजनों द्वारा परमध्येय तथा श्रीमद् वाल्मीकि, श्रीमद् वेदव्यास जी आदि मुनिजनों द्वारा परमगेय (गुणगाने योग्य) श्रीराम को मैं प्रणाम करता हूं ।।१२।।

अस्य ग्रन्थस्य प्रतिपाद विषयः-

श्रीरामेत्यादि मन्त्राणां व्याख्या सन्ति सहस्रशः ।
तथाप्यर्थानुसारेण व्याख्येयं क्रियते मया ।।१३।।
रामतत्त्व प्रभावेण सारसिद्धान्त संग्रहः ।
सर्वानुस्यूतपरं तत्त्वं तस्यार्थो हि प्रकाशितः ।।१४।।
नानाशास्त्रविधानेन अग्रगण्यो वरेण च ।
भिन्न भिन्न प्रभावश्च वाक्यसार प्रकाशितः ।।१५।।

'श्रीराम' इत्यादि भगवन्मन्त्रों के अर्थ सहस्त्रों प्रकार से महान् पुरुषों ने किये हैं। तथापि उन्हीं अर्थों के अनुसार मैं भी अपनी परम प्रिय व्याख्या का विस्तार करता हूँ ।।१३।।

श्रीराम परत्व का प्रभाव जो सभी वेद शास्त्रों में भरपूर है उसीका सार-सिद्धान्त इस ग्रन्थ में प्रकाशित किया गया है ।।१४।।

अनेकों शास्त्रों के वचनों द्वारा तथा प्रभु के अग्रगण्य भक्त श्री गुरुदेव का वरदान प्राप्त करके भिन्न-भिन्न प्रकार से मैंने शास्त्र-वाक्यों का सारांश इस ग्रंथ में प्रकाशित किया है ।।१५।।

पूर्वश्चोत्तरतापनीयरखिलं कल्पं वरं मारुतेः-
ब्रह्मा विष्णु वशिष्ठ शंकरयुजः वाल्मीक व्यासादिभिः।
शास्त्रं सर्वपुराणवेदभणितं तत्त्वं परं निर्मितं-
श्री-रामपरत्वप्रकाशिका कलिमलप्रध्वंसिका प्रोच्यते ।।१६।।

श्रीरामपूर्वतापनी, श्रीरामोत्तरतापनी, श्री हनुमत्कल्प, ब्रह्मस्मृति, विष्णु स्मृति, वशिष्ठ स्मृति, शंकर स्मृति एवं व्यास-वाल्मीकि के ग्रंथों के प्रमाण एवं सभी वेद पुराणादि शास्त्रों के वचनों को उद्धृत करके जो परमतत्व है उसी श्रीराम परत्व की प्रकाशिका, कलि-काल के दोषों को नष्ट करने वाली पवित्र वाणी इस ग्रन्थ में कही जा रही है ।।१६।।

श्रीरामस्य परत्व गुम्फित सदा नामाख्यध्येयं परं-
श्रीसाकेतप्रकाशिका परसुखं रूपं परं भाविकम्।
रामः तेज प्रतापराशि भणितं यं संगिरन्तेरसं-
एवं पञ्चमहापरं गुणवरं सारं पुराणेस्वपि ।।१७।।

श्रीराम का परमध्येय नाम १ दिव्य धाम साकेत २, परम सुखमय भावनास्पद प्रभु का स्वरूप ३, श्रीरामजी का तेज ४ तथा श्रीराम के प्रताप का ५ जिसमें वर्णन है, ऐसे पांच महान् प्रभु के गुणों का सार सिद्धान्त जो पुराणों में वर्णित है, जिसके श्रवण मात्र से प्रेमरस बरसता है उसका यहां वर्णन किया जाता है ।।१७।।

श्रीरामं प्रति ग्रन्थकारस्य अगाध श्रद्धा अतः विश्वेऽस्मिन्
श्रीरामं विना किञ्चन्नपि नास्ति तत् प्रकटयति-

श्रीराम के प्रति ग्रंथकार की अत्यन्त श्रद्धा है अतएव श्रीराम के बिना संसार में सारतत्व अन्य कुछ भी नहीं है, इस सिद्धान्त को प्रकट करते हैं-

श्रीरामः शरणं समस्त जगतां रामं विना का गतिः-
रामेण प्रतिहन्यते कलिमलं रामाय तुभ्यं नमः ।
रामाद् बिभ्यति कालभीम भुजगः रामस्य सर्ववशाः-
रामे भक्तिरखण्डिताभवतु मे रामत्वमेवाश्रयः ।।१८।।

सम्पूर्ण जगत के श्रीराम ही एक मात्र आश्रय हैं । श्रीराम के बिना कौन गति है ? श्रीराम के द्वारा ही कलिकाल के मलों का विनाश होता है । हे श्रीराम ! आपके लिए हम नमस्कार करते हैं । श्रीराम से भयंकर काल रूपी सर्प भयभीत होता है । श्रीराम के ही वश में सचराचर विश्व है । ऐसे श्रीरामजी में मेरी अविचल अखण्ड भक्ति हो ! हे श्रीराम ! हमारे एक आप ही आश्रय हैं ।।१८।।

रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे-
रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः ।
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं-
रामे चित्त लयः सदा भवतु मे हे राम मामुद्धर ।।१६।।

राजाओं के मुकुटमणि श्रीराम सदा विजयी रहें । श्री रमापति राम का मैं भजन करता हूँ । समस्त निशाचरी सेना जिन श्रीराम के द्वारा मारी गयी है उन श्रीराम के लिये सदा नमस्कार है । श्रीराम से बढ़कर परात्पर तत्व कुछ भी नहीं है, वे सबमें परायण हैं । मैं श्री रामजी का ही दास हूँ । श्रीराम में मेरा चित सदैव लीन रहे । हे राम ! आप मेरा उद्धार करने की कृपा करें ।।१६।।

न तत्पुराणं नहि यत्र रामो,
यस्यां न रामो न च संहिता सा ।
से नेतिहासो नहि यत्र रामः-
काव्यं नत्तस्यान्नहि यत्र रामः ।।२०।।

वह पुराण पुराण नहीं है जिसमें राम न हो, वह संहिता संहिता नहीं है जिसमें श्रीराम न हो, वह इतिहास इतिहास नहीं है जिसमें श्रीराम नहीं है तथा वह काव्य भी काव्य नहीं है जो श्रीराम से शून्य है ।।२०।।

उक्तेन किं स्याद् बहुनाऽथ विश्वं-
सर्वंमुधास्याद् यदि रामशून्यम् ।

तदेव सत्यं विहितं तदेव-
तदेव युक्तं रघुनाथयुक्तम् ।।२१।।

बहुत बातें बढ़ाकर कहने से क्या लाभ है बस, इतना ही समझ लो कि श्री राम से शून्य समस्त विश्व ही व्यर्थ है, मिथ्या है। वही सत्य है तथा वही विहित सत्कर्म है जो श्री रघुनाथ जी से युक्त है। वही करने योग्य है ।।२१।।

शास्त्रं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः-
न तत्तु तीर्थं नहि यत्र रामः ।
यागः स आगो नहि यत्र रामः-
योगो हि रोगो नहि यत्र रामः ।।२२।।

वह शास्त्र शास्त्र नहीं है जिसमें श्रीराम की महिमा न हो। वह तीर्थ तीर्थ नहीं है जहां श्रीराम की पूजा न हो, वह यज्ञ यज्ञ नहीं है जिसमें श्रीराम का प्राधान्य न हो। वह योग भी योग नहीं है जिसमें श्रीराम का सम्बन्ध न हो ।।२२।।

पठति सकलवेदान् शास्त्रपारंगतो वा-
यदि नियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थ कृद्वा ।
अटति सकल तीर्थान् व्राजको वाहिनाग्निः
नहि हृदि यदि रामः सर्वमेतद् वृथा स्यात् ।।२३।।

यदि कोई चाहे सभी वेदों को पढले अथवा सभी शास्त्रों में पारङ्गत हो जाय। यदि कोई संयम नियम से अपने जीवन को व्यतीत करे अथवा चाहे धर्मशास्त्रार्थ में दिग्विजयी पण्डित बन जाय। यदि कोई सभी तीर्थों को पांव पैदल यात्रा करे, कोई परिव्राजक परमहंस बन जाय अथवा नित्य यज्ञ परायण अग्निपूजक बन जाय परन्तु यदि हृदय में श्रीराम प्रभु विराजमान नहीं हैं तो ये सभी सत्कर्म व्यर्थ हो जाते हैं ।।३३।।

गुर्वर्थे त्यक्तराज्यं व्यचरदनुवनं पद्म पद्भ्यां प्रियाया,
पाणिस्पर्शाऽक्षमाभ्यामृजित पथरुजो, यो हरीन्द्रानुजाभ्याम् ।
वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषा रोषित भ्रू विजृम्भात्-
त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः कोशलेन्द्रोऽवत्तान्नः ।।२४।।

पिताजी के सत्य धर्म के संरक्षणार्थ जिन्होंने श्री अयोध्या के राज्य का त्याग कर दिया। परम सुकोमल चरण कमलों से (जो प्राणप्रिया श्री जानकी जी के कर कमल के स्पर्श को भी सहन न कर सके ऐसे) वन वन में विचरते रहे। जिनके श्रीचरणों की श्री सुग्रीवजी तथा श्री लक्ष्मण जी सेवा करके रास्ते के परिश्रम को निवारण करते हैं। जिन्होंने सूर्पनखा को नाक-कान काट कर विरूप बनाई है तथा जो अपनी प्राण-वल्लभा के विरह से रुष्ट होकर कड़ी दृष्टि से देखते ही समुद्र को क्षुब्ध कर देते हैं, जिन्होंने समुद्र पर सेतु बांध कर लंका निवासी राक्षसों के दलबल को भस्म कर दिया। वे अयोध्यानाथ प्रभु श्रीराम हम सब की सुरक्षा करें ।।२४।।

यस्यामलं नृपसद्मसुयशोऽधुनापि-
गायन्तयघ्नमृषयो दिगिभेन्द्रपट्टम्।
तन्नाकपाल वसुपाल कीरीटजुष्टं
पादाम्बुजं रघुपतेः शरणं प्रपद्ये ।।२५।।

जिनके निर्मल सुयश का राजाओं की सभा में आज भी सादर सप्रेम गान होता है। पापों का विनाश करने वाले जिस श्री रामचरित्र का ऋषि मुनि सदा गान करते हैं। दिशाओं का पालन करने वाले दिग्गजों के ललाट में जिनकी दिव्य लीला-कथा अङ्कित हो गई है ऐसे स्वर्ग पालन करने वाले इन्द्रादिक देवता तथा अष्ट वसुपालकों के किरीटों से सुशोभित मस्तक जिनके श्रीचरणों पर झुकते रहते हैं, उन श्री राघवेन्द्र प्रभु के श्रीचरणों की मैं शरणागति लेता हूँ ।।२५।।

नेदं यशो रघुपतेः सुरयाञ्च्यात्त-
लीलातनोरधिक साम्य विमुक्तधाम्नः।
रक्षोवधो जलधिबन्धनमस्यपूगैः-
किं तस्य शत्रु हनने कपयः सहायाः ।।२६।।

जिनके समान त्रिभुवन में कोई है ही नहीं तब उनसे अधिक तो कौन हो सकता है। ऐसे परब्रह्म परमात्मा प्रभु श्रीराम ने देवताओं की प्रार्थना स्वीकार करके लीलाविग्रह धारण किया है। जिन्होंने लीलावतार में भी रावण जैसे राक्षसों का संहार कर दिया, समुद्र पर सेतु भी बांध दिया तथा अस्त्र-शस्त्र से क्षुब्ध कर दिया, ऐसे लीलारस का सुयश विस्तार

श्री रघुनाथ जी के लिये कोई आश्चर्य की बात नहीं है तथा उनको शत्रुओं के संहार में वानर भालू की सहायता प्राप्त करने की क्या आवश्यकता थी ? यह तो भक्त वात्सल्य ही आपने प्रकट किया है ।।२६।।

बद्धवोदधौ रघुपते विवधाद्रिकूटैः
सेतुं कपीन्द्र करकम्पित भूरुहाङ्गैः ।
सुग्रीव नील हनुमत्प्रमुखैरनेकैः
लङ्कां विभीषरणदृशा विषदग्रदग्धाम् ।।२७।।

अनेकों पर्वतों तथा वृक्षों से श्री रघुनाथ जी ने सुग्रीव, नल, नील, हनुमान आदि प्रमुख कपीन्द्रों के हाथों से समुद्र पर पुल बांध दिया तथा विभीषरण जी की कोप-दृष्टि से जली हुई लंका के निशाचरों का नाश कर दिया ।।२७।।

त्यक्त्वा सुदुस्त्यज सुरोप्सिन राज्यलक्ष्मीं-
र्धर्मिष्ठआर्यवचसा यदगादरण्यम् ।
मायामृगं दयितयेप्सितमन्वधावन्
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ।।२८।।

अपने पिताजी की पवित्र आज्ञा पालन करने के लिये जिन्होंने देवेन्द्र भी जिसकी चाहना करते हैं ऐसे श्री अवध के राज्य का परित्याग कर दिया तथा अपनी प्राणवल्लभा की चाहना से मायामृग बने मारीच के पीछे जो पांव-पैदल दौड़े ऐसे महापुरुष हे श्री रामचन्द्र जी ! मैं आपके श्री चरणारविन्दों की वन्दना करता हूँ ।।२८।।

न त्वां वयं जडधियोनु विदाम भूभृत्-
कूटस्थमादिपुरुषं जगतामधीशम् ।
यत्सत्वतः सुरगणा रजसः प्रजेशाः
मन्योश्चभूतपतयः स भवान् गुणेशः ।।२९।।

श्री समुद्र भगवान की स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे प्रभो ! हम सब जड़बुद्धि वाले आपकी लीला को भली-भांति नहीं जानते हैं, आप सर्व साक्षी कूटस्थ आदि पुरुष हैं, समस्त ब्रह्माण्डों के नायक हैं, आपके द्वारा सतोगुण से सुर गण, रजोगुण से ब्रह्माजी तथा क्रोध से (तपोगुण से) अनेकानेक भूत पति उत्पन्न होते हैं। वही सभी गुणों के अधिपति आप सर्वेश्वर प्रभु हैं ।।२९।।

स यैः स्पृष्टोऽपिदृष्टो वा संविष्टोऽनुगतोऽपि वा ।
कोशलास्ते ययुः स्थानं यत्र गच्छन्ति योगिनः ॥३०॥

उस श्रीराम प्रभु का जिन्होंने स्पर्श किया, दर्शन किया, साथ में बैठे अथवा जो उनके साथ चले वे सभी श्री अयोध्या निवासी उस दिव्य धाम में गये जहां योगीजन जाते हैं ॥३०॥

श्री मन्महारामायणे

कोटि कन्दर्प सौभाग्य सर्वाभरणभूषिते ।
रम्यरूपार्णवे रामे रमन्ति सनकादयः ॥३१॥
राम एव परंब्रह्म परमात्माभिधीयते ।
रामात्परतरं नास्ति यत् किञ्चत्स्थूलसूक्ष्मकम् ॥३२॥
रामस्यपुरुषो लोके सत्य-धर्म-यशो-गुणैः ।
समो न विद्यते कश्चित् विशेषस्तु कुतः पुनः ॥३३॥

करोड़ों कामदेवों से सुन्दर–सभी अलङ्कारों से अलंकृत रमणीय रूप के महासागर श्रीराम में सनकादिक महात्मा नित्य निरन्तर रमण करते हैं ॥३१॥ श्रीराम हो परब्रह्म परमात्मा के नाम से गाये जाते हैं। संसार में जो कुछ स्थूल या सूक्ष्म देखा सुना जाता है, वह सब श्रीराम से परे कुछ भी नहीं है ॥३२॥ श्रीराम के समान सत्य-धर्म-यश तथा गुणों की समता करने वाला संसार में कोई है ही नहीं, तब विशेष तो कौन हो सकता है ? ॥३३॥

राम राम तव पाद पङ्कजं, चिन्तयामि भवबन्धनमुक्तये ।
वन्दितं सुरनरेन्द्र मौलिभि ध्येयं च मनसि योगिभिः सदा ॥३४॥

हे राम ! मैं आपके श्रीचरण कमलों का भव–बन्धन से मुक्त होने के लिए चिन्तवन करता हूँ । जो देवेन्द्र तथा नरेन्द्रों के शिरोमणी द्वारा वन्दित हैं तथा योगीजन जिसका मन में निरन्तर ध्यान करते हैं ॥३४॥

विष्णोरेकैक नामानि सर्ववेदाधिकं मतम् ।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनामैव केवलम् ॥३५॥
श्रीरामेति परं नाम रामस्यैव सनातनम् ।
सहस्रनामसदृशं विष्णोः नारायणस्य च ॥३६॥

श्री विष्णु भगवान के एक—एक नाम सभी वेदों से अधिक श्रेष्ठ हैं। उनसे भी कोटिगुण पुण्य केवल श्रीराम नाम से ही प्राप्त होता है ।।३५।। श्रीरामजी का नित्य सनातन श्रीराम ही परात्पर नाम है। विष्णु तथा श्रीमन्नारायण के हजारों नाम के समान एक ही यह श्रीराम नाम है ।।३६।।

नारायण सहस्राणि ब्रह्माद्याःशतकोटयः ।
कोटि कोटयवताराश्च: जातारामांध्रिपंकजात् ।।३७।।

हजारों श्रीमन्नारायण तथा सौ-सौ करोड़ ब्रह्मादि देवता एवं करोड़ों-करोड़ों तारादिक श्रीरामजी के श्री चरण कमल से उत्पन्न हुए हैं ।।३७।।

श्रीरामचन्द्र रघुपुङ्गव राजवर्य्य,
राजेन्द्रराम रघुनायक राघवेश ।
राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र-
दासोऽहमद्य भवन: शरणागतोऽस्मि ।।३८।।

हे श्रीरामचन्द्र ! हे श्रीरघुपुंगव ! हे राजराजेन्द्र ! हे रघुनायक राघवेश, श्रीराम ! हे राजाधिराज, रघुनन्दन ! हे श्रीराम भद्रजू ! मैं आपका दास हूँ, आज आपके शरणागत आया हूँ ।।३८।।

लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ।।३९।।

जो सम्पूर्ण संसार को आनन्द प्रदान करने वाले हैं। जो रण-संग्राम में धीर-वीर रंग जमाने वाले हैं, जो कमलनयन एव रघुवंश के स्वामी हैं, जो करुणास्वरुप तथा जीवों पर सदैव करुणा करने वाले हैं, ऐसे श्री रामचन्द्र जी के चरणों की मैं शरणागति स्वीकार करता हूँ ।।३९।।

श्री सनत्कुमार संहितायां श्रीनारदवचनम्

भवोद्भवं वेदविदांवरिष्ठमादित्यचन्द्रानल सुप्रभावम् ।
सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं नमामिरामं तमसः परस्तात् ।।४०।।

जो संसार को उत्पन्न करने वाले हैं, वेदतत्वज्ञों में जो सर्वशिरोमणि परमश्रेष्ठ हैं, जो सूर्य चन्द्र, अग्नि आदि तेजस्वियों को अपने प्रभाव से

प्रकाशित करते हैं, जो सभी स्वरूपों के आत्मस्वरूप हैं, जो सभी में अन्तर्यामी स्वरूप से विराजमान हैं, ऐसे अन्धकार से पर परात्पर प्रभु श्रीराम को मैं नमस्कार करता हूँ ।।४०।।

तत्त्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं स्वतेजसापूरितविश्वमेकम् ।
राजाधिराजं रविमण्डलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि ।।४१।।

जो तत्वों के परम तत्व हैं, जो पुरुषों में पुराण पुरुषोत्तम हैं, जिन्होंने अपने तेज से सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित कर रखा है, जो राजाधिराज चक्रवर्ती हैं; जो सूर्य-मण्डल में विराजमान हैं, ऐसे सम्पूर्ण विश्व के ईश्वर परमेश्वर प्रभु श्रीराम का मैं भजन करता हूँ ।।४१।।

मुनीन्द्रगुह्यं परिपूर्णमेकं कलानिधिं कल्मषनाशहेतुम् ।
परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतो महान्तम् ।।४२।।

जो श्रेष्ठ महामुनीन्द्रों के हृदय में विराजे हुए हैं, जो एक मात्र सर्वत्र परिपूर्ण हैं. जो सभी कलाओं के समुद्र हैं, जो समस्त पापों का संहार करने वाले हैं, ऐसे महानों में भी परम महान् श्रीराम को मैं प्रणाम करता हूँ ।।४२।।

कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं कविंपुराणं कमलायताक्षम् ।
कुमारवेद्यं करुणामयं तं कल्पद्रुमं राममहं भजामि ।।४३।।

जो अनुमानादिक प्रमाणों से परे हैं, सभी कार्यो को सफल बनाने वाली क्रिया के भी आदि कारण हैं, जो पुरातन हैं, कवियों में महाकवि हैं, कमल के समान जिनके विशाल नेत्र हैं, जिनको सनकादिक कुमार जैसे विरले महापुरुष ही जानते हैं, ऐसे परमकरुणामय श्रीराम का मैं सदा भजन करता हूँ ।।४३।।

निरञ्जनं निस्प्रतिमं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रयपञ्चम् ।
नित्यंध्रुवं निर्विषयस्वरूपं निरन्तरं राममहं भजामि ।।४४।।

जो निरञ्जन निर्विकार हैं, जिनकी समता का कोई नहीं है, जो पूर्णकाम निष्काम हैं, जिनको किसी का भी आश्रय नहीं लेना पड़ता है, जो प्रपञ्च की माया की कलाओं से अतीत हैं ।जो नित्य हैं, ध्रुव-अविचल हैं, जो सांसारिक विषयों से विमुक्त हैं, ऐसे प्रभु का मैं निरन्तर भजन करता हूँ ।।४४।।

अशेषवेदात्मकमादि संज्ञं अजं हरिं विष्णुमनन्तमाद्यम् ।
अपारसंवित् सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ।।४५।।

जो समस्त वेदों के सार स्वरुप हैं, जो अनादि अजन्मा, भक्तों के दुख हरण करने वाले, सर्वत्रव्यापक आदि विष्ण तथा अनन्त स्वरूप हैं, जिनका पार कोई पा नहीं सकते हैं, जो सच्चिदानन्द दिव्यरूप हैं, मैं उन्हीं परात्पर प्रभु श्रीराम का भजन करता हूँ ।।४५।।

विज्ञानहेतुं विमलायताक्षं प्रज्ञानरूपं स्वसुखैक हेतुम् ।
श्रीरामचन्द्रं हरिमादिदेवं परात्परं राममहं भजामि ।।४६।।

जो विज्ञान के कारण हैं, जिनके नेत्र सदैव निर्मल करुणा-प्रेम से भरपूर रहते हैं, जिनको कृपा से प्रकृष्ट सर्व श्रेष्ठ ज्ञान प्राप्त होता है, जो दिव्य आत्मसुख के एक मात्र कारण हैं। ऐसे आदि देव परात्पर, सब में रमण करने वाले प्रभु श्री रामचन्द्र जी का मैं भजन करता हूँ ।।४६।।

लोकाभिरामं रघुवंशनाथं हरिं चिदानन्दमयं मुकुन्दम् ।
अशेषविद्याधिपतिं कवीन्द्रं नमामि रामं तमसः परस्तात् ।।४७।।

जो सम्पूर्णलोकों को अतिप्रिय लगते हैं, जो रघुवंश के नाथ हैं, जो भक्तों के चित्तहरण करने वाले हैं, जो सच्चिदानन्दमय मुकुन्द हैं, जो सम्पूर्ण विद्याओं के अधिपति हैं, जो कविजनों को काव्यकला प्रकाशित करने वाले कवीन्द्र, हैं ऐसे अज्ञानान्धकार से पर श्रीराम का मैं भजन करता हूँ ।।४७।।

यत्परं यद्गुणातीतं यज्ज्योरमलं शिवम् ।
तदेव परमंतत्त्वं कैवल्यपदकारणम् ।।४८।।
यदेकं यत्परं नित्यं यदनन्तं चिदात्मकम् ।
यदेकं व्यापकं लोके तद्रूपं चिन्तयाम्यहम् ।।४९।।

जो सबसे पर हैं, जो त्रिगुणाती हैं, जो ज्योति-स्वरूप निर्मल तथा कल्याण स्वरूप है, वही परम तत्व कैवल्य पद के कारण श्रीराम हैं ।।४८।। जो अपने समान एक ही हैं, जो परात्पर तत्व हैं, जो नित्य हैं, जो अनन्त हैं, जो सच्चिदानन्द के भी आत्मा हैं। सम्पूर्ण लोक में जो एक ही सर्वत्र व्यापक है, उन श्रीराम के स्वरूप का मैं चिन्तन करता हूँ ।।४९।।

युगे युगे श्रीरामस्य अवताराः भवन्ति हि ।
कोटि श्चकार्यार्थं सिन्धौ वीचीव वै मुने ।।५०।।
सीताकलांशाद् हृद्यः शक्तयः सम्भवन्ति ताः ।
यासां कला कलांशेन जातानार्यः श्रियाद्यः ।।५१।।

युग युग में लोक-कल्याण के लिए श्रीरामजी के करोड़ों अवतार होते रहते हैं, जैसे समुद्र में लहरें आती रहती हैं ।।५०।। उसी प्रकार श्री सीताजी के कला अंशों द्वारा हृदय को प्रियता प्रदान करने वाली शक्तियां उत्पन्न होती हैं। जिनके कला तथा कलांशों से श्री लक्ष्मीजी आदि दिव्य नारियों के अवतार होते हैं ।।५१।।

स्थूलमष्ट भुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम् ।
परं तु द्विभुजं रूपं तस्मादेतत् त्रयं यजेत् ।।५२।।

प्रभु का स्थूल स्वरूप अष्टभुज है, सूक्ष्म चतुर्भुज है, तथा परस्वरूप द्विभुज है, अतः ये तीनों ही पूजनीय हैं ।।५२।।

पूर्णः पूर्णावतारश्च श्यामो रामो रघुद्वहः ।
अंशान्नृसिंह कृष्णाद्याः राघवो भगवान् स्वयम् ।।५३।।

परिपूर्ण पूर्णावतार श्री रघुनन्दन श्यामसुन्दर श्रीराम है, अन्य श्री नृसिंह, श्री कृष्णादिक अंशावतार हैं। श्री राघवेन्द्रप्रभु श्रीराम स्वयं भगवान हैं ।।५३।।

नृसिंहो वामनः कृष्णः जन्मकर्ममनुत्तमम् ।
तेषां परोभवेत् श्रेष्टो रामोराजीवलोचनः ।।५४।।
ब्रह्मण्डानामसंख्यानां उद्भवः लयपालनम् ।
ररंकाराद् भवन्तीह काहं तवैव का कथा ।।५५।।

श्री नृसिंह-वामन-कृष्णादिक प्रभु के अवतारों की लीला कथायें अत्यन्त श्रेष्ठ हैं, परन्तु उन सब में राजीव लोचन श्रीराम सर्वश्रेष्ठ एवं परात्पर हैं ।।५४।। असंख्य ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति-प्रलय-पालन श्रीराम नाम के रकार अक्षर से ही होता है तब मेरी और अन्यों की बात ही क्या है ? ।।५५।।

अकारात्शक्तयः बह्वी मकाराज्जीव कोटिशः ।
अभ्राकाशे यथालीना भवन्त्येव पुनः पुनः ।।५६।।

इतिचांशकला सर्वे रामस्तु भगवान् स्वयम् ।
यतोविनिर्गतश्चांशाः विस्फुलिङ्गास्वपि प्रभा ।।५७।।

अकार से बहुत-सी शक्तियां तथा मकार से करोड़ों जीव इस संसार में प्रकट और लीन होते रहते हैं। जैसे महदाकाश में मेघादि उड़ते हैं तथा पुनः-पुनः लीन होते है ।।५६।। अन्य सब अवतार प्रभु की अंश कलाएं हैं। श्रीराम प्रभु स्वयं भगवान हैं। जैसे प्रदीप्त अग्नि से चिनगारियां उड़ती रहती हैं वैसे ही प्रभु श्रीराम से ही सब अवतार होते रहते है ।५७।।

यस्य समतस्य कूर्माद्याः रामकृष्णादयस्तथा ।
तत्तु रामः मया जाप्यः श्रोतुमिच्छाम्यहं कथा ।।५८।।

मतस्य–कूर्म–वराह–नृसिह–वामन–बलराम एवं कृष्णादिक जिनके अवतार हैं, उन श्री रामचन्द्र जी की मैं कथा सुनना चाहता हूँ ।।५८।।

हर्षिता राधिका तत्र जानवयंश समुद्भवा ।
रामस्यांश समुद्भूतो कृष्णो भवति द्वापरे ।।५६।।
यथा आद्य प्रदीपेन सर्वदीप प्रबोधनम् ।
तथा सर्वावताराणां अवतारी रघूत्तमः ।।६०।।

श्री जानकी जी के अंश में उत्पन्न श्री राधिकाजी ने जब सुना कि द्वापर में श्रीराम के अंश से श्रीकृष्णावतार होगा तब अत्यन्त प्रसन्न हुई ।।५६।। जैसे प्रथम प्रज्वलित दीप से सभी दिये प्रज्वलित होते हैं, वैसे ही सभी अवतारों के अवतारी श्री रघुनाथ जी ही हैं ।।६०।।

नवमी चैत्र मासे तु शुक्लपक्षे रघूद्भवः ।
आविरासीत् किल प्रभा सर्वश्रेष्ठः परःपुमान् ।।६१।।
रघुनाथः स्वयं तत्र प्रसन्नो भगवान् स्वयम् ।
ततो विनिर्गताश्चांशाः विस्फुल्लिंगा इवारणेः ।।६२।।
अवताराणान्तु सर्वेषां अवतारी रघूत्तमः ।
सरितां सर्व मध्ये तु सरयू पावनी यथा ।।६३।।

चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को सर्वश्रेष्ठ परमपुरुष अपनी प्रभासहित अवतीर्ण हुए ।।६१।। श्री रघुनाथ जी स्वयं भगवान्

जब वहां प्रसन्न हुए तब उनके अंश से जैसे जलती हुई लकड़ी से चिनगारियां निकलती हैं वैसे अनेकों अवतार प्रकट हुए ।।६२।। अतएव सभी अवतारों के अवतारी रघुकुलशिरोमणि श्रीराम ही हैं । जैसे सभी पवित्र नदियों में श्री सरयू सर्वश्रेष्ठ है ।।६३।।

यत्र त्रैलोक्यवीराणां शक्ति शौर्यापकर्षकम् ।
तन्महेश्वरकोदण्डमखण्डय चाति दुर्गमम् ।।६४।।
आकर्षणं महाविष्णोः महच्चापस्य विश्रुतम् ।
जामदग्न्यस्य रामस्यशक्तेश्चादानमुत्तमम् ।।६५।।
विदेहनगरे ह्येतद् रामस्य विजयत्रयी ।
आसीत् तस्मादहं वेद्मि रामं सर्वावतारिणम् ।।६६।।

जिसने विदेह नगर में त्रिभुवन के वीरों का बल अपनी ओर खींच लेने वाले श्री शंकर जी के धनुष को तोड़ डाला तथा महाविष्णु भगवान के धनुष पर आपने प्रत्यञ्चा चढाई एवं जमदग्न्य परशुराम जी के तेज को अपने में विलीन कर लिया (ये तीनों प्रकार की विजय श्रीराम जी ने प्राप्त की है) । अतएव हम निश्चयपूर्वक कहते हैं कि श्रीराम ही सर्वावतारों के एकमात्र अवतारी हैं ।।६६।।

वृहद्ब्रह्मसंहिता में श्रीमन्नारायण ने स्पष्ट कहा है—

कर्ता सर्वस्व जगतो भर्त्ता सर्वस्य सर्वगः ।
आहर्ता कार्यजातस्य श्रीरामःशरणं मम ।।६७।।
वासुदेवादिमूर्तिनां चतुर्णां कारणं परभू ।
चर्तुविंशति मूर्तीनामाश्रयः शरणं मम ।।६८।।
सर्वावताररूपेण दर्शन स्पर्शनादिभिः ।
दीनानुद्धरते योऽसौ श्रीरामः शरणं मम ।।६९।।

जो समस्त जगत के कर्ता हैं । सभी के भरण-पोषण करने वाले हैं । सर्वत्र विराजमान हैं । सभी कार्यों का संहार करने वाले हैं वे श्री रामजी ही मेरे आश्रय हैं ।।६७।। वासुदेवादि चतुर्व्यूह के जो परम कारण हैं तथा चौबीसों अवतार के एकमात्र आश्रय हैं, वही मेरे एक मात्र आधार हैं ।।६८।। जो सभी प्रकार के अवतार धारण कर अपने दर्शन तथा दिव्य मङ्गलमय विग्रह के स्पर्श संभाषणादि द्वारा दीनजनों का उद्धार करते हैं, वही श्रीरामजी मेरे एकमात्र रक्षक हैं ।।६९।।

आनन्दी द्विविधो प्रोक्तो मूर्तश्चमूर्त एव च ।
अमूर्तस्याश्रयोमूर्तः परमात्मा नराकृतिः ।।७०।।

आनन्द दो प्रकार का कहा गया है, एक मूर्तस्वरूप दूसरा अमूर्त अमूर्त आनन्द के आश्रय भी नररूप धारी परमात्मा श्रीराम ही हैं ।।७०।।

महाविष्णु सहस्त्राणि महाब्रह्मशतानि च ।
सृष्टि स्थितिलयानाञ्च कर्ता श्रीरघुनन्दन ।।७१।।
तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो रघुनन्दनः ।
उभयोरंशजा सर्वा ह्यवतारा ह्यसंख्यकः ।।७२।।

सृष्टि-स्थिति-संहारादि कार्य करने के लिए अनन्त ब्रह्माण्डों के लिये हजारों महाविष्णु, हजारों महाशंभु तथा सैकड़ों महा ब्रह्मा के कर्ता श्रीराम रघुनन्दन ही हैं ।।७१।। श्री जानकी जी तुरीया महाशक्ति हैं वैसे ही श्री रघुनाथ जी तुरीय महापुरुष हैं । इन्हीं दोनों युगल प्रभु के अंशकलाओं से असंख्य अवतार होते रहते हैं ।।७२।।

महाशम्भुर्महाविष्णुर्महामाया जलेशयाः ।
महानन्दाकृतिर्विश्वं कारणानि च सर्वशः ।।७३।।
गुणत्रय प्रतिमश्च सूर्येन्द्रहव्यवाहनाः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रा ऋषयस्तथा ।।७४।।
स्थावरा जंगमाश्चैव ये चान्येभूतभाविनः ।
एताःताः कलया श्रेष्ठाः ममरामः स्वयं प्रभुः ।।७५।।

श्री सुन्दरीतन्त्र में श्री जानकी जी श्री जनक जी से कहती हैं— महाशंभु-महाविष्णु-महामाया-जलाधीश जल में शयन करने वालों सहित इस महान् आनन्द स्वरूप विश्व का कारण सर्वप्रकार से श्रीराम ही हैं ।।७३।। तीनों गुणों के विचित्र कार्य सूर्य-चन्द्र-तारा-अग्नि-ब्रह्मा-विष्णु रुद्र-देवेन्द्र तथा ऋषि-मुनि, स्थावर-जंगमआदि जो कुछ हुआ है अथवा आगे होगा वह सब मेरे स्वयं प्रभु श्रीराम की कलाओं की ही श्रेष्ठ रचना है ।।७४-७५।।

हरेरंशावताराणां कृत्वमेतत् सुनिश्चितम् ।
न प्रवृत्तिर्न निर्वृत्ति पद्मपत्रमिवाम्भसा ।।७६।।

श्री हरि के सभी अवतारों का एक सुनिश्चित कर्तव्य कार्य ही यह व्यवस्था करता है, इसमें कर्मबन्धन प्रयुक्त प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति कदापि नहीं होती है । क्योंकि भगवान तो जल में कमल की भांति संसार में रहते हुए भी सदैव निर्लेप ही रहते हैं ।।७६।।

मच्छक्त्त्या प्रतिरुद्धानां मत्स्यादीनां हि पार्थिव ।
जन्मकार्यान्तर प्राप्तिः स्वरूपं तेषु जायते ।।७७।।
सारंभो योगिनी चक्रः नयो व्याधयश्चतथाबलः ।
कालः कलपतां तेषां तनुभुक् प्रभुरव्ययः ।।७८।।
रामः कालात्मकः श्रीमान् सर्वभूत शरीरभुक् ।
इति विज्ञापितं तात ! यथा योग्यं तथा कुरु ।।७९।।

हे राजन् ! हमारी अचिन्त्य शक्ति से प्रतिरुद्ध होकर मत्स्यादिक जितने अवतार हैं, उनके जन्म तथा लीला के सभी कार्य करने योग्य स्वरूप की प्राप्ति उनको होती है । आरम्भ-योगिनी चक्र व्याधियाँ तथा बल कालानुसार सबको प्राप्त होता है । इनका कारण मेरे अव्यय प्रभु श्रीराम ही हैं । श्रीराम ही कालात्मक हैं । वे ही श्रीमान् सभी शरीर-धारियों में विराजमान होकर सर्वप्रकार का भोग-विलास करते हैं । ।।७७-७९।।

राघवस्याप्रमेयस्य दृष्टादृष्टं विजानतः ।
गात्रं प्रतिनरेन्द्रस्य स्वप्रकाशस्य धीमतः ।।८०।।
अहं तु वशगायस्य जगदानन्दकारिणी ।
पालयामि सृजाम्यद्य सर्वभूतानि हन्मि च ।।८१।।

अप्रमेय शक्ति सम्पन्न श्रीराम का ही यह दृष्ट-अदृष्ट समस्त ब्रह्माण्ड शरीर है तथा स्वयं प्रकाश स्वरूप महान् बुद्धिमान नरेन्द्र श्रीराम स्वयं प्रभु हैं । मैं भी जिनके वशीभूत रह कर इस जगत् को आनन्दित करती हूँ तथा समयानुसार जगत् की रचना-पालन-संहारादि कार्य करती रहती हूँ ।।८०-८१।।

महारामायण में भगवान श्री शंकर जी भगवती श्री पार्वती जी को अधिक स्पष्ट रूप से समझाते हुए प्रवचन करते हैं कि—

येऽवताराविभोर्मुग्धे जायन्ते विश्वहेतवे ।
तेऽपि रामांघ्रि चिन्हेभ्यः सम्भवन्ति पुनः पुनः ॥८२॥

महाभद्रो महाविष्णुर्जायते स्वस्तिकादपि ।
तदंशेन समुद्भूतो विष्णुर्लोकैकमङ्गलः ॥८३॥

एष विष्णुर्महाशम्भुर्महायोगेश्वरो भवेत् ।
तेन चाहं समुद्भूतो भक्तियोग शिरोमणिः ॥८४॥

अष्टकोण समुद्भूतो वासुदेवःस्वयं तथा ।
परमेष्टीततो जातो जगत्कर्ता पितामहः ॥८५॥

हे मुग्धे ! विश्व कल्याण के लिये प्रभु के जो-जो अवतार होते हैं वे सभी श्रीराम जी के श्रीचरणों के ही चिन्हों से पुनः पुनः होते रहते हैं ॥८२॥ जगत् का महान् कल्याण करने वाले महाभद्र स्वरूप श्री महा विष्णु श्रीराम जी के चरण के स्वस्तिक चिन्ह से प्रकट होते हैं तथा उन्हीं के अंश से सभी लोकों में महामङ्गलस्वरूप श्री विष्णु भगवान् उत्पन्न हुए हैं ॥८३॥ यही विष्णु भगवान श्री महाशंभु के नाम से महान् योगेश्वर बनते हैं। उन्ही के द्वारा भक्ति तथा योग में शिरोमणि मैं उत्पन्न हुआ हूँ ॥८४॥ अष्टकोण रेखा से स्वयं श्री वासुदेव प्रकट होते हैं तथा उन्हीं से जगत्कर्ता परमेष्टी पितामह श्री ब्रह्माजी प्रकट होते है ॥८५॥

श्री चिन्हेन महालक्ष्मीः तस्याः लक्ष्मी समुद्भवा ।
इदं जज्ञे जगत्सर्वं स्वांशेनैव सुपूरितम् ॥८६॥

शक्ति चिन्हान्महामाया तस्योमा शारदादयः ।
तस्या एव समुद्भूता विश्वमाया प्रतिष्ठिता ॥८७॥

श्री चिन्ह से श्री महालक्ष्मी उत्पन्न हुई है तथा उन्हीं महालक्ष्मी से जिन्होंने अपने अंश से भरपूर इस विराट विश्व की रचना की है, वह लक्ष्मी जी उत्पन्न होती है। श्रीरामचरण के शक्ति चिन्ह से महामाया का प्रादुर्भाव है, उस महामाया से ही-उमा-शारदा आदि शक्तियों का प्राकट्य होता है। उन्हीं से उत्पन्न यह आदि विश्वमाया प्रतिष्ठित है। ॥८६-८७॥

मत्स्य चिन्हेन मीनस्यचावतारः प्रवर्त्तते ।
क्षितेः कूर्म समुत्पत्तिः वाराहाश्चाम्बरादपि ।।८८।।

श्री रामचरण को मोन रेखा से मत्स्यावतार तथा पृथ्वी रेखा से कूर्मावतार एवं अम्बर-चिन्ह से वाराहावतार होता है ।।८८।।

वज्राङ्कुशाभ्यामुत्पन्नो नृसिंहो भक्तवत्सलः ।
त्रिविक्रमस्य चोत्पत्तिस्त्रिवल्यामुपजायते ।।८९।।
धनुस्त्रिकोणतूरणेभ्यः सञ्जातो भार्गवोऽपि च ।
शेष स्वशर सर्पाभ्यां लक्ष्मणो लक्षणान्वितः ।।९०।।
ईषदंशेन सर्पस्य मुशले लाङ्गलेन च ।
बलभद्रो समुद्भूतः शेषो द्विषद् मर्द्दनः ।।९१।।
सिंहासनार्धचन्द्राभ्यां बुद्धइत्यपि जायते ।
कल्की चैव समुद्भूतस्तथा चक्रातपत्रयोः ।।९२।।

वज्र तथा अंकुश की रेखा से भक्तवत्सल श्री नृसिंह भगवान प्रकट हुए हैं । त्रिवली की रेखा से श्री त्रिविक्रम प्रभु का अवतार हुआ है । धनुष त्रिकोण तथा तूणीर की रेखा से भृगुनन्दन परशुराम जी उत्पन्न हुए हैं । शेष-वाण तथा सर्प की रेखाओं से सर्वलक्षण सम्पन्न श्री लक्ष्मण जी उत्पन्न हुए हैं । मुशल–हल तथा सर्प की रेखा से श्री शेष भगवान के अवतार श्री बलभद्र जी उत्पन्न हुए हैं । सिंहासन तथा अर्ध चन्द्रमा के चिन्ह से बुद्ध भगवान् तथा चक्र और छत्र की रेखा से कल्की भगवान् का अवतार हुआ है ।।८९–९२।।

स्यन्दनान्मनवो जाता ये च स्वायंभुवादयः ।
ऋषयोऽमृतकुण्डाम्भाद् वै यवाद् यज्ञावतारकाः ।।९३।।
चामरेण हयग्रीवो देवर्षिष्तुम्बरेण च ।
भैषज्याधिपतिः सम्यग् जातो धेनुपदादपि ।।९४।।
नृचिन्हांशने शंखेन दत्तात्रयोऽभ्यजायत ।
ध्वजपताकयोर्जातौ नरनारायणावुभौ ।।९५।।
अष्टाङ्गयोग संयुक्तः कपिलोप्यष्टकोणतः ।
जीवात्मनोर्ध्वरेखायाः संजाता सनकादयः ।।९६।।

वंश्याः वंशी समुज्जाता कृष्णाधरसुधाप्रिया ।
वृन्दावनेऽभ्दुतैर्नादैः सर्वलोकविमोहिनी ।।९७।।
शक्तिराह्लादिनी राधाचद्रिकायाः समुद्भवा ।
राससंभूषणा श्यामा सर्वाभरणभूषिता ।।९८।।

रथ के चिन्ह से स्वायम्भुव आदि मनुओं का अवतार हुआ । अमृत कलश से सप्तऋृषी तथा यव की रेखा से यज्ञनारायण का अवतार हुआ है ।।९३।। चामर की रेखा से हयग्रीव, तुम्बर से देवर्षि नारद जी, तथा गोपद की रेखा से यज्ञपति देवेन्द्र उत्पन्न हुए हैं ।।९४।। मानवकी रेखा तथा शंख चिन्ह से दत्तात्रेय जी तथा ध्वज-पताका की रेखा से श्री नर-नारायण दोनों प्रकट हुए हैं ।।९५।। अष्टकोण के चिन्ह से अष्टाङ्गयोग सम्पन्न श्री कपिलदेव जी तथा जीवात्मा एवं उर्ध्व रेखा के चिन्ह से सनकादिक महात्मा उत्पन्न हुए हैं ।।९६।। वंशी के चिन्ह से मुरलीधर के अधरसुधारस पान करने वाली वंशी उत्पन्न हुई है, जो अपने अद्‌भुत स्वर-निनाद से वृन्दावन के सभी सचराचर लोक को विमोहित करने वाली हुई है ।।९७।। चन्द्रिका जी की रेखा से रासलीला को अलंकृत करने वाली, सभी अलङ्कारों से विभूषित, प्रभु की आह्लादिनी शक्ति, श्यामा श्री राधिका जी प्रकट हुई हैं ।।९८।।

गदयाश्च महाकालो यमदण्डाद् यमस्तथा ।
विन्दोर्भानुः सरय्व्यावै गंगाद्यास्तीर्थ सम्भवा ।।९९।।
ऐश्वर्येण च धर्मेण यशसा च श्रिये च वै ।
राज्ञः मोक्ष षट्कोणैः संजातो भगवान्हरिः ।।१००।।
एतेचांसकलाभूताः शक्ति वीर्य समन्विताः ।
रामचन्द्रांध्रि संजाता रामस्तु भगवान् स्वयम् ।।१०१।।

गदा चिन्ह से महाकाल एवं यमदंड रेखा से यमराज उत्पन्न हुए हैं । बिन्दु चिन्ह से सूर्यनारायण एवं सरयू जी की रेखा से तीर्थस्वरूपा गंगादिक पावन नदियां उत्पन्न हुई हैं ।।९९।। ऐश्वर्य—धर्म—यश—श्री—शक्ति तथा वीर्यादि षड्‌गुणैश्वर्य परिपूर्ण श्री हरि षट्कोण चिन्ह से प्रकट हुए हैं । ये सभी अवतार श्री रामचन्द्र जी के शक्ति-तेज-पराक्रमादि दिव्य गुणों की अंशकलायें प्राप्त कर प्रकट हुए हैं, परन्तु श्रीरामचन्द्र प्रभु स्वयं ही भगवान् हैं ।।१०१।।

रामात्संजायतेकामः कामाद्विश्वं प्रजायते ।
तस्माद् धनुर्धरात्सर्वे द्विभुजाः मूलरूपिणः ।।१०२।।

श्रीराम का ही पुत्र कामदेव है तथा कामदेव से ही सारा संसार है । अतएव धनुषधारी श्रीराम की ही प्रजा होने से मूलरूप से सभी दो भुजा वाले हैं ।।१०२।।

नारायण सहस्राणि ब्रह्माद्याः शतकोटयः ।
कोटि कोटयवताराश्च जाता रामांध्रि पङ्कजात् ।।१०३।।
नारायणोऽपि रामांशः शंखचक्र गदाब्जधृक् ।
चतुर्भुज स्वरूपेण वैकुण्ठे च विराजते ।।१०४।।

हजारों नारायण तथा सौ-सौ करोड़ ब्रह्मादिक सभी देवताओं के कोटि-कोटि अवतार श्रीराम चरणों की रेखाओं से हुए हैं ।।१०३।। शंख-चक्र-गदा-कमल धारण करने वाले चतुर्भुज श्रीमन्नारायण जो वैकुण्ठ में विराजमान हैं वे भी श्रीरामजी के अंश ही हैं ।।१०४।।

सन्त्यवतारा बहवो विष्णोर्लीलानुकारिणः ।
तेषां सहस्राणि कृत्वा रामोज्ञानमयं शिवम् ।।१०५।।
सन्त्यवतारा बहवः सकलांश विभूतयः ।
अवतारी साक्षाद्रामः भगवान् भक्तवत्सलः ।।१०६।।
आज्ञया देवदेवस्य श्रीरामस्य महात्मनः ।
सन्त्यवताराः बहबः कलाचांश विभूतयः ।।१०७।।

भगवान विष्णु के लीलावतार अनन्त हैं । उनसे भी हजारों गुणा विशेष श्रीराम ज्ञानमय तथा कल्याण स्वरूप हैं ।।१०५।। बहुत से अवतार प्रायः सभी श्रीराम के कलाअंश विभूति के आश्रय से हुए हैं, परन्तु भक्त-वत्सल भगवान श्रीराम स्वयं अवतारी हैं ।।१०६।। परमात्मा प्रभु देवाधिदेव श्रीराम की आज्ञा से इसी प्रकार से बहुत से अवतार उनकी कलाअंश के द्वारा होते हैं ।।१०७।।

मत्स्वामिनो त्वदंशेन भवति परमाद्भुतम् ।
ब्रह्मशैव ततो वाश्यं वृन्दावन विभूषणः ।।१०८।।

हे हमारे स्वामी प्रभु श्रीराम ! आपके अंश से परम अद्भुत लोला-कौतुक करने वाले वृन्दावन विभूषण होंगे, जो ब्रह्मा शिवादिक देवताओं को भी वशीभूत करने वाले होंगे ।।१०८।।

भ्रातरस्तु त्रयो राम ! ब्रह्मा विष्णुरहं तथा ।
त्वत्तो विनिर्गता भूयो वयं लीयेम त्वां हि च ।।१०९।।
तवांशोऽहं हरिर्ब्रह्मा सर्वेदेवाश्चराचराः ।
परात्परतरं तत्त्वं रामः सत्य पराक्रमः ।।११०।।
समुत्पत्य ततः सर्वे ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
ददृशुस्ते महात्मानः रामं ब्रह्माण्डनायकम् ।।१११।।

हे राम ! ब्रह्मा, विष्णु तथा हम तीनों भाई आपसे ही प्रकट हुए हैं तथा अन्त में आपमें ही लीन हो जाते हैं ।।१०९।। आपके अंश से ही मैं-ब्रह्मा श्रीहरि, तथा सभी देवता एवं सचराचर विश्व प्रकट हुए हैं । अतः श्रीराम ही परात्पर तत्व एवं सत्य पराक्रम प्रभु हैं ।।११०।। तब ब्रह्मा विष्णु शिवादिक उत्पन्न हुए तथा उन महात्माओं ने ब्रह्माण्ड नायक श्रीराम के दर्शन किये ।।१११।।

वेदादौ वेदमध्ये च वेद वेदान्त पालकः ।
परात्परतरं यो वै स तु रामः सनातनः ।।११२।।
शक्तिनां जानकी श्रेष्ठा मन्त्राणां च षडक्षरम् ।
अहं भगवद्दासोऽस्मि रामो राजीवलोचनः ।।११३।।
तुरीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो रघुनन्दनः ।
उभयोरंशजा सर्वे चावतारा ह्यसंख्यकाः ।।११४।।
सर्वेषामवताराणामवतारी रघूत्तमः ।
श्रुतं दृष्टं मया सर्वं चिरायुर्जीवनान्मुने: ।।११५।।

वेद के आदि में तथा मध्य में वेद-वेदान्त प्रतिपालक जो परात्पर तत्व वर्णन हुआ है वह सनातन प्रभु श्रीराम ही हैं ।।११२।। शक्तियों में श्री जानकी जी सर्वश्रेष्ठ हैं, मन्त्रों में श्रीरामषडक्षर मन्त्र सर्वश्रेष्ठ है, एवं भगवान् के सेवकों में राजीवलोचन श्रीराम का मैं सेवक माना जाता हूं ।।११३।। श्री जानकीजी तुरीया है एवं श्रीरामजी तुरीय तत्व हैं ।

इन्हीं युगल प्रभु के अंश से असंख्य अवतार होते रहते हैं ।।११४ ।। सभी अवतारों के अवतारो रघुकुल शिरोमणि श्रीराम ही हैं । यह सिद्धान्त मैंने चिरायु लोमश ऋषि के द्वारा सुना है तथा स्वयं मैंने भी उनके परतत्व का प्रत्यक्ष दर्शन किया है ।।११५।।

ब्रह्मपुराणे—

श्रीसीतायास्त्रयोप्यंशा श्री-भू-लीला विभेदनः ।
श्रीभवेद्रुक्मिणी भार्या सत्यभामा दृढव्रता ।।११६।।

श्री सीताजी के भी तीन अंशों से श्री-भू तथा लीलादेवी का प्राकट्य है । श्री देवी रुक्मणि नाम से तथा भू-देवी सत्यभामा के नाम से दृढव्रत धारण करने वाली प्रसिद्ध हुई ।।१०६।। सुदर्शन संहिता में कहा है—

मत्स्योऽस्य रामहृदयात् योगरूपी जनार्दनः ।
कूर्मस्तु धारणाशक्तिः वाराहो भुजयोर्बलः ।।११७।।
नारसिंहो महाशेषो वामनः कटिमेखला ।
भार्गवोजंघयोर्जातो बलरामश्च पृष्ठतः ।।११८।।
बौद्धश्च करुणा साक्षात् कल्कीश्च चित्तव्हर्षतः ।
कृष्णः शृंगार रूपश्च वृन्दावन विभूषणः ।।११९।।
एते चांशकलांश्चैव रामस्तु भगवान् स्वयम् ।
परात्परतरं सत्यं भावगम्यं सनातनम् ।।१२०।।

सभी अवतार श्रीराम से ही हैं । श्रीराम के हृदय से मत्स्यावतार एवं योगस्वरूप जनार्दन प्रभु हुए । धारण शक्ति से कूर्मावतार, भुजाओं के बल से वाराह अवतार, महान् रोष से नृसिंह भगवान्, कटि-मेखला से वामन अवतार, जंघाओं से परशुराम, पृष्ठ के बल से श्री बलराम, करुणा के साक्षात् अवतार बुद्ध भगवान्, चित्त की प्रसन्नता से कल्की अवतार तथा शृगार से वृन्दावन विभूषण श्री कृष्णावतार हैं । ये सब अवतार श्रीराम की अंश कलाओं से हैं । श्रीराम परात्पर सत्यतत्व, भावगम्य सनातन परब्रह्म स्वयं प्रभु हैं ।।११७ से १२०।।

अनन्त संहिता में कहा है कि—

सावित्री-शैलजा-रंभा जानक्यंश समुद्भवा ।
रामस्यांश समुद्भूतः नारायणोऽपि केशवः ।।१२१।।

सावित्री ब्रह्मणा साधं लक्ष्मीनारायणेन च ।
शंभुना राम रामेति पार्वती जपति स्फुटम् ।।१२२।।
रामनाम प्रभावेण स्वयंभू सृजते जगत् ।
बिभर्ति सकलं विष्णुः शिव संहरते पुनः ।।१२३।।

श्री जानकी जी के अंश से ही उमा-रमा ब्रह्माणी प्रकट होती हैं। श्रीरामजी के अंश से श्रीमन्नारायण केशव जी का प्रादुर्भाव है। सावित्री ब्रह्माजी के साथ, लक्ष्मीजी नारायण के साथ तथा पार्वती शंकर जी के साथ, श्रीराम-राम नाम स्पष्ट रूप से जपती रहती है। श्रीराम नाम के प्रभाव से हो स्वयम्भू ब्रह्माजी संसार रचते हैं। विष्णु भगवान पालन करते हैं तथा शंकर जी संहार करते हैं ।।१२२–१२३।।

स्कन्दपुराणोक्त श्रीरामायणमहात्म्ये—

ब्रह्मा विष्णु महेशाद्याः यस्यांशाः लोकसाधकाः ।
तमादि देवं श्रीरामं विशुद्धं परमं भजे ।।१२४।।

लोक-व्यवहार साधन परायण ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वरादिक जिनके अंश हैं उन आदिदेव परम विशुद्ध भगवान् श्रीराम का मैं भजन करता हूँ ।।१२४।।

श्री महारामायणे शंकर वाक्यं पार्वतीं प्रति—

रमन्ते मुनयो यस्मिन् योगिनश्चोर्ध्व रेतसः ।
अतो देवि ! रमुक्रीडा रामनाम्नैव वर्तते ।।१२५।।
पोषणं भरणाधारं रामनाम जगत्सु च ।
अतएव रमुक्रीडा परं रामे विधीयते ।।१२६।।
रामनाममया सर्वे नामवर्णा प्रकीर्तिता ।
अतो देवि रमु क्रीडा नाम्नामीशः प्रकाशते ।।१२७।।

हे देवि ! महान् मुनीश्वर गण तथा उर्ध्वरेता योगीजन श्रीराम में निरन्तर रमण करते हैं अतएव "रमुक्रीड़ा" वाचक श्रीराम नाम ही सुप्रसिद्ध है ।।१२५।।। जगत् का भरण-पोषण तथा आधार श्री राम नाम ही है इसलिए भी "रमुक्रीड़ा" परम प्रभु श्रीराम का ही विधान करती है ।।१२६।। जितने वर्ण अक्षर हैं सब श्रीरामनाम से ही अनुप्राणित हैं अतएव "रमुक्रीड़ा" वाचक श्रीराम नाम ही सभी-नामों का ईश्वर होकर प्रकाशित हो रहा है ।।१२७।।

अंशांशैः रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धाः भवन्ति हि ।
बीजमोंकार सोऽहं च सूत्रमुक्तमिति श्रुतिः ।।१२८।।
अतएव महामन्त्राः वर्तन्ते सप्त कोटयः ।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनाम्ना प्रकाशते ।।१२९।।

श्रीराम के अंशांश से ही बीज ओंकार तथा सोऽहं तीनों सिद्ध होते हैं। अतः वेदों की ऋचाओं ने श्रीराम नाम को सूत्र-रूप से वर्णन किया है। अर्थात् अन्य प्रभु के नाम इसी की टीका भाष्य है ।।१२८।। अतएव सात करोड़ महामन्त्रों का आत्मा होकर श्रीराम नाम ही सब मन्त्रों को प्रकाशित करता है ।।१२९।।

रामनाम महाविद्या षड्भिर्वस्तुभिरावृता ।
ब्रह्मजीव महानादै स्त्रिभिरन्यद् वदामि ते ।।१३०।।
स्वरेण बिन्दुना चैव दिव्यया माययापि च ।
पृथक्त्वेन विभक्तेन साम्प्रतं शृणु पार्वति ।।१३१।।

श्रीराम नाम महाविद्या छः वस्तुओं से आवृत है—ब्रह्म १ जीव २ महानाद ३ ये तीन तथा अन्य तीन वस्तुएं भी कहकर समझाता हूँ ।।१३०।। स्वर ४ बिन्दु ५, दिव्य माया ६। इन छः वस्तुओं से श्रीरामनाम संयुक्त है। अब इनका पृथक्-पृथक् विभाग भी हे पार्वती श्रवण करो ! ।।१३१।।

परब्रह्ममयो रेफो जीवोऽकारश्च मस्य च ।
रस्याकार मयोनादः रायादीर्घ स्वरस्मृतः ।।१३२।।

राम नाम में 'रेफ' है वह परब्रह्म स्वरूप है। मकार के साथ जो ह्रस्व अकार है वह जीव स्वरूप है। रकार के साथ जो ह्रस्व अकार है वह नादमय है तथा रकार में जो दीर्घ ऊकार है वह स्वर स्वरूप है ।।१३२।।

मकारं व्यञ्जनं बिन्दुर्हेतुः प्रणवमाययोः ।
अर्द्धं भागापुकार स्याद् अकारान्नादभागिनः ।।१३३।।
रकार गुरुराकार तथा वर्ण विपर्ययः ।
मकारं व्यञ्जनं चैव प्रणवं चाभिधीयते ।।१३४।।

व्यञ्जन मकार बिन्दु का स्वरूप है, जो माया और प्रणव का कारण है। अब राम नाम से प्रणव कैसे उत्पन्न हुआ उसका वर्णन करते

हैं। राम नाम में 'र' कार दीर्घ 'आ' कार तथा 'म' 'अ' ऐसे विश्लेष होता है। "वर्णागमो वर्ण विपर्ययश्च" व्याकरण के नियमानुसार वर्ण विपर्यय करने पर "आ र ऊ म्" ऐसा रूप बना। पुनः चारों वर्णों के आगे विभक्ति लगा कर 'लुक्' कर देने से पदान्त संज्ञा हो गई। अब पदान्त रेफ को विसर्ग कर देने से "आःऊम्" ऐसा रूप बना। फिर विसर्ग का 'उकार' हो जाने से "आद्गुणः" से 'आ-उ' मिल कर 'ओ' बन गया। अब "ओ ऊम्" को "अभिपूर्वः" सूत्र से पूर्व रूप कर देने से 'ओम्' प्रणव सिद्ध हो गया। इसीलिए कहा गया हैं कि—

रामनाम्नः समुत्पन्न प्रणवोमोक्षदायकः

—महारामायण सर्ग ५२ श्लोक ३४

यस्यांशेनैव सञ्जाता ब्रह्मविष्णु महेश्वराः।

अपि जातो महाविष्णु यस्य दिव्य गुणैश्च यः ॥१३५॥

जिसके अंशांश से ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरादिक हुए हैं तथा जिसके दिव्य गुणों से महाविष्णु भी अलंकृत हुए हैं वे श्री राम ही हैं ॥१३५॥

श्री शिव संहितायाम् –

सगुणं निर्गुणं चैव परमात्मा तथैव च।

एते चांशाहि रामस्य पूर्वं चान्ते च मध्यगः ॥१३६॥

आदिज्योतिर्महाशंभुरात्मा पूर्णेन चाक्षरे।

तत्परो वामदेव स्यात् स्वयं ब्रह्म निरक्षरम् ॥१३७॥

राघवस्य गुणो दिव्यो महाविष्णु स्वरूपवान्।

वासुदेवो घनीभूतं तेजो ब्रह्मेति कथ्य ते ॥१३८॥

सगुण ब्रह्म, निर्गुण ब्रह्म तथा परमात्मा के नाम से आदि- अन्त- मध्य में सदा-सर्वत्र श्रीराम के ही अंश प्रकाशित हो रहे हैं ॥१३६॥ आदि ज्योति-महाशंभु-पूर्वब्रह्म-अक्षरब्रह्म इत्यादि जिनके अनेकों नाम रूप हैं उन्हीं स्वयं ब्रह्म निरक्षर प्रभु श्रीराम के भजन में श्री वामदेव शंकर परायण रहते हैं ॥१३७॥ श्री राघव के ही दिव्य गुण श्री महाविष्णु स्वरूप धारण करते हैं तथा उन्हीं वासुदेव के घनीभूत एकत्र पूंजीभूत दिव्य ज्योतिर्मय तेज को ही ब्रह्म के नाम से कहा गया हैं ॥१३८॥

याज्ञवल्क्य संहिताम् -

कृष्णेति वासुदेवेति सन्ति नामान्यनेकशः ।
तेभ्यो रामेति यन्नाम प्राहुर्बेदा परं मुने ।।१३९।।
राम नामात् परं किञ्चित् तत्त्वं वेदेषु सम्मितम् ।
संहितासु पुराणेषु नैव तन्त्रेषु विद्यते ।।१४०।।
रामनामात्परं तत्त्वं ये वै प्राहुः कुबुद्धयः ।
राक्षसास्ते विजानीयात् व्रजन्ति नरकं ध्रुवम् ।।१४१।।

श्री कृष्ण वासुदेव आदि प्रभु के अनन्त नाम हैं । उन सब में श्री राम नाम को ही वेद तथा मुनिजनों ने परम श्रेष्ठ कहा है ।।१३९।। श्रीराम नाम से किञ्चिन्मात्र श्रेष्ठ परमतत्त्व-वेद-पुराण-संहिता तथा तन्त्रादि में कहीं भी कुछ नहीं है ।।१४०।। तथापि जो दुर्बुद्धि वाले जीव श्रीराम नाम से भी किसी को परमतत्व कहते हैं वे राक्षस ही हैं उनको अवश्यमेव नरक जाना पड़ेगा ।।१४१।। रामतापनीयोपनिषद में भी कहा है कि—

अहं सन्निहितस्तत्र पाषाण प्रतिमादिषु ।
क्षेत्रेऽस्मिन् योऽर्चयेत्भक्त्या मन्त्रेणानेन मांशिव ।।१४२।।

हे शंकर जी ! जो मेरे इस षड्क्षर मन्त्र से इस काशी क्षेत्र में मेरी अर्चना करते हैं, उनके लिए उनके अभिमत पूजनीय पाषाण प्रतिमादिक में मैं विराजमान रहता हूँ ।।१४२।। पद्मपुराणे-अयोध्या प्रसंगे—

न तत्पुराणं नहि यत्र रामः
यस्यां न रामो न च संहिता सा ।
स नेतिहासो नहि यत्र रामः
काव्यं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः ।।१४३।।

शास्त्रं न तत्स्थान्नहि यत्र रामः
तीर्थाणि नैव न च यत्र रामः ।
यागः स आगो नहि यत्र रामो,
योगः स रोगो नहि यत्र रामः ।।१४४।।

न सा सभा यत्र न रामचन्द्रः
कालोऽप्यकालो कलिरेवसोऽस्ति ।
संकीर्त्यते यत्र न रामदेवो
विद्याप्यविद्या रहितात्वनेन ।।१४५।।

वह पुराण पुराण नहीं है । वह संहिता संहिता नहीं है । वह इतिहास इतिहास नहीं है । वह काव्य काव्य नहीं है । वह शास्त्र शास्त्र नहीं है, वह तीर्थ तीर्थ नहीं है । वह यहां भी दुःखरूप ही है । वह योग भी रोग रूप है । वह सभा सभा नहीं है । वह काल कलिकाल से भी भयंकर अधम काल है तथा वह विद्या भी श्रीरामचन्द्र जी के बिना अविद्यास्वरूपिणी है । अर्थात् जिसमें श्रीराम कीर्तन न हो वह सभी व्यर्थ ही हैं । ।।१४३–१४५।।

सर्पालयं प्रेतगृहं गृहं तु तद्
यत्राच्र्यते नैव महेन्द्र पूज्यः ।
उक्तेन किं स्याद् बहुना तु
विश्वं सर्वं मुधा स्याद्यदि रामशून्यम् ।।१४६।।
स्थानं भयस्थानमकीर्तनेन,
रामेति नामामृतशून्यमास्यम् ।
तदेव सत्यं विहितं तदेव,
तदेव योग्यं रघुनाथ युक्तम् ।।१४७।।

वह घर प्रेतालय तथा सर्पालय के समान है, जिस घर में देव देवेन्द्र पूज्य श्रीराम की पूजा न होती हो, विशेष कहने से क्या लाभ ? श्रीराम के बिना सब कुछ शून्य है, वृथा है, असत्य है ।।१४६।। जिस स्थान में श्रीराम नाम का संकीर्तन नहीं होता है वही महान भय का स्थान है । वह मुख भी जो श्रीराम नामामृत रसपान नहीं करता है, अशुद्ध गन्दगी का घर है । वही सत्य है, वही वेद विहित शुभ कार्य है, वही सुयोग्य तत्व हैं जो श्रीराम जी से युक्त होकर शुशोभित हो रहा है ।।१४६–१४७।।

सर्वेषां वेद सारन्तु रहस्यं ते प्रकाशितम् ।
एको देवो रामचन्द्रो व्रतमन्यन्न तत्समम् ।।१४८।।
कथयन्त तन्नाम शास्त्रं तद्धयेव संस्मृतम् ।
तस्मात्सर्वात्मना रामचन्द्रं भजे मनोहरम् ।।१४९।।

येषां तु मानसं रामे लग्नं नैव मनोरमे ।
वञ्चिता विधिना पापास्ते वै क्रूरतरैव हि ।।१५०।।

येषां राम प्रियो नास्ति रामे न्यूनत्व दर्शिनाम् ।
द्रष्टव्यं न मुखं तेषां सङ्गतिस्तु कुतः प्रिये ! ।।१५१।।

श्री शंकर जी कहते हैं हे प्रिये ! सभी वेद शास्त्रों का गुप्त रहस्य मैंने तुम्हारे सम्मुख प्रकाशित किया है, श्री रामचन्द्र ही एक सर्वश्रेष्ठ देव हैं । उनकी आराधना के समान अन्य व्रतादिक कुछ भी नहीं है ।।१४८।। जो उनके नाम का वर्णन कथन करते हैं वे ही शास्त्र, शास्त्र हैं । अतः सर्वप्रकारेण परम मनोहर श्री रामचन्द्र जी का ही मैं भजन करता हूँ । १४६।। जिनके मन में श्री रामचन्द्र जी विराजमान नहीं हैं, हे मनोरमे ! उनको विधाता ने ठग लिया है, वे पापी क्रूरतर ही हैं ऐसा समझना चाहिए ।।१५०।। जिनको श्रीराम प्रिय नहीं लगते हैं तथा जो राम में न्यूनता दिखलाते हैं, हे प्रिये ! उनका तो मुख भी नहीं देखना चाहिए फिर उनका संग करने की तो बात ही कौन करे ? ।।१५१।।

श्री हनुमान्नाटके—

वदत वदत वाक्यं रामरामेति नित्यं-
भजत भजत चित्तं रामपादाब्जमेतत् ।
पतति पतति देहं राम संचिन्तनेन-
न भवति कदाचित् जन्म जन्मान्तरो वा ।।१५२।।

हे बन्धुओ ! श्रीराम-राम-राम ऐसा वाक्य आप सब नित्य ही बोलिये । श्रीराम चरणारविन्दों का ही भजन करिये, सदैव भजन करिये । यदि वह नश्वर शरीर श्रीराम का चिन्तवन करते हुए गिर जायेगा, जो एक दिन गिरने ही वाला है तो प्रभु श्रीराम का स्मरण करते हुए गिरा तो फिर कभी जन्म-जन्मान्तर लेना ही न पड़ेगा ।।१५२।।

मुग्धेश्शृणुस्व मनुजोऽपि सहस्त्र मध्ये-
धर्मव्रतो भवति सर्व समान शीलः ।
तेष्वेव कोटिषु भवोद्विषये विरक्तः
सद्ज्ञानको भवति कोटि विरक्त मध्ये ।।१५३।।

ज्ञानीषु कोटिषु नृजीवन कोऽपि मुक्तः
कश्चित्सहस्र नृजीवन मुक्त मध्ये ।
विज्ञानरूप विमलोप्यथ ब्रह्मलीनः
तेष्वेव कोटिषु सकृत् खलु रामभक्तः ॥१५४॥

ये कल्पकोटि सततं जप होम योगैः
ध्यानैः समाधिनिरताः सद् ब्रह्मज्ञानात् ।
ते देवि धन्य मनुजाः हृदि बाह्य शुद्धाः
भक्तिस्तदा भवति तेषु च रामपादौ ॥१५५॥

सम्यग्वदन्ति निगमा बहुशोऽवतारान्–
सद् ब्रह्मणो भुवितले निज भक्त हेतोः ।
यस्तान् भजेदनुदिनं च सहस्रजन्म
रामस्य चैव हि तदा समुपासकः सः ॥१५६॥

श्री शिवजी कहते हैं कि—हे मुग्धे ! भोली भाली शिवे ! मैं आज एक रहस्य की बात सुनाता हूं उसका श्रवण करो । हजारों मनुष्यों के बीच धर्म का समान रूप से एकरस पालन करने वाला कोई एकाध विरला मनुष्य ही होता है । ऐसे धर्मात्मा करोड़ों मनुष्यों में से कोई एक विषयों से विरक्त वैराग्यशील पुरुष होता है । ऐसे करोड़ों महान् विरक्तों में कोई एक ही सद्ज्ञानी विवेक-विचार सम्पन्न महापुरुष होता है । ऐसे ज्ञानी मानवी जीवन जीने वालों में से कोई एक जीवन मुक्त होता है । ऐसे सहस्रों जीवन मुक्त ब्रह्म परायण महात्माओं में से निर्मल विशिष्ट भगवद् रहस्य-ज्ञान सम्पन्न कोई एक श्रीराम भक्त होता है । जो करोड़ों कल्प पर्यन्त जप-होम-योग-ध्यान समाधि में निरत रहकर ब्रह्म के विशुद्ध ज्ञान द्वारा बाह्याभ्यन्तरतः परम पवित्र हो जाते हैं । हे देवि ! ऐसे ही धन्य कृतार्थ हुए भाग्यशाली मनुष्यों के हृदय में श्रीराम-पादारविन्दों की विशुद्ध भक्ति प्राप्त होती है । वेद-पुराण जिन भक्तों के कल्याण के लिये होने वाले प्रभु के पावन अवतारों का बहुत प्रकार से गान करते हैं, ऐसे विशुद्ध परमात्मा के अन्य अवतारों का हजारों जन्म निरन्तर भजन करने पर किसी एक भाग्यशाली को श्री रामजी का अनन्य उपासक बनने का सौभाग्य प्राप्त होता है ॥१५३–१५६॥

बाह्यान्तरं शृणु तथा गिरिराजकन्ये
त्वत्तो वदामि रघुनाथजनस्यशुद्धम् ।
अन्यद्विहाय सकलं सदसच्च कार्यं-
श्रीरामपङ्कजपदं सततं स्मरन्ति ।।१५७।।
रामस्य चैव हृदये शुचि मन्त्रराजः
श्री रामनाम सहितं निजनाम युक्तः ।
सत्सङ्ग नित्य निरतः श्रुतितत्त्ववेत्ता-
ज्ञाता महान् रघुपतेः समुपासकः सः ।।१५८।।

हे गिरिराजकुमारी ! श्री रघुनाथ जी के भीतर बाहर परम बिशुद्ध भक्तों के लक्षण तुमसे कहता हूँ सो श्रवण करो । श्रीराम के प्यारे सन्त-जन सत्य असत्य संसार के सभी कार्यों का त्याग कर नित्य निरन्तर श्रीराम के श्रीचरण कमलों का ही स्मरण करते हैं ।।१५७।। हृदय में परम पावन श्रीराम जी का मन्त्र राज विराजमान है । तथा अपना नाम भी श्रीराम के सहित ही रखते हैं । सदैव सत्संग करते रहते हैं, श्रुतियों का सारतत्व श्रीराम की प्रेमा भक्ति ही है ऐसे दिव्य ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं । ऐसे ही महापुरुष श्रीराम के उपासक हैं ।।१५७–१५८।। महारामायण सर्ग ४६ श्लोक ६ तथा ११ ।

वशिष्ठ संहितायाम्–

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामो दाशरथिः स्वराट् ।।१५९।।
यस्यानन्तावताराश्च कला अंश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मेशा परब्रह्म स्वरूप सः ।।१६०।।
अंशभूतो विराट् ब्रह्मा-विष्णु-रूद्रस्तथापरे ।
ब्रह्मतेजो घनीभूतः वर्तते जानकीपते ।।१६१।।

श्रीमन्नारायण से पर तथा परात्पर श्रीकृष्ण भगवान से भी जो परतम प्रभु हैं वही श्रीमान् दशरथ कुमार श्रीराम स्वयं स्वतन्त्र निरंकुश परब्रह्म हैं ।।१५९।। जिनके कला-अंश-आवेश-प्रवेशादि भेद से अनन्त अवतार होते हैं । वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर के भी कारण परब्रह्म स्वरूप श्रीराम

हो हैं । ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा अन्य सभी देव गण जिनके अंशभूत हैं, वही विराट स्वरूप ब्रह्म का घनीभूत तेज श्री जानकी पति राम हैं ।।१५९-१६१।।

सुन्दरी तन्त्रे–

रत्न मञ्जीर रम्यांघ्रि ब्रह्मेश विष्णु सेवितम् ।
कामपूर्णं कामवरं कामास्पद मनोहरम् ।।१६२।।

रत्नजटित मञ्जीर से सुशोभित जिनके चरण बड़े ही रमणीय लगते हैं, जो ब्रह्मा-शंकर तथा विष्णु भगवान द्वारा सुसेव्य है, कामना पूर्ण करने वाले, अभीष्ट वर देने वाले, काम के भी आश्रय, परम मनोहर श्रीरामस्वरूप है ।।१६२।।

शिव संहितायाम्–

उर्वशी-मेनका-रंभा-राधा-चन्द्रावली तथा ।
हेमा क्षेमा वरारोहा पद्मगंधा सुलोचना ।।१६३।।
कर्पूरांगी विशालाक्षी शक्ति प्रिया रसोत्सवा ।
चारूनेत्रा चारूगात्रा चार्वंगी चारूलोचना ।।१६४।।
रामाग्रे परिनृत्यन्ति गीत वादित्रमोदिता ।
गोपकन्या सहस्रैस्तु गोपवालैश्च तादृशैः ।।१६५।।

उर्वशी-मेनका-रंभा-राधा-चन्द्रावली-हेमा-क्षेमा-वराराही-पद्मगंधा-सुलोचना-कर्पूरांगी-विशालाक्षी-शक्ति-प्रिया-रसोत्सवा-चारुनेत्रा-चार्वङ्गी-चारुलोचना आदि हजारों गोपकन्याओं तथा उसी प्रकार के गोपबालकों के साथ सब श्रीराम के सम्मुख नृत्य करती हैं ।।१६३-१६५।।

महारामायणे —सर्ग ५० श्लोक ५ से ८ तक–

व्यापकः सर्वभूतेषु यस्य नाशः कदापि न ।
जीवात्मा सर्वगोऽभेद्यः सोऽक्षरो भूधरात्मजे ।।१६६।।
सर्वसाक्षी चिदानन्दो निर्द्वन्दोऽखण्ड एव यः ।
परमात्मा परब्रह्म कष्टयते स निरक्षरः ।।१६७।।
असंख्य मित्रवत्तेजो वेदा अपि न यं विदुः ।
स वै निरक्षरातीतो रामः परतरात् परः ।।१६८।।

यो वै वसति गोलोके द्विभुजश्च धनुर्धरः ।
परमानन्दमयो रामो येन सर्वं प्रतिष्ठितम् ।।१६९।।

हे भूधरात्मजे पार्वती ! जो सभी भूतों में व्यापक है। जिसका कभी विनाश नहीं होता है, जो सर्वत्र गमन करता है, जो अभेद्य तथा अखण्ड है वह जीवात्मा अक्षर कहाता है ।।१६६।। जो सर्वसाक्षी-सच्चिदानन्दमय, निर्द्वन्द्व, द्वन्द्वातीत अखण्ड एकरस रहता है वह परब्रह्म परमात्मा निरक्षर कहा जाता है ।।१६७।। जिसका अनन्त सूर्यों के समान तेज है, वेद भी जिसका यथार्थ ज्ञान नहीं पा सकते हैं, वह क्षर-अक्षर तथा निरक्षर से भी परात्पर श्रीराम हैं ।।१६८।। जो गोलोक के मध्य श्री साकेत धाम में निवास करते हैं, वही द्विभुज धनुर्बाणधारी ब्रह्मानन्दमय श्रीराम हैं जिनके द्वारा ये समस्त विश्व प्रतिष्ठित है ।।१६९।।

पुलह संहितायाम्—

रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः ।
रकाज्जायते शम्भू रकारात्सर्व शक्तयः ।।१७०।।

रकार से ही ब्रह्मा-विष्णु-शंकर तथा सभी शक्तियां उत्पन्न होती हैं ।।१७०।।

शिव संहितायाम्—

सत्स्यकूर्म वराहश्च तथा नृसिंह वामनैः ।
भार्गवः बलि कंसारि बौद्धः कल्कि विमिश्रिते ।।१७१।।
उपास्यमानं रामस्य देवानां प्रवरं विभुम् ।
वेष्टितं वासुदेवाद्यैः सेवितं हनुमदादिभिः ।।१७२।।
वशिष्ठवामदेवाद्यैर्ज्ञानानन्दैक विग्रहः ।
व्यंकटाद्रिचित्रकूटगोवर्धनैर्गिरित्रयैः ।।१७३।।
यज्ञैस्त्तीर्थैः समुद्रैश्च सेवितो रघुनायकः ।

मतस्य-कूर्म-वराह-नृसिंह-वामन-परशुराम-श्रीकृष्ण-बुद्ध-कल्कि आदि श्रेष्ठावतारों द्वारा उपास्यमान देवाधिदेव विभु श्रीराम हैं। वासुदेवादि चतुर्व्यूह तथा श्री हनुमदादिक दिव्य पार्षद, ज्ञानानन्द के प्रत्यक्ष विग्रह वशिष्ठ वामदेवादिक महर्षि, वेंकटाचल-चित्रकूट-गोवर्धन इन तीनों गिरिश्रेष्ठों द्वारा तथा यज्ञ-तीर्थ समुद्रों द्वारा सदैव सुसेव्य श्री रघुनाथ जी हैं ।।१७१-१७३।।

तत्र वागीश्वरी देवी माधवी प्रियवल्लभा ।
असिता च सिता चैव प्रकृतिर्गुणसम्भवा ।।१७४।।
उमादेवी महामाया श्रुतिजाति विशारदा ।
पद्महस्ता विशालाक्षी कमला हरिवल्लभा ।।१७५।।
सुरंभा प्रेमदा नित्यं वृन्दादेवी मनोरमा ।
चिदात्मकं सुभासं च नयनानन्ददायकम् ।।१७६।।
स्वकान्तं हृदयारामं रामं राजीव लोचनम् ।
निर्विकारं पृथक् श्रेण्यो राघवं पर्युपासते ।।१७७।।

वहां पर श्री वागीश्वरी देवी-माधवी-प्रिय वल्लभा-असिता-सिता-प्रकृति के गुणों से उत्पन्न सभी देवियाँ ।।१७४।। उमा देवी-महामाया-श्रुति जाति-विशारदा-पद्महस्ता-विशालाक्षी-कमला-हरिवल्लभा ।।१७५।। सुरंभा-प्रेमदा-नित्या-वृन्दा देवी-मनोरमा आदि सभी शक्तियाँ सच्चिदानन्द स्वयं सुप्रकाशित नयनों को परमानन्द प्रदायक ।।१७६।। निर्विकार हृदय को परम सुखप्रद, राजीव लोचन अपने स्वामी श्रीराम की भलीभांति उपासना करती हैं ।।१७७।।

श्रीमद् वाल्मीकिय रामायणे—

ब्रह्मा स्वयम्भूश्चतुराननो वा
रुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरान्तको वा ।
इन्द्रो महेन्द्रः सुरनायको वा
स्थातुं न शक्यः युधि राघवस्य ।।१७८।।

ब्रह्मा-चतुरानन चाहे स्वयंभू ही अथवा तीन नेत्र वाले त्रिपुरारि स्वयं रुद्र हो अथवा देवताओं का नायक महेन्द्र स्वयं इन्द्र हो कोई भी युद्ध में श्री राघवेन्द्र के सम्मुख टिक नहीं सकते हैं ।।१७८।।

शिव संहितायाम्—(वशिष्ठ संहितायाञ्च)

नारायण सहस्राणि कृष्णाद्याःशतकोटयः ।
कोटि कोटि पर्वताश्च जातारामांघ्रि पंकजात् ।।१७९।।
भानुकोटि प्रतीकाशं चन्द्रकोटि प्रमोदकम् ।
इन्द्र कोटि सदामोदं वसुकोटि वसुप्रदम् ।।१८०।।

विष्णुकोटि प्रतिपालं ब्रह्मकोटि विसर्जनम् ।
रुद्रकोटि प्रमर्दं च मातृकोटि विनाशनम् ।।१८१।।
भैरव कोटि संहारं मृत्युकोटि विभक्षकम् ।
यमकोटि दुराधर्षं काल कोटि प्रधावकम् ।।१८२।।
गंधर्व कोटि संगीतं गणकोटि गणेश्वरम् ।
काम कोटि कलानाथं दुर्गा कोटि विमोहनम् ।।१८३।।
सर्व सौभाग्यैक निलयं सर्वानन्दैकपायकम् ।
कौशल्या नन्दनं रामं केवलं भवखण्डनम् ।।१८४।।

सहस्रों नारायण तथा सौ करोड़ श्रीकृष्ण आदि अवतार एवं कोटि-कोटि पवित्र पर्वत श्रीरामजी के चरण से उत्पन्न हुए हैं । करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान्, करोड़ों चन्द्रमा के समान सुन्दर आनन्दप्रद, करोड़ों इन्द्र के समान ऐश्वर्यमान्, करोड़ों वसुओं के समान धनप्रद, करोड़ों विष्णु के समान प्रतिपालक, करोड़ों ब्रह्मा के समान सृष्टिकर्ता, करोड़ों रुद्रों के समान प्रलय कारक, करोड़ों मातृकाओं के समान विनाशक, करोड़ों भैरव के समान संहारक, करोड़ों मृत्यु के समान भक्षक, करोड़ों यमराज के समान भयंकर दुराधर्ष, करोडों काल के समान गमन करने वाले, करोड़ों गंधर्वों के समान संगीतकार, करोड़ों गणपति के समान गणनायक, करोड़ों कामदेव के समान कलापूर्ण लावण्य सोन्दर्यवान्, करोड़ों दुर्गा के समान मोहक सर्व सौभाग्य निधान, सर्वप्रकारेण आनन्द प्रदायक, भव-पीड़ा-भंजन करने वाले कौशल्यानन्दन श्रीराम ही हैं । ।।१७९-१८४।।

रामायणे—

पर ब्रह्म परं तत्त्वं परं ज्ञानं परं तपः ।
परं वीजं परं क्षेत्रं परं कारण कारणाम् ।।१८५।।

परम ब्रह्म, परम तत्त्व, परम ज्ञान, सर्वोत्कृष्ट तप, परमश्रेष्ठ वीज परम पावन क्षेत्र सभी के परम कारणों का भी कारण श्रीराम हैं ।।१८५।।

श्री महारामायणे—

अंशांशै रामनाम्नश्चत्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोकारसोऽहं च सूत्रमुक्तमितिश्रुतिः ।।१८६।।

श्रीराम नाम के अंशांश कला से ही वीज ओमकार तथा सोऽहं तीनों सिद्ध होते हैं यह सूत्र रूप से श्रुतियों ने वर्णन किया है ।।१८६।।

ब्रह्म पुराणे—

यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्यया ज्ञान हेतवे ।

तं गुरुः प्राह रामेति रमणाद् राम इत्यपि ।।१८७।।

जिनमें ज्ञान प्राप्ति के लिए भलीभांति जान समझकर मुनिजन रमण करते हैं, वही श्रीराम हैं ऐसा सद्गुरु का कथन है । सब में रमण करने से भी उनका राम ऐसा नाम है ।।१८७।।

पद्म पुराणे—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि ।

इति राम पदेनैतत् परं वस्तु भविष्यति ।।१८८।।

नित्य सच्चिदानन्दमय अनन्त आनन्द रस पान करने के लिये जिनमें योगीजन रमण करते हैं इसलिए राम पद बाच्य प्रभु ही परम प्राप्य तत्व हो सकते हैं ।।१८८।।

हारीतस्मृतौ—

श्रेयो रमण सामर्थ्यात् सौन्दर्यगुणसागरात् ।

श्रीराम इति नामेदं रामस्य परिकीर्तितम् ।।१८९।।

श्रीजी में रमण करने का तथा कल्याणमय दिव्य लोक में रमण करने का पूर्ण सामर्थ्य सम्पन्न होने से एवं सौन्दर्य गुण के सागर होने से राम शब्द वाच्य परम तत्त्व ही हो सकता है ।।१८९।।

अथर्वशाखायाम् श्रीरामतापनीयोपनिषदि—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।

इति रामपदेनासौ परब्रह्माभिधीयते ।।१९०।।

सच्चिदानन्द अनन्त सुख में तल्लीन योगिजन जिसमें रमण करते है, उसी राम पद से वाच्य परब्रह्म परमात्मा का ही बोध होता है ।।१९०।।

प्रहस्तखण्डे श्रीहनुमद् वाक्यं श्रीरामं प्रति—

महाराज श्रीमन् ! जगति यशसा धवलि ते

पयः पारावारं परं पुरुषोऽयं मृगपते ।

कपर्दी कैलाशं कुलिशभृत् भौमं करिवरं-
कलानाथं राहुः कमल भवनो हंसमधुना ।।१९१।।

हे श्रीमान् महाराजाधिराज ! आपके सुयश से सम्पूर्ण विश्व ऐसा धवल स्वच्छ श्वेतवर्ण हो गया है कि—परमपुरुष क्षीरशायी क्षीर समुद्र को खोज रहे हैं। श्री शंकर जी कैलाश ढूंढ रहे हैं। इन्द्र अपने श्वेत ऐरावत को खोजते हैं तथा राहु चन्द्रमा की एवं कमल वन हंस को अभी खोज ही रहा है। तात्पर्य यह है कि आपके प्रताप के सुयश के स्वच्छ प्रकाश के सामने ये सब फीके पड़ गये हैं। आपके सुयश में लीन हो गये हैं, उनका पता ही नहीं लग रहा है ।।१९१।।

राम ! त्वन्नरुणप्रताप तपन त्रासदिवं त्र्यम्बकः
नो गंगा विजहाति निस्सरति न क्षीराम्बुधौ माधवः ।
ताम्पत् तामरसांतरालवसतिर्देवःस्वयंभूरभूत्-
पातालावधि पङ्कमग्नवप्रषा तिष्ठन्तिकूर्मादयः ।।१९२।।

हे श्रीराम ! आपके प्रबल प्रताप से सूर्य अरुणवर्ण हो गये हैं, त्र्यम्बक शंभु देवलोक कैलाश में घुस गये हैं तथा अभी तक आपके प्रताप से कहीं जल न जाय इस भय से गंगाजी को कभी छोड़ते नहीं हैं। निरन्तर गंगास्नान करते रहते हैं। श्रीमन्माधव भगवान् क्षीर समुद्र का त्याग नहीं करते हैं, स्वयंभू ब्रह्माजी कमल के भीतर निवास करते हैं तथा कच्छ-मच्छ शेषादिक ठेठ नीचे पाताल के पङ्क में घुस कर बैठ गये हैं, बाहर आने का नाम ही नहीं लेते हैं। तात्पर्य यह है कि—आपके प्रताप के सामने सब फीके पड़ गये हैं ।।१९२।।

श्रीमद्वाल्मीकि रामायणे—

आत्मानं मनुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ।
योऽहं यस्य यतश्चाहं भगवांस्तद् ब्रवीहि मे ।।१९३।।

श्री ब्रह्मा जी के पूछने पर कि आप कौन हैं श्रीराम अपने ऐश्वर्य को छिपा कर अत्यन्त नम्रता से कहते हैं कि भगवन् ! मैं तो अपने को दशरथ राजकुमार ही मानता हूँ, मेरा राम नाम है, मैं मानव देह धारी हूँ ऐसा ही जानता हूँ। यदि मेरा अन्य कुछ स्वरूप आप जानते हों तो मैं क्या हूँ, कैसा हूँ आप वर्णन करें ।।१९३।। इसके उत्तर में श्री ब्रह्माजी

ने "आर्षस्तव" द्वारा प्रभु श्रीराम की स्तुति की है। जिसका अनेकों सन्त नित्य पाठ करते हैं।

वेद वेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे।
वेदः प्राचेतसादासीत् साक्षाद्रामायणात्मना ।।१९४।।

वेद वेदान्त द्वारा जिनको जाना जाता है वह परम प्रभु जब श्री दशरथ कुमार प्रकट हो गये, तब वेदों ने भी समझा कि हम जिसके स्वरूप का अब तक छिपाये थे वह तो साक्षात् रूप धारण कर प्रकट हो गये तब हम भी अब श्री रामायण का रूप धारण कर उनका लीला चरित्र गुण गान करें ऐसा मान कर वेद भी प्रचेतापुत्र भगवान् वाल्मीकि के द्वारा रामायण रूप धारण करके प्रकट हो गये ।।१९४।।

सूर्यस्यापि भवेत्सूर्यो ह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभु।
श्रियः श्रीश्चभवेदग्र्या कीर्त्याः कीर्तिः क्षमा क्षमा ।।१९५।।
दैवतं देवतानांच भूतानां भूतरुत्तमः।
तस्य के ह्यगणा देवि देशेवाप्यथवा वने ।।१९६।।
पृथिव्या सह वैदेह्या श्रियाश्च पुरुषर्षभः।
क्षिप्रं तिसृभिः एताभिः सह रामोऽभिषेक्ष्यते ।।१९७।।

श्रीराम सूर्य के भी सूर्य हैं, अग्नि के भी अग्नि हैं। प्रभु के भी प्रभु हैं। श्री जानकी जी श्रियों की भी श्री हैं, कीर्ति की भी कीर्ति हैं, क्षमा की भी क्षमा हैं ।।१९५।। वह राम देवताओं का भी देवत्त्व है, भूतों के अधिनायक हैं। वे देश में अथवा बन में रहें उकको कोई क्लेश स्पर्श नहीं कर सकता है। पृथिवी श्री देवी तथा वैदेही इन तीनों महाशक्तियों के साथ पुरुषोत्तम श्रीराम का शीघ्र ही अभिषेक होगा ।।१९७।। ये वैभव श्रीराम का वाल्मीकि मुनि ने वर्णन किया है।

महारामायणे—

रामात्प्रजायते कामः कामाद् विश्वंप्रजायते।
तस्मात् धनुर्धराः सर्वे द्विभुजा मूलरूपिणः ।।१९८।।

श्रीराम से काम उत्पन्न होता है तथा काम से सम्पूर्ण विश्य की उत्पति है। अतएव धनुर्धारी राम के अंश होने से ही सभी मानव अपने मूल स्वरूप प्रभु श्रीराम के समान ही द्विभुज हैं ।।१९८।।

सनत्कुमार संहितायाम्--श्री नारद वाक्यम्—

परात्परतरं तत्त्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसा वचसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ।।१९९।।

सच्चिदानन्द स्वरूप परात्परतम परतत्व रघुकुल शिरोमणि श्रीराम को तन-मन-वचन से नित्य निरन्तर मैं प्रणाम करता हूँ ।।१९९।।

रुद्रयामले श्री अयोध्या महात्म्ये—धामपरत्त्वम्

विष्णोः पाद ह्यवन्तिका गुणवती मध्ये च काञ्चीपुरी-
नाभौ द्वारवती वदन्ति हृदये मायापुरी योगिनाम् ।
ग्रीवा मूलमुदारहन्ति मथुरा नासाग्र वाराणसी-
ह्येतद् ब्रह्मपदं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरी मस्तके ।।२००।।

तीर्थ रूप भगवान् विष्णु के चरण उज्जैन है। मध्य भाग में गुणवती काञ्चीपुरी है । नाभि में द्वारका कहते हैं। हृदय में योगीजनों ने मायापुरी (हरिद्वार अथवा जनकपुर) कहा है। ग्रीवा मूल में श्री मथुरा वर्णन करते हैं । नाक का अग्रभाग वाराणसी है । इस ब्रह्मस्वरूप को मुनिजन मस्तक रूप श्री अयोध्या जी का वर्णन करते हैं ।। २००।।

यस्याः पश्चिमतो नदः प्रवहते ब्रह्मात्मको घर्घरः
सामीप्यं न जहाति सरयू दिव्या नदी सर्वदा ।
विद्यामत्र महाधिका गिरिसुता स्थानं च रामो हरेः
साऽयोध्या विमलापुरी पुरीवरा यस्या सदानन्द दा ।।२०१।।

जिसके पश्चिम से ब्रह्मस्वरूप जल से भरा हुआ महानद घर्घर (घाघरा नदी) बह रहा है, जिसका सामीप्य श्री सरयू नदी कभी भी त्याग नहीं करती है, यहां पर विद्या देवी तथा गिरि सुता विराजमान है, वह श्रीराम का दिव्य स्थान विमलनगरी पुरियों में श्रेष्ठ सदैव आनन्दप्रद श्री अयोध्या जी है ।।२०१।।

यस्याः भाति प्रमोदकाननवरं रामस्य लीलास्पदं-
यत्र श्रीसरितांवरा च सरयू रत्नाचलः शोभितः ।
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्ना परामुक्तिदा-
ध्येया ब्रह्म महेश विष्णु मुनिभिरानन्द दा सर्वदा ।।२०२।।

जिसमें परमश्रेष्ठ श्री प्रमोदवन शोभा देता है जो श्रीराम जी का लीलाधाम है। जहां पर नदियों में सर्वश्रेष्ठ श्री सरयू नदी शोभा देती है। जहां मणि पर्वत सुशोभित हो रहा है, जो ब्रह्मा-विष्णु महेशादि देवों तथा मुनियों द्वारा ध्येय सदैव आनन्द प्रदायक है उस परमात्मा का परम धाम मोक्षप्रद श्री अयोध्या जी की जय हो ।।२०२।।

वशिष्ठ संहितायां श्री अयोध्या वर्णनम्—

एभ्यः परतमं धाम श्रीरामस्य सनातनम् ।
पृथिव्यां भारतेवर्षे अयोध्याख्यं सुदुर्लभम् ।।२०३।।
अखण्ड सच्चिदानन्द सन्दोहं परमाद्भुतम् ।
वाङ्मनो गोचरातीतं त्रिषुकालेषु निश्चलम् ।।२०४।।
भूतलेप्यति यद्धाम तथापि प्रकृतेर्गुणाः ।
संस्पृशन्ति न तज्जातु जलेषु कमलं यथा ।।२०५।।
यदंशेन प्रकाशेते विभूति द्वे सनातने ।
अधश्चोर्ध्वमनं ते च नित्ये च परमाद्भुते ।।२०६।।

इन सबसे परात्परतम श्रीराम का सनातन धाम भूमण्डल में परम दुर्लभ भारतवर्ष में श्री अयोध्या धाम है, जो अखण्ड सच्चिदानन्द का मूल परम अद्भुत मनसा वाचा इन्द्रियातीत तीनों काल में नित्य अखण्ड एकरस रहता है। भूतल में रहने पर भी जो धाम प्राकृत गुणों से निर्लेप जल में कमल की भांति निर्विकार रहता है। जिसके अंश से ऊपर-नीचे के सभी लोकों सहित नित्य तथा लीला दोनों सनातन धाम प्रकाशित हो रहे हैं ।।२०३-२०६।।

विभाति सरयूर्यत्र पश्चिमादि त्रिदिक्षु च ।
विरजादि सरिच्छ्रेष्ठा प्रकाशन्ते यदंशकः ।।२०७।।
वाङ्मनो गोचरातीतं प्रमोदारण्य संज्ञकम् ।
रामस्याति प्रियं धाम नित्यलीला रसास्पदम् ।।२०८।।
पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु क्रमेण तद्वने मुने ।
गिरयः सन्ति चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु ।।२०९।।
शृङ्गाराद्रिश्च रत्नाद्रिस्तथालीलाद्रिरेव च ।
मुक्ताद्रिश्च स्वया लक्ष्म्या द्योतयन्ति दशोदिश ।।२१०।।

जिस धाम के पश्चिम, दक्षिण, उत्तर तीनों दिशाओं में धनुषाकार श्री सरयू नदी शोभा देती है, श्री विरजादिक दिव्य नदियां जिसके अंश से प्रकाशित होती हैं, वही सरयू हैं ।।२०७।। जिस धाम के चारो ओर श्रीरामजी का नित्य लीला विहार स्थल एवं उनका परम प्रिय, मनवाणी से अगोचर प्रमोदवन नाम का अरण्य शोभा देता है ।।२०८।। जिसके चारों ओर चार पर्वत सुशोभित हैं, हे मुने ! उनके क्रमशः नाम सुनिये ।।२०९।। पूर्व में शृंगाराद्रि, दक्षिण में रत्नाद्रि, पश्चिम में लीलाद्रि तथा उत्तर में मुक्ताद्रि अपनी शोभा-लक्ष्मी से दशों दिशाओं को प्रकाशित कर रहे हैं ।।२१०।।

आह्लादिन्याश्च पूर्वस्यां क्षिप्रोद्यत प्रभाकरः ।
नीलरत्नमयो भाति शृंगारादिर्मनोहरः ।।२११।।
दक्षिणस्यां दिशिः श्रीमान् रत्नाद्रि द्योतयन्वनम् ।
पीतरत्नमयः कान्त्या भूदेव्या भ्राजते प्रियः ।।२१२।।
प्रतीच्यां दिशि लीलाद्रिर्लीलयालालित प्रभः ।
राजते दिव्यरत्नाढ्यो रामस्य रतिवर्धकः ।।२१३।।
श्रीदेव्याश्चापि लीलार्थे मुक्ताद्रिर्मण्डितो महान् ।
उदीच्यामुज्वलैर्रत्नैः चन्द्रकान्तैरुदच्यते ।।२१४।।
चित्र पुष्पौघ संच्छन्नैर्लतापुञ्ज वितानकैः ।
स्वल्पीकृत सुधास्वादु फलभाराति सन्नतैः ।।२१५।।
उन्नतैः शिखरै भान्तैः स्यन्दमानैश्च निर्झरैः ।
गुहाभिश्च विराजन्ते चत्वारस्ते नगोत्तमाः ।।२१६।।

तुरन्त के उदय हुए सूर्य के समान, नील रत्नों से भरपूर, आह्लादिनी शक्ति से सुशोभित परम मनोहर शृंगाराद्रि पूर्व में प्रकाशित हो रहा है ।।२११।। दक्षिण दिशा में श्रीमान् रत्नाद्रि पीत रत्नों के प्रकाश से वन को कान्तिमान करता हुआ भूदेवी का परम प्रिय सुशोभित हो रहा है ।।२१२।। पश्चिम दिशा में लीला देवी द्वारा लालित पालित-दिव्य रत्नों से प्रकाशित श्रीराम को प्रीति बढ़ाने वाला लीलाद्रि विराजमान है ।।२१३।। श्री श्रीदेवी की लीलाकला का विस्तार करने वाला मुक्ताओं से उज्ज्वल चन्द्रकान्त मणिमण्डित मुक्ताद्रि नाम का महान् पर्वत उत्तर दिशा में शोभा दे रहा है ।।२१४।। विचित्र रंग बिरंग के पुष्पों के गुच्छों से

लता कुंज-वितानों से, फलों के भार से झुके हुए, अपने स्वाद से अमृत को भी तुच्छ बनाने वाले रस से भरे हुए फलों से शोभित, ऊँचे-ऊँचे सुन्दर सुहावने शिखरों से तथा अमृत के समान मीठे झरणों से तथा सुन्दर सब समय में सुखप्रदायक गुफाओं से ये चारों पर्वत श्री सीताराम जी को अत्यन्त प्रिय श्री अवध की शोभा बढ़ाते हैं ।।२१६।।

महारामायणे—

गोलोकाच्च परंज्ञेयं साकेतान्तःपुरं प्रियम् ।
गोप्याद् गोप्यतरागोप्या सायोध्यातीव दुर्लभा ।।२१७।।

श्री अयोध्या साकेत धाम गोलोक से भी पर प्रभु का अत्यन्त प्रिय गुप्त से भी गुप्त परम दुर्लभ धाम है ।।२१७।।

श्री हनुमत्संहितायाम्—

ततः सरय्व्याः पुलिनै पवित्रै,
सुविस्तृतं कानन पादपैर्युतम् ।
प्रफुल्लिता पादशिखैर्विचित्रै-
र्भास्वन् मयूखैः परितः प्रसन्नम् ।।२१८।।
यत्सोरभैः स्वादुमयैः सदागतिर्गता-
गतैः पूरित विश्वखण्डम् ।
परिभ्रमन्तो मधुपानमत्ताः
यत्रालिमालाः किलमण्डिताश्च ।।२१९।।

श्री अयोध्या जी में श्री सरयूजी का परम पावन तट खिले हुए पुष्पों से सुशोभित सुन्दर वृक्ष विस्तारवाला, विचित्र वृक्षों से सुशोभित सभी ओर से प्रसन्नता फैलाने वाला, अपने विचित्र प्रकाश की किरणों को फैलाता हुआ शोभा दे रहा है। जिस श्री सरयू तट पर प्रमोद वन में फल-पुष्पों की सुगन्ध से मतवाले बने हुए भौंरे इधर से उधर बार-बार गुञ्जार करते हुए मधुपान में मस्त होकर घूम रहे हैं ।।२१९।।

महीमयूखैः खचितामहद्भिर्मणी-
प्रवालैः रुचिरा समन्तात् ।
हिरण्यमयी मूर्तिमती श्रियाढया-
यत्राद्भुता सन्ति च नित्य नित्या ।।२२०।।

जिस श्री सरयू तट पर महान् प्रभा किरणों से प्रकाशित बड़े-बड़े मणिरत्न प्रवालों से जड़ित सुवर्णमयी भूमि साक्षात् स्वरूप धारण किये हुए श्री जी के समान अत्यन्त अद्भुत, सदैव नवीन नित्य स्वरूप शोभा देती है ।।२२०।।

जलानिशीतांशुकराकराणि-
गोक्षीरशंखद्युति निर्जितानि ।
सुधाशरन्मेघनिभानिकानि-
श्रीमेन्दुरश्याम यशांसितानि ।।२२१।।
हिमागमाच्छीत विडम्बितानि-
स्वादूनि माध्वीकरसाद्वनानि ।
स्वच्छानि सच्चित्तसमानकानि-
कर्पूरकुन्दाद्भुत दर्शनानि ।।२२२।।

जिस श्री सरयू जी के जल में चन्द्रमा की किरणों में केवल अमृत ही भर दिया हो, ऐसा मधुर लगता है। गाय के दूध की-शंख की तथा चन्द्रमा की द्युति को लज्जित कर रहा है। शरद्कालीन अमृत के मेघ का बरसाया हुआ प्रतीत होता है। श्री सीतारामजी के पावन यशों से जो परिपूर्ण है। हिम के आगम से शीतल हुए से भी अधिक सुख शान्ति प्रदायक है। मधुर रस से भी अधिक मधुरतम है। कुन्द-कपूर तथा सज्जनों के चित्त के समान जिसका जल परम स्वच्छ पवित्र है। ऐसी श्री सरयू शोभा दे रही है ।।२२२।।

महार्हं माणिक्य मणिप्रकारै-
वैंडूर्य व्रजांकुश सुप्रन्नैः ।
एभिः सदासत् सिक्ताभिरन्विता-
विराजिता सा सरयू सरिद्वरा ।।२२३।।
वीची दुकूलाशतयत्रवक्त्रा-
नीलेक्षणा चारुकुमुद्वती स्मिता ।
अराल शैवाल विशालकेशी-
भव्याम्बरा नव्यवधूरिवाभवार ।।२२४।।

महारामायणे–अ० ३, श्लोक २ से ९ पर्यन्त ।

महान् कीमती मणि माणिक्य वैडूर्य हीरा-रत्नादिक से परम प्रसन्न स्वच्छ बालु से सुशोभित सरिताओं में श्रेष्ठ सरयू नदी शोभा दे रही है ।।२२३।। जल तरङ्ग जिसके वस्त्र है । खिले हुए कमल जिसका मुख है नील कमल नेत्र हैं । सुन्दर कुमुदनी जिसकी मधुर हँसी है । सेवार जिसकी अलकावली है ऐसी भव्य शृंगार किये हुए नव-वधू के समान श्री सरयू सुशोभित हो रही है ।।२२४।।

रुद्रयामले—

मथुराद्याः पुरी सर्वा अयोध्यापुर दासिकाः ।
अयोध्यामेव सेवन्ते प्रलयेऽप्रलयेऽपि वा ।।२२५।।

सरयू तटयोर्मध्ये धवलग्राम सुन्दरे ।
अमराः स्नानमिच्छन्ति का कथारितरे जनाः ।।२२६।।

मन्वन्तर सहस्रैस्तु काशीवासेन यत्फलम् ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ।।२२७।।

मथुरायां कल्पमेकं वसति मानवो यदि ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ।।२२८।।

गयाश्राद्धेन यत्फलं पुरुषोत्तम दर्शने ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दनेर्श कृते ।।२२९।।

पुस्करेषु नरो याति कार्तिक्यां कृत्तिका युते ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शने कृते ।।२३०।।

श्री मथुरादिक मुक्तिप्रद सभी पुरियाँ श्री अयोध्यापुरी की दासियाँ हैं । प्रलय में तथा प्रत्यक्ष में श्री अयोध्याजी की ही सेवा सब करती हैं ।।२२५।। श्री सरयू तट पर श्री अयोध्या धाम में देवगण भी स्नान करना चाहते हैं, दूसरों की तो बात ही क्या है ?।।२२६।। हजारों मन्वन्तर पर्यन्त काशी में वास करने से तथा मथुरा में कल्प पर्यन्त वास करने से तथा गया में श्राद्ध करने से एवं पुरुषोत्तम प्रभु जगन्नाथ के दर्शन करने से, तथा कार्तिक मास में कृतिका नक्षत्र से संयुक्त कार्तिकी पूर्णिमा का स्नान पुष्कर राज में करने से जो पुण्य फल मिलता है उससे भी अधिक पुण्य केवल श्री सरयू जी के दर्शन मात्र से ही मिलता है ।।२२७–२३०।।

षष्टीवर्ष सहस्त्राणि काशीवासेन यत्फलम् ।
तत्फलाधिकं प्रोक्तं सरयू दर्शनेकृते ।।२३१।।
षष्टिवर्ष सहस्त्राणि भागीरथ्यावगाहनात् ।
तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयूदर्शनेकृते ।।२३२।।

पद्मपुराण भी ठीक यही बात दुहराता है कि—साठ हजार वर्ष काशीवास करके भागीरथी का नित्य स्नान करने से जो फल मिलता है उससे भी अधिक फल श्री सरयू जी के केवल दर्शन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है ।।२३१—२३२।।

।। श्रीहनुमत्संहितायां श्रीरामरासपरत्वम् ।।

रामस्य वामे दक्षे च राजतेमत्त कामिनी ।
यथा सूत्रैर्मरकतं वेष्टितं पुरटं बहिः ।।२३३।।
मृदङ्गमुरलीवीणापणवानकझर्झरान् ।
वादयन्ति प्रयत्नेन नानायन्त्रांश्च नारिकाः ।।२३४।।
सप्तस्वरेण गायन्तिछोलाक्यं रागरागिणी ।
माधुर्येण वरार्हेण विदग्धा रामसद्गुणान् ।।२३५।।
तेन वाद्येन गानेन मोहितो रघुनन्दनः ।
स्वगुणेन गुणग्राही कामिनी कामनास्पदः ।।२३६।।
प्रियायाः सहितः प्रेम्णा हास्यलास्येमनोदधे ।
रासाजिरे रसावेशात् कारयामास मण्डलीम् ।।२३७।।

—अध्याय ४ श्लोक २० से २४ पर्यन्त ।

श्रीरामजी के दाहिने-बाएँ प्रेमरस मतवाली कामिनियां विराजती हैं। जैसे मरकत मणि को स्वर्ण सूत्रों ने चारों ओर से लपेट लिया हो वैसी शोभा लगती है । कोई-मृदंग, कोई मुरली-वीणाझांझ-तोकोई-करताल इत्यादि अनेक प्रकार के वाद्य-यन्त्रों को बजाती हुई बड़ी सावधानी से सप्त स्वर में राग-रागिणी गाती हैं एवं माधुर्यरस में भरे हुए श्रेष्ठ भाव से श्रीराम के सद्गुणों की कीर्ति अलापती हैं । ऐसी विदग्धाओं के गान-वाद्य से मोहित होकर अपने गुणग्राही गुण से कामिनिओं को

कामनापूर्ति के स्थान प्रभुने अपनी प्रियाजू के सहित हास-विलास उल्लासित करने का मन में विचार करके रसावेश में आकर प्रेमपूर्वक रास मण्डली की रचना की ।।२३३–२३७।।

रणयन्नूपुरं पादे क्वणयन् कङ्कणं करे ।
कलयन् किंकणीं कट्यां वलयान् वादयन् मुहुः ।।२३८।।
नील पीताम्वर धरौ स्त्रग्विणौ च शुचिस्मितौ ।
विराजिते महापीठे तुमुले रासमण्डले ।।२३९।।

चरणों से नूपुर बजाते हुए, हाथों के कंकण का निनाद करते हुए, कटि की करधनी की किंकणियों को बजाते हुए, दोनों श्री युगल साकार नीलाम्बर-पीताम्बर धारण किये हुए, सुन्दर मालायें पहने हुए, पवित्र मन्द मुस्काते हुए उस विशाल रास मण्डल में एक महान् पीठ सिंहासन पर विराजमान हुए ।।२३८–२३९।।

सर्वाः सर्वे प्रनृत्यन्ति नर्तयन्ति परस्परम् ।
गायन्ति गाययन्ताश्च नन्दन्ति नन्दयन्ति च ।।२४०।।
लोलालकाः परिभ्रान्त्या वेणी श्रेणीभिरञ्जिता ।
वङ्कताटङ्क धारिण्यो गण्डमण्डलमण्डिता ।।२४१।।
ताभिः परम हर्षेण रमते रघुनन्दनः ।
यथा पूर्णशशीतारावेष्टितो भाति निर्मलः ।।२४२।।
एवं प्रिया प्रयत्नेन प्राप्यरासरसोत्सवम् ।
न त्यजन्ति प्रियं कान्तं यथारङ्को ललामकम् ।।२४३।।

—श्री हनुमत्संहिता अध्याय ४ श्लोक २७ से ३० पर्यन्त ।

उस रास मण्डल में सब नाचते हैं तथा सब सबको नचाते हैं। गाते हैं तथा सब सबको गवाते भी हैं। प्रसन्न होते हैं तथा सब सबको प्रसन्न करते हैं। लम्बे लम्बे घुंघराले बाल झूम रहे हैं। वेणी पुष्पों की माला से अभिरञ्जित हो रही है, टेढे-मेढे कर्णफूल तथा ताटङ्क से सुन्दर गाल सुशोभित हो रहे हैं, ऐसी हर्ष से भरी हुई सखियों के साथ परम हर्षोन्मत्त होकर श्री रघुनाथजी रमण कर रहे हैं। जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा ताराओं से घिरा हुआ भी निर्मल प्रकाश देता है, वैसे ही श्रीराम अपनी श्री प्राणप्रियाजू के प्रयत्न से रचे हुए रास मण्डल में रसोत्सव बढ़ा रहे

हैं। इस प्रकार प्रेमरस भरे प्रियतम को पाकर कोई भी अपने प्रियकान्त को छोड़तीं नहीं है। जैसे किसी रङ्क के हाथ रत्न-लाल-हीरा लग जाय तो वह छोड़ना नहीं चाहता ।।२४०-२४३।।

श्रीमद् वाल्मीकीय रामायणे उत्तरकाण्डे—

तं प्रयच्छ ततो राम पुष्पकं हेमभूषितम् ।
प्रवेशय महाबाहोरशोक वनिकां शुभाम् ।।२४४।।
यत्राशोकः प्रियतरः रम्यकाननमालकाः ।
सुबहूनि सुगन्धींनि माल्यानि विविधानि च ।।२४५।।
अकालपुष्पास्तरवः शिल्पिभिः परिकल्पिता ।
शाद्वलै परमोपेताः सीतार्थमधिकल्पिताः ।।२४६।।
नन्दनन्तु यथेन्द्रस्य श्रीमद् चैत्ररथं वनम् ।
राघवस्य यथारूपं काननं तं निवेशने ।।२४७।।
मुक्तादाम गृहोपेताः लता पादप संवृत्ताः ।
अशोकवनिकां स्फीतां प्रविष्टो रघुनन्दनः ।।२४८।।

स्वर्णभूषित पुष्पक विमान धनाध्यक्ष को प्रदान कर महाबाहु श्रीरामजी ने परमशुभ अशोक वाटिका में प्रवेश किया ।।२४४।। जहां पर शोक हरण करने वाले एवं परमप्रिय लगने वाले रमणीय वन-उपवन की पंक्तियाँ हैं तथा अत्यन्त सुगन्ध से परिपूर्ण विविध प्रकार के पुष्पों की मालायें झूल रही हैं ।।२४५।। बिना समय के ही सदैव फूले-फले वृक्ष शोभा दे रहे है तथा चतुर शिल्पीजनों द्वारा विरचित श्री सीताजी को प्रसन्न करने के लिये कुंज-निकुञ्जो से सुशोभित हैं ।।२४६।। जैसे देवेन्द्र का नन्दनवन तथा स्वर्ग का श्रीमान् चैत्ररथवन सुन्दर मनोहर है वैसा ही श्रीराघवेन्द्र प्रभु का यह वन अतिशय प्रिय लगता है ।।२४७।। मुक्ता-मण्डित सुन्दर गृह तथालता वृक्ष से घिरे हुए उस वन में श्री रघुनन्दनजू ने प्रवेश किया ।।२४८।।

आसने च शुभाकारे पुष्प प्रस्तर सम्मिते ।
कुशारस्तरण संस्तीर्णे राघवो निषसाद ह ।।२४९।।
भोजनानि विचित्राणि फलानि विविधानि च ।
रामस्यापि विहारार्थं किङ्कराः पूर्णमादर ।।२५०।।

सीतामालभ्य हस्तेन मधुमुखेक्यमुत्तमाम् ।
पाययामास काकुत्स्थः शचीभीन्द्रमिवामृतम् ।।२५१।।

वहां सुन्दर दर्शनीय आकारवाले आसन पर-जिसके पत्थर भी पुष्प सरीखे कोमल हैं, जिस पर कुश का पवित्र बिछौना बिछा हुआ है उस पर श्री राघवजी विराजमान हुए ।।२४६।। उस समय श्रीरामजी के लिये विविध प्रकार के भोजन तथा विचित्र स्वाद वाले फल सेवकों ने लाकर आदर पूर्वक समर्पण किये ।।२५०।। उस समय एकान्त में श्री सीताजी को आलिङ्गन करते हुए अपने हाथ से मधुर-रस भरे पेय रस श्रीरामजी ने जैसे इन्द्र अपनी प्राण प्रिया शची को अमृत पिलाते हैं वैसे ही श्री जानकी जी को पिलाये ।।२५१।।

उपानृत्यन्ति काकुत्स्थं नृत्यगीत विशारदाः ।
दाक्षिण्योश्चार्वङ्गयश्च स्त्रियया नवसम्मता ।।२५२।।
अप्सरागण संघाश्च किन्नरी परिवारिताम् ।
बालाश्चरूपवन्त्यश्च स्त्रियः सर्वगुणान्वितः ।।२५३।।
मनोऽभिरामा रामास्ता रामो रमयतां वरः ।
तांस्तान् रमयामास नित्यमुद्भिन्न यौवनः ।।२५४।।
एवं रामो मुदायुक्तः सीतामुरुवराननाम् ।
रमयामास वैदेही नित्यं भूषणभूषिताः ।।२५५।।
तथा च रममाणस्य काकुत्स्थः शशिरागमः ।
व्यतीयुः पुरुषेन्द्रस्य राघवस्य महात्मनः ।।२५६।।
तथा तयोर्विहरतोः सीताराघवयोश्चिरम् ।
दशवर्ष सहस्राणि गतानि सुमहात्मनोः ।।२५७।।

नृत्यगीत में प्रवीणा, परमचतुरा, सुन्दराङ्गीयाँ स्त्रियाँ काकुत्स्थ राम को प्रेम से नृत्यकरातीं थीं, वे नवीन भाव से परिपूर्ण थीं ।।२५२।। अप्सरा तथा किन्नरियों के यूथ सर्वगुणसम्पन्न रूपवती बालाओं सहित परममनोहर रमणियों के साथ रमणकरने वालों में सर्व श्रेष्ठ श्रीराम जिनका यौवनकाल अभी विकसित हो रहा है, ऐसे प्रभु उन सबको रमण विहार कराये । तथा परमसुन्दर श्रेष्ठ मुखकमलवाली श्री वैदेही के साथ रमण किये । पुरुषोत्तम प्रभु श्री राघवेन्द्र के इस प्रकार आनन्द विहार करते हुए दश हजार वर्ष श्री अवध में व्यतीत हुए ।।२५७।।

आदि रामायणे—

भूस्थं जल स्थलवनेषु विहार शाली
व्यालीप्त कोटि ललना समुदाय चित्रः ।
क्रीडां चकार रघुवंश विभूषणोऽसौ
श्रीमान् प्रमोदवन कुंजलतातलेषु ।।२५८।।

सान्तानिकं नाम वनं निदाघ क्षयाय लेपाय च चन्दनानाम् ।
आगादगाधाशय श्र शु ाश्वः पित्रोरनुज्ञानुसरः स रामः ।।२५६।।

करोड़ों ललनाओं के समुदाय से घिरे हुए, जल-स्थल और वन में अबाधगति से विहार करने वाले रघुवंशविभूषण श्रीराम ने प्रमोदवन की लता कुन्जों में क्रीडाकौतुक किया तथा गर्मी के असह्य ताप की शान्ति के लिये सान्तानिक नाम वन में अगाध जलाशय में क्रीडा करने के लिये चन्दनों से लिप्त होकर शीघ्रगामी घोड़ों पर बैठकर श्रीरामजी पहुँच गये ।।२५६।।

श्रीहनुमत्संहितायाम् – अध्याय ५ श्लोक ६३

परस्परालिङ्गितमिङ्गितज्ञं हास्येन-
वाक्येन निमज्जतां वरम् ।
रातास्पदं सर्वसुखास्पदं तं-
नमामि रासेधरमप्रधृष्टम् ।।२६०।।

हास्यविनोद में रसमग्न ऐसे श्रेष्टतम प्रियतम, मन की बातें जो इशारे से जानते हैं समस्त सुख निधान, किसी से भी भयभीत न होने वाले, रासेश्वर रासलीला के धाम प्रभु श्रीराम को मैं प्रणाम करता हूँ ।।२६०।।

अस्मिन् महारास रसोत्सवाय-
मनोनिविष्टं रसिकाग्रणीशः ।
विधौ निषेधे दुरिते सुकर्मणि-
न वाध्यते तं च यथा सदागतिः ।।२६१।।
कैवल्य दौर्बल्यकरं महारसं-
सीतापते रासविलासमाद्यम् ।

कायेन वाचा मनसा स्मरेद्य-
स याति गोलोक निरामयं पदम् ।।२६२।।

इस श्रीराम महारास रसोत्सव में जिस रसिकाग्रगण्य शिरोमणि का मन लग गया है उसको विधि-निषेध पाप, पुण्य आदि कभी भी बाधा नहीं पहुंचा सकते हैं, वह तो सदैव परम सद्गति का श्रेष्ठ अधिकारी हो जाता है ।।२६१।। ब्रह्मानन्दैकरसरूप कैवल्यसुख को भी दुर्बल कर देने वाले श्री सीतापति के इस आदि महारास विलास महान पावन रस का जो तन-मन-वचन से स्मरण करता है वह निरामय परम पद गोलोक को प्राप्त होता है ।।२६२।।

इदं रहस्यं परमं सुगोपनं-
मयैव चोक्तं निगमागमात्परम् ।
यः श्रद्धया भक्तियुतः पठेद्वा-
स याति रामस्य पदं महामुने ।।२६३।।

यो भावुको भावयते हृदब्जे-
रामस्यरासोत्सव वारिपूर्णः ।
पिबेच्च सत्सार सुधाधिकं-
रसं न रोचते क्षारजलं यथाकिल ।।२६४।।

हे मुने ! यह परम श्रेष्ठ अतिगोपनीय रहस्य सर्वप्रथम मैंने ही आपको सुनाया है । जो आगम निगमादिकों से परे हैं । हे महामुने ! जो इसका श्रद्धापूर्वक भक्ति-प्रेम-परिपूर्ण भावना से पाठ करता है वह श्री रामजी के धाम को जाता है ।।२६३।। जो भावुक श्रीरामरासोत्सव का हृदय-कमल में ध्यान करता है तथा सुधासार परमरस का पान करता है उसको जैसे अमृत रस पीने वाले को खारा पानी कभी प्रिय नहीं लगता, वैसे ही संसार के अन्य रस कभी रुचिकर नहीं लगते ।।२६४।।

श्रुत्वा रहस्यं परमं पवित्रं-
महामुनिः सुस्थिर मानसोऽभवत् ।
परस्परालिङ्गन भावयुक्तं-
दत्त्वा ययौ स्वाश्नममात्मनस्तदा ।।२६५।।

—श्री हनुमत्संहिता अध्याय ५ श्लोक ८४ से ८८ तक ।।

श्री हनुमन्तलाल जी के श्रीमुखारविन्द से यह परम पवित्र श्रीराम-रहस्य श्रवण करके महामुनि रसमग्न हो गये, कुछ समय के पश्चात् मनको स्थिर करके श्री अगस्त्य मुनि एवं श्री हनुमान जी ने परस्पर भावपूर्ण आलिङ्गन किया। तत्पश्चात् श्री अगस्त्य जी अपने आश्रम में चले गये ।।२६५।।

श्री वशिष्ठ संहितायाम्—

वीणा वेणु मृदङ्गाद्यैर्दुन्दुभिपणवैरतथा।
वाद्यैश्चतुर्विधैर्नित्यं कर्णचिन्नापकर्षकैः ।।२६६।।
नरनारी गर्णैर्नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहैः।
कन्दर्परतिदर्पघ्नैः संकुला राजतेपुरी ।।२६७।।

वीणा-वंशी-मृदङ्ग-दुन्दुभि नगारे आदि चारों प्रकार के वाजे नित्य कान को वरवश आकर्षित करते हैं ऐसे सच्चिदानन्द स्वरूप कामदेव तथा रति के दर्प को भी दलन करने वाले नर-नारियों से अयोध्यापुरी भरपूर है ।।२६६–२६७।।

महारामायणे—अध्याय ५२ श्लोक ७

अनेक सखिभिः साकं रमन्ते रासमण्डले।
अतन्वन् वै रमुक्रीडा रामनाम्नः प्रवर्तते ।।२६८।।
गोलोकाच्च परं ज्ञेयं साकेतान्तः पुरं प्रियम्।
गोप्यात्गोप्यतरा गोप्या सायोध्यातीव दुर्लभा ।।२६९।।
पुंसामगोचर स्थानं दासीदास विवर्जितम्।
महापुरुष श्री रामो राजते सखिभिः सह ।।२७०।।
अनन्त सखिभिः सार्धं रामचन्द्रः स सीतया।
स्वेच्छया कुरुते रासं ताग्रजागात्रसम्भवाः ।।२७१।।

अनेक सखियों के साथ रास मण्डल में रमण करते हैं, जो रमुक्रीडा का विस्तार करते हैं अतएव राम कहलाते हैं ।।२६८।।

जो गोलोक से भी पर हैं, उस साकेत धाम का अन्तःपुर परमप्रिय गुप्तों में भी परम गोपनीय वह अयोध्यापुरी अत्यन्त दुर्लभ है ।।२६९।। जिसमें पुरुषों का प्रवेश नहीं होता, दासी-दास भी वहां नहीं जाते। ऐसे दिव्य-स्थान में महापुरुष श्रीराम सखियों के साथ विराजते हैं। अनन्तः

सखियों के साथ श्री सीता सहित श्री रामचन्द्र जी विराजते हैं, वे सब सखियां अपनी बड़ी बहन श्री जानकी जी की अङ्गनायें हैं जो केवल रासलीला रसोल्लास की पूर्ति के लिए ही श्री जानकी जी की इच्छा से प्रकट हुई हैं, श्री सीता जी से भिन्न नहीं हैं । प्रियतम के रास सुख को बढ़ाने के लिए स्वयं श्री किशोरी जी ही अनन्त रूप से विराजती हैं ।।२७१।।

सर्वाभरण सम्पन्नो रत्नाद्यैर्विविधैर्वरैः ।
मध्यवयाः किशोरश्च अनन्तरूपो रघूत्तमः ।।२७२।।
किशोर्यः सकलाः सख्यः भूषिताभूषणैस्तथा ।
जानकीरामरूपास्ताः महालक्ष्म्यादिभिः सह ।।२७३।।
शृणुष्व सुभगेमत्तो विस्तरेण कृप्यां पराम् ।
रामरासस्माविष्टां प्रवक्ष्ये त्वद् हिताय वै ।।२७४।।

सभी विभूषणों से विभूषित, रत्नादिक विविध श्रेष्ठ अलङ्कार धारण किये युवा-किशोर मध्यवय अनन्त रूप धारण कर श्री रघुनाथ जी सभी भूषणों से विभूषित अनन्त किशोरी रूप सखियों के साथ विराजते हैं, वहां सभी सखी श्री जानकी स्वरूपा हैं, महालक्ष्मी आदि के साथ हैं । हे सुभगे ! श्रीराम रास की सुन्दर लीला तुम्हारे कल्याण के लिये मैं विशेष रूप से कहता हूँ, उसको मेरे मुख से श्रवण करो ।।२७२–२७४।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

मृदङ्गवीणा पणवादि वाधान्-
चतुर्विधाँस्तान् परिवादयन्ति ।
नृत्यन्ति गायन्ति मिथः कुमार्यो-
नृपेन्द्रपुत्रेक्षण दत्त भावाः ।।२७५।।
अस्याङ्ग सङ्गादवलोकनाच्च-
ताश्चाप्सरोभ्यश्चाधिकारभूवने ।
नृत्येषु गीतेषु च वादनेषु-
व्यङ्गेषु रङ्गेषु च हावभावम् ।।२७६।।

मृदङ्ग-वीणा-पणवादिक चारों प्रकार के वाद्यों को वजाती हैं, नाचती हैं, गाती हैं, परस्पर आनन्द करती हैं । राज राजेन्द्रकुमार की

दृष्टि में हृदय का भाव मिलाये हुए तथा उनके अङ्ग के स्पर्श से रस भरे अवलोकन से ये सुकुमारियां नृत्य में-गान में-वाजे में-व्यंग में हाव-भाव कटाक्ष में अप्सराओं से भी अधिक रसमोद मचाने वाली हो गई हैं। ।।२७५-२७६।।

श्री हनुमत्संहितायाम्—

रमन्ते रमणीयूथं रमन्ते रासमण्डले।
वदन्ति रामरामेति रसिका रामसेवकाः ।।२७७।।

रासमण्डल में रमणियों के यूथ में रमण करते हैं अतएव श्रीराम के सेवक उन्हें राम ऐसे नाम से वर्णन करते हैं ।।२७७।।

शिव संहितायाम्—

सर्वश्रृङ्गारसम्पन्नः सर्वनायक नायकः।
सर्वदानन्दसन्दोह दायकः रघुनायकः ।।२७८।।
किंकणीनूपुरारावैः मुग्धस्त्रीमुखमासतैः।
वीणा मृदङ्ग सन्नाद्यैः वादितैर्ललनागणैः ।।२७९।।

सर्वप्रकार के श्रृंगार से विभूषित, सभी नायकों के भी नायक आनन्दकन्द सन्दोह प्रदायक श्री रघुनायक किंकणी नूपुरादि के मधुर स्वर तथा मुग्धा स्त्रियों के मुख से निकले हुए मधुर वचनों से एवं वीणा मृदङ्गादि सुन्दर बाजों से ललना गणों द्वारा सुसेवित हैं ।।२७८-७९।।

श्री चित्रकूट-महात्म्ये—

संख्याता ऋषिभिश्चैव ध्येयास्तरयंत्र वेदभिः।
ऋषीनेतान् नमस्कृत्य चिन्तयेन् मण्डलं पुनः ।।२८०।।
मण्डलं निर्मितं तत्र योजनानेक विस्तृतम्।
अखण्ड वर्तुलाकारं पार्वणं शशि सन्निभम् ।।२८१।।
मध्येहि मण्डले तत्र सखिभिः सहितो हरिः।
गीत नृत्य समायुक्तं रासं कृत्वा मनोहरम् ।।२८२।।
स्वकीयाभिः सखीभिश्च क्रीडते रघुनन्दनः।
यत्र सन्निहितो नित्यं राघवेन्द्रो रघूद्वहः ।।२८३।।

असंख्य ऋषियों द्वारा ध्येय उस अन्तरवेद के इन ऋषियों को प्रणाम करके तब रास मण्डल का ध्यान धरे, अनेक योजन विस्तार वाला रास मण्डल निर्माण करके, जो पूर्णिमा के चन्द्रमा की भांति गोलाकार है, अखण्ड है, उसके मध्य में सखियों के साथ श्री हरि गीत नृत्य के सहित मनोहर रास किये। जिस चित्रकूट के इस दिव्य रास मण्डल में अपनी स्वकीया जानकी जी की अंश स्वरूपा उन सखियों के साथ श्री राघवेन्द्र रघुनाथ जी नित्य हो विराजे हुए हैं और केलि क्रीड़ा करते हैं।

।।२८०-२८३।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

स्मरस्य मार्गं चरितोरि सम्मुखे-
विजेतुमेतत् सकलं सुसाधनम्।
कुमारराजस्य तु रासमण्डले सुखं-
स लेभे स्थिर सार्वभौमः ।।२८४।।
स्वयन्तु श्रृङ्गार हृत् तीर्थं ते-
कथं परन्तु श्रृंगार शताश्रयः स्वतः।
न चैन्तदाकार विमोहिता कथं-
दिवौकसामौरस कन्यका इमाः ।।२८५।।

राजकुमार श्रीराम कामदेव का रास्ता देख रहे थे, उसको जीतने के सभी साधनों से सुसम्पन्न थे, परन्तु कामदेव की एक न चली अतः उस रासमण्डल में सब सुखों का सार्वभौम सम्राट सुख प्रभु को प्राप्त हुआ। ।।२८४।। जो सभी श्रृंगारों के हृदय को भी हरण करने वाले हैं तथा सकड़ों श्रृंगार रस जिनका स्वयं आश्रय लेते हैं उनको देखकर देवाङ्गनाओं की कन्यायें इन पर विमोहित हो जायें तो कुछ भी आश्चर्य नहीं है ।।२८५।।

।। इति श्रीरामरासपरत्व वर्णनम् ।।

अथ श्रीरामनामप्रतापेन श्रीरामपरत्त्वम्

श्रीहनुमन्नाटके —

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां-
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचस्तं जीवनं सज्जनानां-
बीजं धर्मद्रुमस्य च प्रभवतु भवनां भूतये रामनाम ।।१।।

जो समस्त कल्याणों का निधान है, कलिमल को मंथन करने वाला है, पावनों में भी परम पावन है, परम पद मोक्ष मार्ग पर प्रस्थान करने वालों को शीघ्र मोक्ष प्राप्त कराने वाला पाथेय है वह खर्चा राह खर्ची है। कविजनों को वाणी का एक मात्र विश्राम स्थान है, जो सज्जनो का जीवन धन है, जो धर्म रूपी कल्पवृक्ष का वीज है वह श्रीराम का नाम आप सभी के विभूति को बढ़ाने वाला हो ।।१।।

मुक्ति स्त्रीकर्णपूरौ मुनि हृदय द्वयः पक्षनतत् तीरभूमि-
संसार पार सिंधोः कलिकलुषमयः स्तोम सोमार्क बिम्बे !
उद्गस्यः धन्यः पुराणः द्रुमललित दले लोचने च श्रुतीनां-
कामं रामेतिवर्णः शमिह कलपतां सन्ततं सज्जनानाम् ।।२।।

जो मुक्ति रूपी स्त्री के दोनों कानों के कर्णफूल हैं, जो मुनि जनों के बाह्य अभ्यन्तर दोनों हृदय हैं, जो प्रेम पक्षी की तीर भूमि है, जो संसार समुद्र से पार करने वाले हैं, जो कलिकाल के पाप का विनाश करने वाले हैं, जो महान अन्धकार में सूर्य-चन्द्र के समान प्रकाश देने वाले है, धन्य धन्य बनाने वाले पुण्यवृक्ष के उगते हुए दो सुन्दर पत्ते हैं, जो श्रुतियों के दो नेत्र हैं ऐसे 'राम' नाम के दो अक्षर कल्याण चाहने वाले सज्जनों का सदैव कल्याण करे ।।२।।

श्री हनुमत्प्रहस्तखण्डे श्रीहनुमद्वाक्यम्—

रेफो व्यञ्जन राज तडिवदाकारः प्रकर्ण स्वरे-
स्वंतस्यापि मकार विष्फुरतिते वर्णाक्षरमादिमः ।

यैशं भूयो निगद्यते रघुकुलालङ्कार हीराङ्कुरो-

देवः क्षोणीसुता पयोधरतटी शृंगार हारो हरिः ।।३।।

सुन्दरी-तन्त्रे—

लिपि संख्या विभागोऽयं पञ्चाशत् वर्णरूपकः ।

पूर्वं तद् व्यञ्जन ज्ञेयं स्वरः पश्चात् प्रकीर्तितः ।।४।।

मकारस्य त्रयं रूपं बिन्दु नादार्धमात्रिकम् ।

विसर्ग स्थिति रः प्रोक्तः रवशानां तु द्वयम् द्वयम् ।।५।।

लिपि की संख्या का विभाग पचास अक्षरों का बताया गया है, अक्षरों में पहले व्यंजन बोला जाता है पीछे स्वर कहा जाता है। मकार के तीन रूप हैं, बिन्दु-नाद तथा अर्ध मात्रा। रकार की स्थिति विसर्ग-रेफ ये दो प्रकार है।

श्रीहनुमान् नाटके—

आद्योन्तस्थोप्यनन्तो दिशति फलमसावद्वितीयं द्वितीयं-

तार्तीयीकः पवर्गः प्रकृतिरपिवले नापवर्गं प्रसूते ।

तूर्यश्चातुर्यभाजा दिशति च चतुरः श्रोत्रपन्थानुमर्थान्-

रामस्त्वन्नामवर्णः जगति कतिपयं कौतुकं तन्वते नः ।।६।।

जिसका आदि अक्षर अन्तस्थ होते हुए भी अनन्त फल देने वाला रकार है, उसके साथ दूसरा 'आकार' भी अद्वितीय स्वरूप ही हैं। उसके बिना किसी अक्षर का उच्चारण ही ठीक से नहीं होता। तीसरा 'म' अक्षर प्रकृति का विजय करके अपवर्ग मोक्ष को प्रकट करता है और चौथा अक्षर कान के द्वारा हृदय में जाते समय अनेकों अर्थो को प्रकट करने में परम चतुर है। हे राम! न जाने आपका नाम इस संसार में क्या-क्या कौतुक नहीं दिखाता है? ।।६।।

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो-

बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्तेति नैयायिकाः ।

अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः

सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं रामस्तुसर्वेश्वरः

त्रैलोक्यनाथो हरिः ।।७।।

जिसकी शैव भक्त 'शिव' कहकर उपासना करते हैं, वेदान्ती लोग जिसको ब्रह्म कहते हैं तथा बौद्धानुयायी जिसे 'बुद्ध' कहते हैं, प्रमाण देने एवं तर्क-वितर्क करने में अतिशय पटु नैयायिक गण जिसको 'कर्त्ता' कहते हैं। जैन-शासन के अनुसार चलने वाले जिसको "अर्हन" कहते हैं तथा मीमांसावालेसन्त जिसको 'कर्म' कहते हैं, वही सर्वेश्वर प्रभु श्रीराम आप सबके मनवांछित फल सदैव परिपूर्ण करें ।।७।।

महारामायणे—सर्ग ५२ श्लोक ६७, ६८ तथा १०१—

वेदे व्याकरणे चैव ये च वर्णाः स्वराः स्मृताः ।
रामनाम्नैय ते जाता सर्वेःवै नात्र संशयः ।।८।।
रकारोमूर्ध्नि संचारस्त्रिकूट्याकार उच्यते ।
मकारोऽधरयोर्मध्ये लोमे लोमे प्रतिष्ठितः ।।९।।
निर्वर्ण रामनामेदं केवलं च स्वराधिपम् ।
मुकुटः छत्रं सर्वेषां मकारो रेफ व्यञ्जनम् ।।१०।।

वेद तथा व्याकरण में जितने वर्ण स्वर तथा व्यञ्जन कहे गये हैं वे सभी श्रीराम नाम से ही उत्पन्न हैं। इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।८।। रकार का संचार उर्ध्व भाग में रेफ रूप में होता है। 'अकार' का त्रिकुटी में स्थान कहा गया है। मकार दानों ओठों के मध्य में विराजता है। ये सब वर्णों का समुच्चय श्री राम नाम रोम-रोम में प्रतिष्ठित है ।।९।। श्रीराम नाम का एक निर्वर्ण भेद श्री शंकर जी समझाते हैं कि यह श्रीराम नाम वर्णात्मक नहीं है, निर्वर्ण है। यह तो सभी स्वरों का सम्राट अधीश्वर है। सभी स्वर व्यञ्जनों के अक्षर वर्ण इसके अधीन हैं। अतएव मकार सभी अक्षरों के शिर पर मुकुट रूप अनुस्वार होकर विराजता है। तथा रकार रेफ होकर छत्र रूप से विराजता है ।।१०।।

वृद्ध मनुस्मृतौ—

यन्नाम संसर्ग वशाद्विवर्णौ-
नष्टस्वरौ मूर्ध्नगतौ स्वराणाम् ।
तद्राम पादौ हृदय निधाय-
देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ।।११।।

जिनके नाम का संसर्ग पाकर स्वर के नष्ट हो जाने तथा आधे अक्षर हो जाने पर भी र और म सभी अक्षरों के ऊपर जाकर रेफ तथा

बिन्दु अनुस्वार बन कर विराजते हैं। उन श्री रामचन्द्र जी के श्री युगल चरण कमलों को हृदय में धारण करले तो यह आत्मा उर्ध्व गति को प्राप्त क्यों नहीं कर सकता हैं ? ॥११॥

श्रीरामरहस्योपनिषदि–श्रीहनुमद्वाक्यम्—

किं मन्त्रैर्बहुभिर्विनश्वरफलैरायाससाध्यैर्वृथा-
किंचिल्लोभवितानमात्र विफलै संसार दुःखावहैः।
एकः सन्नपिसर्वमन्त्र फलदो लोभादि दोषोज्झितः
श्रीरामः शरणंममेति सततं मन्त्रोऽयमष्टाक्षरः ॥१२॥

महान परिश्रम कर के सिद्ध किये गये बहुत से मन्त्र एकाध क्षुद्र एवं विनाश हो जाने वाले कुछ ही दिन टिकने वाले क्षणिक सुख देने वाले हैं उनकी साधना से क्या लाभ ? जो किञ्चित् लोभ मात्र दिखाकर अन्त में केवल संसार के दुःखों में ही फंसाते हैं। मन्त्र तो श्रीराम मंत्र ही है। जो अकेला ही सभी मन्त्रों के फलों को देने में परम समर्थ हैं तथा लोभ लालच के दुर्गुणों से परे हैं, अतः "श्रीरामः शरणं मम" इसी अष्टाक्षर श्रीराम मन्त्र का निरन्तर जप करते रहना ही उचित है ॥१२॥

श्रीहनुमत्प्रहस्तखण्डे—

आकृष्टिः सुखसम्पदां सुमहतामुच्चाटनं चांहसां-
आचाण्डालममूकलोक सुलभं वश्यं च मुक्तिस्त्रियः
नो दीक्षा न च दक्षिणा न च पुरश्चर्यामनागीक्षते-
मन्त्रोऽयं रसनास्पृगेव फलति श्रीरामनामात्मकम् ॥१३॥

जो सुख सम्पत्ति को आकर्षण करता है, महा-महान् पापों का उच्चाटन करने वाला है, मुक्ति स्त्री को वशीभूत करने वाला है, जो एक मूक को छोड कर चाण्डाल पर्यन्त सभी मनुष्यों को सुलभ है। जो दीक्षा-दक्षिणा-पुरश्चरणादि साधनों की जरा भी अपेक्षा नहीं रखता है, यह श्रीराम नाम दिव्य मन्त्र तो जीभ के अग्र भाग का स्पर्श करते ही केवल उच्चारण मात्र करने से ही सम्पूर्ण फल प्रदान करता है ॥१३॥

वृद्धमनुस्मृतौ -

सप्तकोटि महामन्त्राश्चित्त विभ्रान्त कारकाः।
एक एव परोमन्त्रः राम इत्यक्षर द्वयम् ॥१४॥

कृष्णेति वासुदेवेति सन्तिनामान्यनेकशः ।
तेभ्यो रामेति मन्नाम प्राहुर्वेदाः परं मुने ।।१५।।
रामनाम्नः परं किञ्चित् न तु वेदेस्मृतावपि ।
संहितासु पुराणेषु नैव तन्त्रेषु विद्यते ।।१६।।
नाम्नो रामस्य ये तत्त्वं परं प्राहुः कुबुद्धयः ।
राक्षसास्ते विजानीयाः ब्रजेर्युनरकं ध्रुवम् ।।१७।।

चित्त में भ्रान्ति पैदा करने वाले अन्यान्य देवताओं के सात करोड़ मन्त्र हैं। परन्तु उन सब में परात्पर मन्त्र तो केवल 'राम' ही दो अक्षर वाला मन्त्र है ।।१४।। हे मुनि! कृष्ण वासुदेव आदि हमारे अनेकानेक नाम हैं, परन्तु वेदों में उन सबसे श्रेष्ठ परात्पर नाम 'राम' नाम ही कहा है ।।१५।। श्रीराम नाम से परमोत्तम न वेद में है, न स्मृत्तियों में है, न संहिताओं में, न पुराणों में तथा न किसी तन्त्र में ही है ।।१६।। श्रीराम नाम से भी श्रेष्ठ कोई तत्व है ऐसा जो अज्ञानी दुर्बुद्धि कोई कहते है तो वे राक्षस हैं ऐसा ही समझना चाहिए, ऐसे लोगों को नरक में जाना पड़ता है ।।१७।।

श्रीहनुमान्नाटके—

ये मज्जन्ति निमज्जयन्ति च परान् ते प्रस्तराः दुस्तराः
वार्धौ वारि तरन्ति वानरभटान्सन्तारयन्तेऽपि च ।
नो ते ग्रावगुणा न वारिधिगुणा नो वानराणां गुणा-
श्रीमद्दाशरथी प्रताप महिमा श्रेयः समुज्जृम्भते ।।१८।।

जो स्वयं पानी में डूब जाते हैं, जो दूसरों को भी डुवाते ही हैं, जो अत्यन्त दुःख से भी तैराये नहीं जा सकते हैं, ऐसे पत्थर भी-समुद्र के जल पर तैरते हैं तथा वानरी सेना के वीरों को तारते हैं, ये न तो पत्थरों का गुण है, न समुद्र का तथा न वानरों का ही गुण है, यह तो श्रीमान् दशरथ राजकुमार भगवान् श्रीराम के प्रताप की ही महिमा कल्याण-स्वरूप होकर फहरा रही है ।।१८।।

वृहत् हनुमन्नाटके—

इदं शरीरं शतसन्धिजर्जरं पतत्यवश्यं परिणाम दुर्वहम् ।
किमौषधं पृच्छसि मूढ दुर्मते निरामयं रामरसायनं पिब ।।१९।।

यह शरीर सैकड़ों टुकड़ों से जोड़ा हुआ जर्जरकाय हो गया है, जो अवश्यमेव गिर जायेगा और जिसका परिणाम भी दुःखरूप ही है, हे मूर्ख ! उसकी रक्षा के लिए तू क्या औषध पूछता है ? तू तो सदैव स्वच्छ रोगरहित रखने वाले श्रीराम नाम रसायन का पान कर ।।१६।।

अगस्त्य संहितायाम्—

श्रीरामनामाऽखिल मन्त्रबीजं संजीवनं चेद्हृदि सन्निविष्टम् ।
हलाहलं वा प्रलयानलं वा मृत्योर्मुखंवा विशतां कुतोभिः ।।२०।।

श्रीराम नाम सम्पूर्ण मन्त्रों का बीज है। इस संजीवनी बूटी का यदि हृदय में प्रवेश हो जाय तो फिर हलाहल विष से, प्रलय की अग्नि से तथा मृत्यु के मुख में प्रवेश करने से भी क्या भय हो सकता है ? ।।२०।।

श्री नृसिंहपुराणे—

श्रीरामनाम जपतां कुतोभयं सर्वतापशमनैक भेषजम् ।
पश्य तात ममगात्र सन्निधौ पावकोऽपिसलिलायतेऽधुना ।।२१।।

श्री प्रहलाद जी ने हिरण्यकश्यप से कहा—

श्रीराम नाम जपने वालों को भय कहां है ? सभी पाप संताप को शमन करने की जो एक मात्र औषध है । हे पिताजी ! देखिये मेरे शरीर की ओर देखिये, आपके द्वारा जलाई हुई यह अग्नि की ज्वालायें भी मेरे लिये आज शीतल जल के छिड़काव जैसी सुखद हो रही है ।।२१।।

काशीखण्डे—

पेयं पेयं श्रवणपुटके श्रीरामनामाभिधानं--
ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम् ।
जाप्यं जाप्यं प्रकृति विकृतौ प्राणिनां कर्णमूले-
वीथ्यां वीथ्यां मटति जटिलो कोऽपि काशीनिवासी ।।२२।।

कान रूपी प्याले में भर कर पीने योग्य श्रीराम नाम का पान करो, पान करो । मन में निरन्तर तारक ब्रह्मस्वरूप का ध्यान करो, ध्यान करो । शरीर जब से विकृत हो जाय, मरण काल सन्निकट हो, उस समय प्राणियों के कान में श्रीराम नाम का जप कराके सुनाइये, काशी की गली गली में जटाधारी कोई काशी निवासी (भगवान् शंकर) यही कहते हुए विचरण करते हैं ।।२२।।

वाराहपुराणे—

दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जरा जर्जरो-
हारामेण हतोऽस्मिभूमिपतितोजल्पंस्तनूंत्यक्तवान् ।
तीर्णो गोष्पद वद्भवार्णवमहोनाम्नाप्रभावात्पुन-
र्किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ।।२३।।

एक अत्यन्त वृद्ध म्लेच्छ को दैव योग से एक सूअर बच्चे ने धकेल दिया जिससे उसने मरते समय अपने जाति स्वभाव से 'हराम' ने मुझ को मारा ऐसा कहते हुए प्राण त्याग दिये । परन्तु उसके मुख से 'हराम' शब्द में मिले हुए 'राम' शब्द का उच्चारण हो जाने से वह इस महान दुस्तर भव सागर को गाय के खुर के गढे में भरे हुए पानी को पार करने में जैसे कुछ भी परिश्रम नहीं होता वैसे ही वह यवन भी संसार से तर गया, तब यदि कोई प्रेम से श्रीराम नाम रटण करने वाले रसिकजन श्रीरामधाम की प्राप्ति कर लें तो उसमें क्या आश्चर्य है ? ।।२३।।

पद्मपुराणे—

रामेति वर्णद्वयमादरेण सदास्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः ।
कलौयुगेकल्मषमानुषाणामन्यत्रधर्मे खलु नाधिकारः ।।२४।।
राम रामेति रामेति ये वदन्ति च पापिनः ।
हत्याकोटि सहस्राच्य तानुद्धरति नान्यथा ।।२५।।

"श्रीराम" इन दो अक्षरों का आदरपूर्वक सदैव स्मरण करने से ही सभी जन्तु मात्र मोक्ष प्राप्त करते हैं, कलिकाल के कलुषित हृदय मनुष्यों को अन्य धर्मों के अनुष्ठान करने का अधिकार ही नहीं है। पापी मनुष्य भी यदि राम-राम-राम ऐसा रटण करते हैं तो हजारों हत्याओं के पाप से उनको श्रीराम नाम उद्धार करता है, इसमें कोई संशय नहीं है ।।२४-२५।।

ब्रह्माण्डपुराणे—

रामं भजन्ति मनुजा मनसा वचसाऽनिशम् ।
अनायासेन संसारं तीर्त्वा यान्ति हरेः पदम् ।।२६।।

तन-मन वचन से जो निरन्तर श्रीराम का भजन करते हैं वे मनुष्य अनायास ही संसार सागर को तैर कर श्री हरि के धाम में पहूंच जाते है ।।२६।।

मन्त्रमहोदधौ—

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।

विद्याबलं दैवबलं तदेव सीतापतेर्नाम यदा स्मरामि ।।२६।।

वही उत्तम लग्न है, वही श्रेष्ठ दिवस है, वही तारा तथा चन्द्रमा का भी बल है, विद्या का बल तथा देवकृपा का बल भी उसी समय प्राप्त हो जाता है जिस समय में श्री सीतापति का स्मरण करता हूँ ।।२७।।

अनन्त संहितायाम्—

रामनाम प्रभावेण स्वयम्भूः सृजते जगत् ।

बिभर्ति सकलं विष्णुः शिवः संहरते पुनः ।।२८।।

श्रीराम नाम के प्रभाव से ही श्री ब्रह्मा जी जगत् की रचना करते हैं । श्री विष्णु भगवान् सब की रक्षा करते हैं, तथा श्री शिवजी पुनः इसका संहार करते हैं ।।२८।।

श्रुतौ--ब्रह्माण्डानामसंख्यानां ब्रह्माविष्णु हरात्मनाम् ।

उद्भवे प्रलये हेतु राम एव इति श्रुतिः ।।२६।।

ब्रह्मा-विष्णु-शंकरादिकों द्वारा संचालित असंख्य अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों के उद्भव तथा प्रलय का कारण श्रीराम ही हैं, यह श्रुति कहती है ।।२६।।

पुलह संहितायाम्—

सर्ववेदाश्रयत्त्वाच्च सर्वलोकस्य कारणात् ।

ईश्वर प्रतिपाद्यत्वात् अखण्ड ब्रह्मवाचकः ।।३०।।

वीजे यथा स्थितो वृक्षः शाखापल्लव संयुतः ।

तथैव सर्व वेदा हि रकारेषु व्यवस्थिताः ।।३१।।

आदावन्ते तथा मध्ये रकारेषु प्रतिष्ठितम् ।

विश्वं चराचरं सर्वं अवकाशेन नित्यशः ।।३२।।

यथा करण्डे रत्नानि गुप्तान्यन्यैर्न दृश्यते ।

तद्वन्मन्त्राश्च वेदाश्च रकारेषु व्यवस्थिताः ।।३३।।

रकाराज्जायते स्वर्गः अकारात् मर्त्यसंभवः ।
रसातलमकारेण वीजात्त्रैलोक्य संभवः ॥३४॥
रामेत्येकाक्षरं ब्रह्म कारणं प्रणवस्य च ।
तस्मात् ब्रह्मा हरिः शंभुः योगिनः समुपासते ॥३५॥

सभी वेदों का आश्रय होने से, सभी लोकों का कारण होने से तथा परब्रह्म ईश्वर का साक्षात् प्रतिपादक होने से 'राम' नाम अखण्ड ब्रह्म का वाचक है ॥३०॥ बीज में जैसे शाखा पल्लव सहित वृक्ष रहता हैं उसी प्रकार सभी वेद 'रकार' में प्रतिष्ठित है ॥३१॥ यह सम्पूर्ण विश्व आदि अन्त तथा मध्य में सचराचर प्राणियों सहित रकार में ऐसे प्रतिष्ठित हैं, जैसे आकाश में सब की स्थिति है ॥३२॥ जैसे करंड़ (पेटी) में गुप्त रत्न रखे हुए अन्य मनुष्यों को नहीं दीखते हैं, उसी प्रकार सभी मंत्र तथा सभी वेद रकार में निवास करते हैं ॥३३॥ 'रकार' से स्वर्ग, अकार से मृत्युभुवन एवं मकार से रसातल तथा बीज मंत्र से त्रिभुवन उत्पन्न होते हैं ॥३४॥ 'राम' यह एकाक्षर ब्रह्म प्रणव (ओंकार) का भी कारण है, इसीलिये ब्रह्मा-विष्णु सदाशिव तथा योगीजन इसी राम नाम की उपासना करते हैं ॥३५॥

हारितस्मृतौ—

श्रीरामायनमो ह्यतत् तारकं ब्रह्म संज्ञकम् ।
नाम्नां विष्णोः सहस्त्राणां तुल्यमाहुः महामनुः ॥३६॥

"श्रीरामायनमः" यह तारक ब्रह्म संज्ञक महामन्त्र विष्णु के हजारों नामों के बराबर है, ऐसा महान् मनु आदि ने कहा है ॥३६॥

महाशंभु संहितायाम्—

प्रणवं केचिदाहुर्वै वोजं श्रेष्ठं तथा परे ।
तत्तु ते नामवर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतिः ॥३६॥
रामेतिनाममात्रस्य प्रभावमतिदुर्गमम् ।
मृगयन्ति च यद्वेदाः कुतो मन्त्रस्य ते विभो ! ॥३७॥

श्री शंकर जी कहते हैं कि कोई प्रणव को श्रेष्ठ बताते हैं तो कोई बीजको परन्तु वह सब तो आपके नाम से उत्पन्न होते हैं यह मेरी निश्चयात्मक भावना है। मात्र 'राम' आपके इस नाम का ही प्रभाव दुर्गम है।

जिसको वेद आज भी खोजते रहते हैं, तब आपके मन्त्र की महिमा तो कहना ही क्या हैं ? ।।३६।। मनुस्मृति में भी—

सप्तकोटि महामन्त्राश्चित्त विभ्रमकारका: ।

एक एव परोमन्त्र: राम इत्यक्षर द्वयम् ।।३८।।

अन्य देवताओं के चित्त में विभ्रम उत्पन्न करने वाले सात करोड़ मन्त्र हैं परन्तु उनमें परात्पर मन्त्र तो 'राम' इन दो अक्षरों का ही हे ।।३८।।

श्री शुक संहितायाम्—

रामस्याति प्रियं नाम रामेत्येव सनातनम् ।

रात्रिदिवं गुणाग्रेषु भाति वृन्दावने स्थित: ।।३६।।

अकारो वासुदेवश्च मकारश्च महेश्वर: ।

अकारश्च स्वयम्भू: स्यात् रेफोरामस्तु निर्गुण: ।।४०।।

श्रीराम का नित्य सनातन प्यारा नाम 'राम' इतना ही है । जो रात दिन सम्पूर्ण गुणों का अग्रगण्य बन कर वृन्दावन में प्रकाशित हो रहा है ।।३६।। अकार वासुदेव है, मकार शंकर है, दूसरा अकार ब्रह्म है तथा रेफ त्रिगुणातीत स्वयं प्रभु श्रीराम है ।।४०।।

अगस्त्य संहितायाम्—

दीर्घाकारयुतो रेफो रामश्चिद् ब्रह्मकारणम् ।

मस्तु चिज्जीवशक्तीनां कारणं जानकी स्वयम् ।।४१।।

रकारो रामचन्द्रश्च चिन्मयानन्द विग्रह: ।

अकारो जानकी चैव मकारो लक्ष्मण: स्वराट् ।।४२।।

दीर्घ आकार सहित रेफ 'रा' श्रीराम हैं जो सच्चिद् ब्रह्म का कारण है तथा 'मकार' चैतन्य जीवों की शक्ति प्रेरक सबका कारण श्री जानकी जी हैं । रकार सच्चिदानन्दमय प्रभु श्रीरामचन्द्र हैं, अकार श्री जानकी जी हैं तथा 'मकार' सभी जीवों के स्वराट् श्री लक्ष्मण जी हैं ।।४२।।

द्वितीय प्रकरणम्

ग्रन्थकर्तुः मङ्गलाचरणम्

नित्यं नौमि परेश रासरमणं माधुर्य्यलीलापरं-
रूपं राशि गुणाकरं सुखकरं लावण्य शोभावरम् ।
सौन्दर्यं वरशेष चैव सततं विहरन्त सरयूतटे-
सीतासङ्गरसादि मोदकरणं श्रीमाँस्तु सर्वेश्वरम् ।।१।।

मैं नित्य परात्पर परमेश सबमें रमण करने वाले श्रीराम को नमस्कार करता हूँ। जो माधुर्यलीला पारायण हैं, रूप-गुण-सुख तथा लावण्य के धाम हैं, तथा शोभा-सौन्दर्य में सर्व श्रेष्ठ हैं। जिन्होंने वर-वेश धारण किया है अथवा जो अशेष निस्सीम सौन्दर्य की सीमा है। जो सदैव श्री सरयू तट पर श्री सीताजी के साथ प्रेमरस भरे आमोद-विनोद पूर्वक विहार करते रहते हैं, ऐसे श्रीमान् सर्वेश्वर प्रभु श्रीराम को प्रणाम करता हूँ ।।१।।

ऋग्वेदे—

द्वौ सुपर्णा सयुजा सखायौ-
समान वृक्षे पुरुषो निमग्नम् ।
तयोरन्यः पिप्पलं खादन् पश्यन्-
अश्नन् अन्योभिः चाकशीति ।।२।।
दशहस्ताङ्गुलयोः दशपादयोः
द्वौ बाहू आत्मैव पञ्चविंशकः ।।३।।
रामात्संजायते कामः कामाद् विश्वं प्रजायते ।
तस्मात्धनुर्धरात्सर्वे द्विभुजा मूलरूपिणः ।।४।।
नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्-
एको बहूनां यो विदधाति कामान् ।।५।।

एक वृक्ष पर दो समान सखा साथ ही रहते हैं। उनमें एक पीपल के फलों को खाता है तथा अन्यों को भी देखता हुआ प्रकाशित होता है। उसके दो हाथ हैं। दश हाथ की अंगुली हैं, दश ही पग की हैं, यह आत्मा पच्चीस तत्वों का आश्रय है। श्रीराम से ही काम उत्पन्न होता है तथा काम से ही विश्व उत्पन्न होता है अतएव धनुषधारी श्रीराम के अंश होने से सभी अपने मूल रूप में द्विभुज ही हैं। जो नित्यों में नित्य है, चेतनों का चेतन है, जो बहुतों में एक है, सर्वश्रेष्ठ हैं, नाना प्रकार के कार्यों का विधान करता है। वह परब्रह्म श्रीराम है ।।५।।

यश्चाण्डालोऽपि रामेति वाचं वदैत-
तेन सह संवसेत् तेन सह संवदेत् संभुजीयात् ।।६।।

जो चाण्डाल भी श्रीराम ऐसी वाणी बोले अर्थात् निरन्तर श्री राम नाम रटे, उसके साथ निवास करे, उसके साथ प्रेम से वार्तालाप करे, उसके साथ एक पंक्ति में बैठकर भोजन भी करें अर्थात् चाण्डालादिकों के स्पर्श संभाषणादिकों का दोष रामनामानुरागी चाण्डाल के साथ नहीं लगता है ।।६।।

पद्मपुराणे—

विष्णोरेकैक नामानि सर्ववेदाधिकं मतम् ।
तस्मात् कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ।।७।।

भगवान् विष्णु के एक-एक नाम सभी वेदों से अधिक फल देने वाले हैं, उनसे भी करोड़ों गुणा अधिक फल श्री राम नाम से ही प्राप्त होता है ।।६।।

शिवसंहितायाम्—

ब्रह्माण्डानामनन्तानामुद्भवः लय पालनम् ।
रंरंकाराद् भवेन्त्याहो कान्त तवैव का कथा ।।८।।
रकारादि प्रमेयाश्च महता विभुना गुणा ।
उद्भवे प्रलये हेतुः सिन्धोरिव तरङ्गिता ।।९।।
अकाराच्छक्तिका बद्धा मकाराज्जीव रूपकाः ।
अभ्राकाशे यथालीनाः उद्भवन्ति पुनः पुनः ।।१०।।

श्री पार्वती जी कहती हैं, हे कान्त ! जब अनन्त असंख्य ब्रह्माण्डों का उद्भव-प्रलय एवं पालन ररं कार से ही होता है तब हमारी आपकी बात ही क्या है ।।८।। जैसे समुद्र तरंगों का कारण है उसी प्रकाररकार की अप्रमेय शक्ति तथा उसके महान व्यापक गुण ही उद्भव-पालन-प्रलय के कारण हैं ।।९।। अकार से शक्तियां बंधी हुई हैं, मकार से जीवन रूप आच्छादित है । जैसे आकाश में बादल उठते हैं तथा लीन होते रहते हैं, ठीक वैसे ही संसार श्रीराम नाम का ही खेल है ।।१०।।

अथर्वशाखायाम्—

ब्रह्माण्डानामसंख्यानां ब्रह्मविष्णु हरात्मनाम् ।
उद्भवे प्रलये हेतुः राम एव इति श्रुतिः ।।११।।
सृष्टि स्थित्यन्त कराः ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
यस्याद्भुताश्च युक्तांशा रामस्यैव विधीयते ।।१२।।
सहस्रकोटयः सन्ति ब्रह्माण्डातिर्यगुर्ध्वगाः ।
ब्रह्माणो हरयो रुद्राः तत्र तत्र व्यवस्थिताः ।।१३।।
योनि लिङ्गात्मकं विश्वं रामवीर्यप्रतिष्टितम् ।
रामबीज समुद्भूतं ब्रह्म सोमात्मकं जगत् ।।१४।।

ब्रह्मा-विष्णु-शंकरात्मक असंख्य ब्रह्माण्डों के उत्पन्न-पालन-प्रलय के कारण एक श्रीराम ही हैं ऐसा श्रुति का कथन है ।।१२।। सृष्टि-स्थिति तथा प्रलयकर्त्ता ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर जिसकी अद्भुत रचना है तथा जिसके अद्भुत अंश से युक्त हैं वही श्रीराम हैं, ऐसा श्रुति विधान करती हैं ।।१३।। हजारों-करोड़ों ब्रह्माण्ड इस विश्व में ऊपर-नीचे अगल-बगल सर्वत्र हैं । उन सभी ब्रह्माण्डों में श्रीराम की शक्ति से ही ब्रह्मा-विष्णु-शंकर कार्य संचालन करते हैं ।।१३।। सम्पूर्ण विश्व योनि तथा लिंग के द्वारा उत्पन्न होता है । उसमें श्रीराम का वीर्य ही प्रतिष्ठित है । श्रीराम रूपी बीज से ही ब्रह्मा-चन्द्र-अमृत आदि स्वरूपों में जगत् प्रकाशित है ।।१४।।

श्रीरामतापिन्याम् —

यथैव वटबीजस्थः प्राकृतश्च महाद्रुमः ।
तथैव रामबीजस्थं जगदेतत् चराचरम् ।।१५।।

जैसे वट के छोटे से बीज में विशाल वृक्ष रहता है। वैसे ही 'राम्' बीज में सचराचर संसार रहता है ॥१५॥

स्कंदपुराणे–निर्वाणखण्डे—

विष्णु संख्यां न पश्यामि तवरूपाननेकशः ।
चतुरानन रुद्राश्च रामः सत्यपराक्रमः ॥१६॥

हे प्रभो ! सत्यपराक्रम श्रीराम ! आपके अनेकानेक रूपों में ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर की संख्या कितनी है, उसकी इति मिति तो मैं देख ही नहीं रहा हूँ ॥१६॥ शिवसंहितायाम्—

नारायण सहस्राणि कृष्णाद्याः शतकोटयः ।
कोटि कोट्यवताराश्च जाता रामांघ्रि पंकजात् ॥१७॥

॥ इसका अर्थ आगे हो चुका है ॥ तथा च श्रुतौ—

"एकस्तु रामस्यानुस्यूतं सामर्थ्यरूप आसीत् ।
अन्येन त्रिस्वोपक्रान्तत्वात्" ॥१८॥

रमन्ते योगिनोनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परब्रह्माभिधीयते ॥१९॥

एक ही श्रीराम के सामर्थ्य स्वरूप यह समस्त संसार भरपूर है। अन्य सभी त्रिगुणों से आक्रान्त होने से। "रमन्ते योगिनोऽनन्ते" इसका अर्थ पहले आ चुका है ॥१८–१९॥

अन्यत्रापि—

लक्ष्मीनारायणानाञ्च कोटयः समुपासकाः ।
कराङ्गुलि नखोत्पन्ना नारायण दशाकृतः ॥२०॥

श्री लक्ष्मीनारायण जी के करोडों उपासक तथा दश प्रकार के नारायण रूप हाथ की अंगुलियों के नखों से उत्पन्न हुए हैं ॥२०॥

पुलह संहितायाम्—

बीजे यथा स्थितो वृक्ष शाखापल्लव संयुतः ।
तथैव सर्ववेदाश्च रकारेषु व्यवस्थिताः ॥२१॥

रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः ।
रकाराज्जायते शम्भुः रकारात् सर्वशक्तयः ।।२२।।
आदावन्ते तथा मध्ये रकारेषु प्रतिष्ठितम् ।
विश्वं चराचरं सर्वमवकाशेन नित्यशः ।।२३।।
रामेत्येकाक्षरं बीजं कारणं प्रणवस्य च ।
तस्माद् ब्रह्मा हरिः शम्भुः योगिनः समुपासते ।।२४।।

इन श्लोकों के अर्थ पहले हो चुके हैं ।

वाराह पुराणे—

दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जरा जर्जरो-
हारामेण हतोऽस्मि भूमि पतितो जल्पँस्तनूंस्त्यक्तवान् ।
तीर्णो गोष्पद् इव भवार्णवमहो नाम्नः प्रभावात् पुनः-
किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ।।२५।।

इनका भी अर्थ आगे हो चुका हैं ।

पद्मपुराणे—

रामेति वर्णद्वयमादरेण सदास्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः
कलौयुगे कल्मषमानुषाणामन्यत्र धर्मेखलुनाधिकारः ।।२६।।
श्रीराम रामेति रामेति ये वदन्तीह पापिनः ।
हत्याकोटि सहस्त्रैस्तु तानुद्धरति नान्यथा ।।२७।।

इनका अर्थ भी आगे हो चुका है ।

द्विजो वा राक्षसो वाऽपि पापिनो धार्मिकोऽपि वा ।
राम रामेति वचनात् स मुक्तो भव बन्धनात् ।।२८।।

ब्राह्मण हो अथवा राक्षस पापी हो अथवा पुण्यात्मा-धार्मिक, श्रीराम-राम का उच्चारण करने से वह भवबन्धन से छूट जाता है ।।२८।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

रामं भजन्ति निपुणा मनसा वचसाऽपि च ।
अनायासेन संसारं तीर्त्वा यान्ति हरेः पदम् ।।२९।।

जो श्रीराम का मन तथा वचन से भजन करने में निपुण हैं वे अनायास ही इस संसार-सागर को पार कर प्रभु के धाम को चले जाते हैं ।।२९।।

अनन्त संहितायाम्—

> रामनाम प्रभावेण स्वयम्भूः सृजते जगत् ।
> विभर्ति सकलं विष्णुः शिवः संहरते पुनः ।।३०।।
> नदी समुद्रयोर्भेदः शुद्धोदलवणोदकैः ।
> तथा जीवेश्वरौ भिन्नौ विलक्षण गुणान्वितैः ।।३१।।

श्लोक ३० की व्याख्या हो चुकी है । नदी और समुद्र में जैसे शुद्ध और मीठे जल तथा खारे जल का भेद है, छोटे-बड़े का भेद है उसी प्रकार जीव और ईश्वर में भी अंश-अंशीका विलक्षण, दिव्यगुण तथा मायामय गुणों का भेद है, जीव जीव ही है । ईश्वर ईश्वर ही है यही तात्पर्य है ।।३१।।
भागवते–स्कंध ११ अध्याय ११ श्लोक ३–४–५ ।

> एकस्यैव ममांशस्य जीवस्यैव महामते ।
> बन्धोऽस्याविद्ययानादिर्विद्यया च तथेतरः ।।३२।।
> अथ बद्धस्य मुक्तस्य वैलक्षण्यं वदामि ते ।
> विरुद्ध धर्मिणोस्तात स्थितयोरेक धर्मणि ।।३३।।
> विद्याविद्ये ममतनू विद्धयुद्धव शरीरिणाम् ।
> बन्धमोक्षकरी आधे मायया मे विनिर्मिते ।।३४।।

हे महान् बुद्धिमान् ! मेरे अंशभूत चेतन एक ही जीव का अविद्या के संसर्ग से बन्धन तथा विद्या के संसर्ग से मोक्ष होता । अब मैं बद्ध और मुक्त दोनों प्रकार के जीवों का विलक्षण भेद तुमसे कहता हूँ । विरुद्धधर्म होते हुए भी परस्पर दोनों एक ही धर्म पर स्थिर हो जाते हैं । क्योंकि विद्या तथा अविद्या दोनों हमारी ही शक्तियां हैं । अविद्या बन्धन में डालती है तथा विद्या मुक्त करती है । वस्तुतः ये दोनों ही मेरी माया से विनिर्मित हैं । तात्पर्य यह है कि इस माया से मुक्त होना है तो मायापति मुझको भगवान् को पहचान कर शरण में आ जाने से जीव कृतार्थ हो जाता है ।।३२–३४।। इसीलिए कहा गया है कि—

तथा च-आत्मा द्विविधः । परमात्मा जींवश्च । तत्र सर्वेश्वर सर्वज्ञः परमात्मा एक एव । जोवश्च प्रतिशरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च तदुक्तम्-

आत्मा दो प्रकार का है। एक तो परमात्मा तथा दूसरा जीव कहाता है। उसमें सर्वेश्वर प्रभु सर्वज्ञ है, जीव अज्ञ है। परमात्मा एक ही है। जोव प्रति शरीर में भिन्न-भिन्न है। विभु है तथा नित्य है। जैसा कि

श्रीमद्भगवतस्कंध-११ अध्याय ११ श्लोक ६-७। में कहा है—

सुपर्णावितौ सदृशौ सखायौ-
यदृच्छयेतौ कृतनीडौ च वृक्षे।
एकस्तयोः खादति पिप्पलान्नमन्यो-
निरन्नोऽपिवलेन भूयान् ॥३५॥
आत्मानमन्यं स च वेद विद्वान्-
पिप्पलादो न तु पिप्पलादः।
योऽविद्यया युक् स तु नित्य बद्धो-
विद्यामयो यः स तु नित्यमुक्तः ॥३६॥

शरीर रूपी वृक्ष में हृदय रूपी घोंसला बना कर जीव और ईश्वर दोनों निवास करते हैं। ये दोनों ही चेतन हैं तथा कभी न बिछुड़ने वाले सखा हैं। इनका एक ही शरीर वृक्ष पर रहने का कारण लीलामात्र ही है। इतनी समानता होने पर भी इन दोनों में से एक जोवात्मा इस शरीर-वृक्ष के फल, सुख-दुःखों का भोग करता है, परन्तु दूसरा ईश्वर इसका भोग न कर निर्लेप निर्विकार रहता है। संसार के विषयादि सुखों का भोग न करने पर भी ईश्वर ज्ञान-ऐश्वर्य-आनन्दादि सामर्थ्य से युक्त रहता है तथा जीव से सर्वप्रकारेण बलवान बना रहता है ॥३५॥ दूसरी विलक्षणता यह है कि ईश्वर तो अपने वास्तविक स्वरूप को तथा जीव के सहित जगत को भी यथार्थ रूप से जानता है जबकि जीव न तो अपना ही वास्तविक रूप जानता है तथा न ईश्वर और जगत् का ही यथार्थ रूप जान पाता है। इन दोनों में जीव तो अनादि अविद्या के बन्धन में बंधा हुआ नित्यबद्ध है तथा ईश्वर विद्यामय होने से नित्यमुक्त है ॥३६॥

एवं गीदः कर्म गति विसर्गो घ्राणो-
रसो दृक् स्पर्शः श्रुतिश्च ।
सङ्कल्प विज्ञानमथाभिमानः सूत्रं-
रजः सत्त्व तमो विकारः ।।३७।।

यस्मिन्निदं प्रोतमशेषमोतं-
पटोयथातन्तु वितान संस्थः ।
स एष संसार तरुः पुराणः
कर्मात्मकः पुष्पफले प्रसूते ।।३८।।

द्वे अस्य वीजे शत मूलस्त्रिनालः
पञ्चस्कंधः पञ्चरसप्रसूतिः ।
दशैक शाखो द्वि सुपर्णनीड-
स्त्रिवल्कलो द्विफलोऽर्क प्रविष्टः ।।३९।।

अदन्ति चैकं फलमस्य गृध्रा-
ग्रामेचरा एकमरण्यवासाः ।
हंसा य एकं बहुरूपमिज्यैर्मायामयंस्-
वेद स वेद वेदम् ।।४०।।

एवं गुरूपासनयैक भक्त्या-
विद्याकुठारेण शितेन धीरः ।
विवृश्च्य जीवाशयमप्रमत्तः
सम्पद्यचात्मानमथ त्यजास्त्रम् ।।४१।।

—श्रीमद्भागवत्–स्कंध ११ अध्याय १२ श्लोक १९-२१-२४ ।

इस प्रकार बोलना-काम करना-चलना-मलसूत्र त्यागना-सूंघना रस चाखना-देखना-छूना-सुनना-सङ्कल्प–विकल्प करना-विचार पूर्वक समझना-अभिमान करना ये सत्व–रज–तम के सारे विकार व्यवहार सबका ताना-बाना मेरी ही लीला है ।।३७।। जैसे ताने बाने में समूचा वस्त्र ओत-प्रोत है वैसे ही सम्पूर्ण विश्व भी उसी प्रभु में ओत-प्रोत है, परन्तु भेद यही है कि जैसे सूत के बिना वस्त्र का अस्तितव नहीं है, परन्तु

सूत तो वस्त्र के बिना भी रह सकता है वैसे ही ईश्वर के बिना जगत का अस्तित्व नहीं है, परन्तु परमात्मा तो बिना जगत के भी रह सकता है ।।३८।। यह संसार वृक्ष अनादि है, पुरातन है, नित्य है, कर्म-स्वरूप है, यह भोग और मोक्ष स्वरूप दोनों को पुष्प तथा फल के रूप में उत्पन्न करता है ।।३९।। इस संसार वृक्ष के पाप तथा पुण्य दो फल हैं। अनन्त वासनायें ही इसकी सैकडों जड़ें हैं। तीनों गुण उसकी मोटी नालें हैं। पञ्चभूत इसकी मोटी-मोटी डालियां हैं। शब्द-स्पर्शादि ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ग्राह्य पञ्चरस हैं। एकादश इन्द्रियां इसकी शाखायें हैं, जीव और ईश्वर दो पक्षी इस पर खोंता (घोंसला) बनाकर निवास करते हैं। वात-कफ-पित्त तीन प्रकार की इस वृक्ष की छालें हैं। सुख तथा दुःख दो प्रकार के फल हैं। यह विशाल संसार वृक्ष सूर्यमण्डल पर्यन्त पहुंच गया है ।।४०।। उसमें एक गृह-संसार में फंसे हुए जीवात्मा तो इसके विषय-सुखों में आसक्त रहने के कारण गीध के समान हैं। दूसरे परमहंस विख्यात सन्त अरण्य वासी होकर परमात्मा का चिन्तन करते हैं, वे राजहंस के समान हैं, तथा वे ही यथार्थ आत्मसुख भोगते हैं। हे उद्धव! मैं तो एक ही हूँ, परन्तु इस मायामय जगत् में अनेक रूपों से मैं पूजनीय होता हूँ। इस रहस्य को जो सन्त गुरु की कृपा से जान लेता है वही वेद के यथार्थ रहस्य को जानता है ।।४०।। हे उद्धव! तुम भी गुरुदेव की उपासना द्वारा प्राप्त अनन्य भक्ति स्वरूप तीव्र चोखी धारवाली कुल्हाड़ी लेकर धैर्य तथा सावधानी से इस संसार वृक्ष को काट डालो, अर्थात् जीवात्मा को नष्ट करने वाले अविद्या बन्धन को काट डालो, तथा आत्मा के यथार्थ स्वरूप को प्राप्त कर संसार को काटने वाली भावना-वृत्ति को भी त्याग दो। "सियाराम मय सब जग जानी। करौं प्रणाम जोरि जुग पानी ।।" "मैं सेवक सचराचर रूप स्वामी भगवन्त" भाव में दृढ हो जाओ ।।४१।। भक्तिरस शास्त्रों में जीव तथा ईश्वर का सम्मिलन होने पर परमधाम में कैसा स्वरूप होता है इसका वर्णन श्री शिवसंहिता में बताया है—

द्विभुजौ द्विपदौ द्वि नेत्रे वक्त्रमेकन्तु मन्यताम् ।
अन्यथा कथनेन चैव वरस्यापि चिदात्मनि ।।४२।।

चिद्रूपं परमोदारं जीवेशयोः सनातनम् ।
द्विभुजं मधुरं भूत्वा कारणंरूप मेव च ।।४३।।

दोर्दण्ड चण्ड कोदण्ड शरश्चण्डं महाभुजम् ।
कन्दर्प कोटि लावण्यं रमणीयं मनोहरम् ।।४४।।

जीवात्मा भव-बन्धन से छूट कर जब भगवद्धाम में पहुँचता है तब उसको अपने प्रभु के समान ही दिव्यरूप प्राप्त होता है, जो दो भुजा वाला, दो पांव वाला, दो नेत्र तथा एक मुखारविन्द वाला होता है। अन्यथा कथन से तो चिदात्मा परमात्मा के स्वरूप का भी भ्रमित ज्ञान हो सकता है। जीव तथा ईश्वर का नित्य सनातन सच्चिदानन्द द्विभुज मधुर स्वरूप ही है, वही कारण का भी महा कारण है। अपनी प्रबल प्रतापी भुजाओं में प्रचण्ड कोदण्ड धारण किये हुए महान् भुजा वाले प्रभु का करोड़ों कामदेव से भी अधिक रूप लावण्य सम्पन्न परम रमणीय मनोहर स्वरूप है ।।४२-४४।।

श्रीहनुमत्संहितायाम्—

सर्व गन्धयुताश्चैव मद विह्वलते क्षणाः ।
रमणीय द्विभुजश्चैव जीवेश्वरश्च नित्यशः ।।४५।।
आत्मतुल्य गुणोपेतान स्वरूपान् पुरुषान् वरान् ।
श्यामलान् सस्मितमुखान् सर्वाभरणभूषितान् ।।४६।।
किशोरान्कमनीयांश्च सर्वविद्याविशारदान् ।
स्वरूपं नित्यग्रामांश्च किरीट कुण्डलान्वितान् ।।४७।।

नित्य धाम प्राप्त प्रभु के परिकर मुक्तात्मा सर्वसुगन्ध सम्पन्न हैं, प्रेमरस में विह्वल नेत्र वाले हैं, रमणीय हैं, द्विभुज हैं। ईश्वर प्राप्ति करने पर नित्य ही उनके समान दिव्यगुणों से सम्पन्न हो गये हैं। ऐसे श्रेष्ठ पुरुष अपने नित्य स्वरूप को प्राप्त हैं, सभी श्याम सुन्दर प्रसन्न हँसमुख हैं, कमनीय हैं, सभी अलङ्कारों से विभूषित हैं, किशोर अवस्था वाले हैं, सर्व विद्याओं के विशेषज्ञ हैं, किरीट कुण्डल धारण किये हुए हैं, ऐसे नित्यधाम निवासियों का नित्य एकरस अखण्ड रहता है ।।४५-४७।।

अन्यशास्त्रेऽपि—

मायावादमतांधकारमुषितः प्रज्ञोऽस्मि यस्मादहं-
ब्रह्मास्मीति वचो मुहुर्वदसिरे जीवत्वमुन्मत्तवत् ।

ऐश्वर्य्यं तव कुत्र कुत्र विभूता सर्वज्ञता ते कुतः
तन्मेरोरिव सर्षपेण हि भिदा जीव त्वया ब्रह्मणः ।।४८।।

मायावाद के घनान्धकार में भटकता हुआ, मैं प्रज्ञ हूँ मैं ही ब्रह्म हूँ ऐसा उन्मत्त की भांति हे जीव ! तू बारंबार क्यों बोलता है ? क्या तेरा ऐश्वर्य ब्रह्म के समान है ? तेरी सर्वज्ञता और ऐश्वर्य कहां चला गया है ? तेरी और ब्रह्म की समता कैसे हो सकती है ? क्या सरसों का एक दाना सुमेरु पर्वत के समान कहा जा सकता है ।।४८।।

परिच्छिन्नो जीव त्वमसि स खलु व्यापकमहो-
त्वमेकत्रस्त्राता भवसि रूहि सर्वत्र सततम् ।
सुखी दुःखी त्वं रे क्षणिक स सुखी सर्व समये-
कथं सोऽहं वाक्यं वदसि वद लज्जां न कुरुषे ।।४९।।

तू तो परिच्छिन्न एक देशीय जीव है, वह तो सर्वव्यापक परमात्मा है । तुम एक जगह किसी की नाम मात्र ही रक्षा कर सकते हो, वह तो सर्वत्र सदैव संरक्षण परायण है । तुम तो कभी सुखी हो कभी दुखी हो, क्षणभंगुर सुखी दीखते हो, वह तो सदैव सर्वत्र परमसुख का सागर है । तब व्यर्थ ही झूठमूंठ सोऽहं सोऽहं क्यों बोलते हो ? ऐसा बोलने में क्या लज्जा भी नहीं आती है ? ।।४९।।

येन व्याप्तमखण्डमण्डलमिदं ब्रह्माण्ड भाण्डादिकं-
रे रे मन्दमते त्वयाकथमिदं सोऽहं वचः कत्थ्यते ।
पश्य त्वं निजवैभवं सुहृदरे कृत्वामतिं निश्चलां-
आह किं मशकोदरे प्रविशति श्रोद्दामदिग्दन्तिनः ।।५०।।

जिसके द्वारा यह अखण्ड ब्रह्माण्ड मण्डल व्याप्त है, रे रे मन्दबुद्धि मूर्खराज ! वह तुम ही हो, ऐसा यह सोऽहं सोऽहं मिथ्या वचन क्यों कथन करता है ? हे मित्र ! तुम एकाग्रचित्त से विचार करके पहले वैभव का विचार करो कि—क्या एक मच्छर के पेट में मदोन्मत्त हाथी प्रवेश कर सकता है ? अर्थात् तुम मच्छर के समान हो, क्या हाथी जैसे महान् प्रभु का ऐश्वर्य तुम दिखा सकते हो ? ।।५०।।

वश्यत्वं कुत आगतः कथं रे संसारबन्धः क्रमः
तत्त्वं तत्परिचिन्तय स्वहृदये भ्रान्तस्य मार्गंत्यज ।

सोऽहं मा वद सेव्य सेवकतया नित्यं भज श्रीप्रभुं-
तेन स्यात्तव सद्गति ध्रुवमधः पातो भवेदन्यथा ।।५१।।

अच्छा यह तो बतादे कि ऐसे सर्व सम्राट तुझ परमात्मा को पराधीन किसने बना लिया ? और यह संसार बंधन में कैसे बंध गया ? इसका विचार कर । रे मूढ ! भ्रान्त भूले भटके का मार्ग त्याग कर परम तत्व परमात्मा का शान्त मन से चिन्तवन कर तो तेरा बेड़ा पार हो जायेगा । सोऽहं सोऽहं बोलना छोड़ दे, सेवक-सेव्य भाव से दासोऽहं दासोऽहं बोला कर । नित्य निरन्तर श्री प्रभु का भजन कर, सेवा कर । उसी से तेरी सद्गति होगी, नहीं तो निश्चय तेरा अधःपतन हो जायगा, यह ठीक से समझ ले ।।५१।।

अद्वैताख्यमतं विहाय झटिति द्वैते प्रवृत्तोभव-
स्वान्ते सम्प्रति व्यादिते यदि हरावेकान्तभक्तिस्तव ।
वाक्यं नार्हति पञ्चरुचि विषयेऽयन्यत्र सर्वत्र च-
ज्ञात्वा वैष्णवतन्त्रशक्तिमखिलंनिर्णीयतां यद् हितम् ।।५२।।

नाना योनिषुगर्भवास विषयः दुःखं महत्प्राप्यते-
स्वर्गेवा नरके पुनःपुनरहो जीवत्वया भ्राम्यते ।
सोऽहं ज्ञानमिदं भ्रमस्तव भजत्वं पाद पद्मं प्रभोः
तस्याऽहं किल सेवकः समभवत् त्रैलोक्य नाथो यतः ।।५३।।

हे सखे ! अद्वैतवाद नाम का सिद्धान्त त्याग कर द्वैत भाव में "मैं सेवक स्वामी सियनाहू" भावना दृढ़ कर भक्ति-मार्ग में प्रवृत्त हो जा । यदि तुम्हारे अन्तःकरण में श्रीहरि के चरणारविन्दों की भक्ति जागृत हो जाय तब ऐसा वाक्य कभी न बोलेगा । अतः श्री वैष्णव शास्त्र का तात्पर्य भलि भांति विचार कर अपना कल्याण किस मार्ग से होगा इसका निर्णय कर ले ।।५२।। अनेक प्रकार की योनियों में भटकना, गर्भ-जन्म-मृत्यु की महान् वेदना भोगना, स्वर्ग-नरक-मृत्यु-भुवन में बारंबार आना-जाना, परवश होकर सहने वाला जीव "सोऽहं-सोऽहं बोलता है वह केवल भ्रम मात्र ही है, तू तो प्रभु के पावन पाद-पद्मों का भजन कर, जो तीनों लोकों का नाथ है उसका मैं सेवक हूँ । यही भावना दृढ़ करले तो बेड़ा पार हो जायगा ।।५३।।

न जायते म्रियते वा कदाचित्-
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो-
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।५४।।

गीतोपनिषदि–अध्याय २ श्लोक २० ।

यह जीवात्मा न जन्म लेता हैं न मरता हैं, ये न कभी न हुआ है न होता है, न होगा, यह तो अजन्मा है, नित्य है, शाश्वत है । यह पुरातन है, शरीर के मर जाने पर भी यह मरता नहीं है ।।५४।।

महारामायणे–सर्ग ५० श्लोक २१–२६ ।

श्रीरामं ये च हित्वा खलमति निरता ब्रह्मजीवं वदन्ति-
ते मूढा नास्तिकास्ते शुभगुणरहिता सर्वबुद्धयातिरिक्ताः ।
पापिष्ठा धर्महीना गुरुजन विमुखा वेदशास्त्रे विरुद्धा–
स्ते हित्वा गांगं रविकिरणजलं पान्तुमिच्छन्त्यतृप्ताः ।।५५।।

ये मर्त्या रामपादौ सुखप्रदविमलौ संविहायार्तबन्धोः
ते मूढा बोध हेतुं घृतपरिघटने वारिमन्थानयुक्ताः ।
योब्रह्मास्मीति नित्यं वदन्ति हृदि विना रामचन्द्रांघ्रिपद्मं–
ते बुद्धयात्यक्तपोतास्तृणपरिनिचये सिंधुमुग्रं तरन्ति ।।५६।।

श्री शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती ! जो श्रीराम भक्ति का त्याग कर खलबुद्धि वाले मतवादियों के चक्कर में पड़कर जीव ही ब्रह्म है, ऐसा कहते हैं वे मूढ हैं, नास्तिक हैं, शुभ गुणों से रहित हैं, धर्म-कर्म विहीन हैं, गुरुजनों से विमुख हैं तथा वेद शास्त्र के विरुद्ध हैं । वे गंगाजी के निर्मल जल का त्याग कर ओसकण पीकर प्यास बुझाने की चाहना करने वाले हैं ।।५५।। जो श्री रामचन्द्र जी के चरणारविन्दों का त्याग कर, दीन दयालु आरति हरण प्रभु को छोड़ कर केवल रूखा-सूखा ज्ञान प्राप्ति के लिये परिश्रम करते रहते हैं वे घी निकालने के लिये पानी मथने वाले मूर्ख के समान हैं । जिनके हृदय में श्रीराम जी के चरण कमल का निवास तो है ही नहीं; केवल "अहं ब्रह्मास्मि-अहं ब्रह्मास्मि" रटते रहते

हैं वे सुदृढ जहाज का परित्याग कर घास के बोझे पर दुस्तर महासागर पार करने वाले के समान बुद्धिहीन है ।।५६।।

ये केवलाद्वैत मतानुरक्ताः
श्रीराममूर्तिं विमलां विहाय ।
ते स्वामदृश्यां हरिदश्वमूर्तिम्
पश्यन्ति मूढाः प्रतिबिम्ब कुम्भे ।।५७।।

ये रामभक्ति सुविहायरम्याम्-
ज्ञाने रताप्रतिदिनं परिक्लिष्ट मार्गे ।
आरान्महेन्द्रसुरभिं परिहृत्यमूर्खा-
अर्कं भजन्ति सुभगे सुख दुग्ध हेतोः ।।५८।।

जो श्रीराम जी की निर्मल मूर्ति की आराधना त्याग कर केवल अद्वैतमतवाद में अनुरक्त हैं, वे प्रत्यक्ष सूर्यनारायण का दर्शन न करके घड़े के पानी में पड़ते हुए सूर्य के प्रतिबिम्ब को देखने की चेष्टा करने वालों जैसे बुद्धिहीन हैं ।।५७।। जो परम रमणीय श्रीराम भक्ति को त्याग कर अत्यन्त क्लेशमय ज्ञान के मार्ग में प्रतिदिन भटकते रहते हैं, वे घर में निवास करती हुई कामधेनु का परित्याग कर आक (मंदार) के पत्तों को तोड़ कर दूध पाने का प्रयत्न करने वाले जैसे अज्ञानी हैं ।।५८।।

त्यक्त्वा श्रीरघुनन्दनं परतरं सद्ज्ञानरूपं तथा—
ब्रह्मण्येव वदन्ति ये सदसतोः पूर्णं सदाकाशवत् ।
ते वै तण्डुलहेतवे तुषमहो निघ्नन्ति दुर्बुद्धयः-
छित्वामूलमुपाश्रयन्ति च दलं तैः सद्गुरुर्नोकृतः ।।५९।।

किं वर्णयामि विमले बहुभिः प्रकारैः
सीतापतेर्विगतज्ञान विशेष सर्वम् ।
ज्ञानं तदेव कुसुमं च यथा न भोग्यं--
सत्यं वदामि च तदा न सुखं च स्वप्ने ।।६०।।

जो परात्पर पूर्ण ब्रह्म, सम्यक् सद्ज्ञान स्वरूप, श्री रघुनाथ जी का चरणाश्रय त्याग कर सत्-असत् से पूर्ण आकाशवत् ब्रह्म का ज्ञान बताते

हैं, वे चावल के लिए धान को छोड़ कर केवल भूसा-छिलका कूटने वाले के समान है तथा वृक्ष की जड़ काट कर पत्तों की छाया में आराम चाहने वालों के समान दुर्बुद्धि है ।।५६।।

श्री शिवजी कहते हैं कि हे निर्मल हृदय पार्वति ! मैं अनेकों प्रकार से कितना समझाऊँ ? इतना ही समझले कि-श्री सीतापति प्रभु श्रीराम को जाने बिना जो कुछ भी अन्य श्रेष्ठ तत्त्व जानना चाहता है वह आकाश के फूल को पाने की इच्छा रखने वाले के समान कभी स्वप्न में भी सुख नहीं पा सकता है, यह मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ।।६०।।

"इत्थं जीवेशय पुरुषः नित्यं बहु भेदाख्यः
अरूपं अभाव नित्य रूप प्रयोज्यम् ।"

इस प्रकार जीवात्मा परमात्मा के स्वरूप का वर्णन शास्त्रों में आता है सो विचारना चाहिये ।
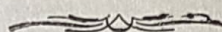
परस्वरूप वर्णनम्

अथर्व शाखायाम्—

यस्यांशेनैव संजाता ब्रह्मा विष्णु महेश्वराः ।

अपिजातो महाविष्णुर्यस्य दिव्यांश एव च ।।६१।।

जिसके अंशांश से ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरों का आविर्भाव हुआ है तथा महाविष्णु भी जिसके दिव्य अंश से प्रकट हुए हैं वे श्रीराम ही हैं ।।६१।।

अथर्वण—उत्तरार्धे श्रुतिः—

कार्य कारणयोः पर परमपुरुषोत्त-

मस्यावरः रामो दाशरथिर्बभूव ।।६२।।

कार्य कारण से पर परम पुरुषोत्तम प्रभु श्रीराम ही दशरथ नन्दन हुए हैं ।।६२।। श्री रामोत्तर तापिन्याम्—

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् अद्वैतपरमानन्दात्माः

यः परं भुर्भुवः स्वः तस्मै वै नमो नमः ।।६३।।

जो श्री रामचन्द्र जी हैं वही अद्वैतस्वरूप परमानन्द के आत्मा तथा स्वर्ग-पृथ्वी, पाताल का परमाश्रय हैं उनको बारम्बार नमस्कार है ।।६३।। श्रुत्याहः—

राम एव परं प्राहुः परमात्माभिधीयते ।

रामात्परंतरं नास्ति यत्किञ्चत् स्थूल सूक्ष्म च ।।६४।।

ब्रह्मा—विष्णु शिवाः सर्वे इन्द्राग्नि वरुणो यमः ।

सूर्यचन्द्रश्च खं भूमिरवकाशे व्यवस्थितम् ।।६५।।

दश हस्तङ्गुलयो दशपादादि—

द्वौ बाहू आत्मा वै पञ्च विंशकः ।।६६।।

श्रीराम ही पर ब्रह्म कहे जाते हैं तथा वही परमात्मा के नाम से भी पहचाने जाते हैं। राम से परात्पर स्थूल-सूक्ष्म-कारण अन्य कुछ

किञ्चिन्मात्र भी नहीं है ॥६४॥ ब्रह्मा-विष्णु-शिव-इन्द्र-चन्द्र-अग्नि-वरुण यम-सूर्य-पृथ्वी-आकाश सब कुछ उनके ही आधार पर व्यवस्थित है ॥६५॥ दश हाथ की तथा दश पांव की अंगुलियां, दो भुजा वाला आत्मा पच्चीस तत्वों के अन्दर व्यापक है ॥६६॥ अथर्वणे—

सीता रामौ तन्मयावत्र पूज्यौ—
जातान्याभ्यां भुवनानि द्विसप्त ।
स्थितानि च प्रहृतान्येव तेषु—
ततो रामो मानवो माययाधात् ॥६७॥

श्री सीताराम युगल प्रभु का यहां पूजन करना चाहिए, क्योंकि इन्हीं युगल प्रभु से सभी भुवन उत्पन्न हुए हैं। उनके आधार पर ही स्थिर हैं, अन्त में वे ही इसका संहार करते हैं। अतएव श्रीराम माया-मनुष्य का रूप लिये हुए भी जगत् के विधाता हैं ॥६७॥

श्रीमद् वाल्मीकि रामायणे—

रामस्य पुरुषो लोके सत्यः धर्मः यशोगुणैः ।
समो न विद्यते कश्चित् विशेषश्च कुतः पुनः ॥६८॥
आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ।
योऽहं यश्च यतश्चाहं भगवाँस्तद् ब्रवीहि मे ॥६९॥
सूर्यस्यापि भवेत्सूर्यो ह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुः ।
श्रियःश्रीश्च भवेदग्रया कीर्त्याः कीर्तिः क्षमा क्षमा ॥७०॥
दैवतं दैवतानाञ्च भूतानां भूत सत्तमः ।
तस्य के ह्यगुणाः देवि देशे वाप्यथवा वने ॥७१॥
पृथिव्या सह वैदेह्या श्रिया च पुरुषर्षभः ।
क्षिप्रं तिसृभिरेताभिः सहरामोऽभिषेक्ष्यते ॥७२॥

इनकी टीका पीछे देखें ।

वृद्ध मनुस्मृतौ—

अंशभूतौ विराट् ब्रह्म विष्णुरुद्रास्तथापरे ।
ब्रह्मतेजो घनीभूतः वर्तते जानकीपतिः ॥७३॥

विराट ब्रह्म-विधि, हरि, हर इत्यादि सभी जिनके घनीभूत ब्रह्मतेज के अंशभूत हैं वह श्री जानकी पति हैं ।।७३।।

श्री वशिष्ठ संहितायाम्—

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात् परात्परादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामो दाशरथिः स्वराट् ।।७४।।
यस्यानन्तावताराश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मेशाः परब्रह्मस्वरूप सः ।।७५।।

महारामायणे—

येऽवतारा विभोर्मुग्धे जायन्ते विश्वहेतवे ।
तेऽपि रामांध्रि चिन्हेभ्यः सम्भवन्ति पुनः पुनः ।।७६।।
सर्वे चांशकलाभूताः शक्तिवीर्यकलान्विताः ।
रामचन्द्रघ्र्यंशजाताः रामस्तु भगवान् स्वयम् ।।७७।।

स्कंधपुराणे निर्वाण खण्डे—

विष्णोः संख्यां न पश्यामि तथारुद्राननेकशः ।
चतुराननस्य ब्रह्मणश्च रामः सत्यपराक्रमा ।।७८।।

इनकी टीका पीछे हो चुकी है ।

सुन्दरी तन्त्रे—श्री जानकी वाक्यं—जनकं प्रति—

कृत्यमेतत् जगत्सर्वं कार्यकारणरूपकम् ।
द्विभुजात् राघवात् नित्यात् सर्वमतेत्प्रवर्तते ।।७९।।
पूर्व सिद्धं च सिद्धार्थं रामचन्द्रांश विग्रहम् ।
दिव्येन चक्षुषा पश्य प्रमाणं शाङ्करी पुरी ।।८०।।
स्वप्रकाशते नित्य रूपो रामो माया दयात्सवान् ।
इन्द्रनीलमणि स्निग्धः श्यामसुन्दर विग्रहः ।।८१।।
द्विभुजं मधुरं स्निग्धं कृपापाङ्ग विमोक्षणम् ।
कंदर्पं कोटि लावण्यं रमणीमनो मोहनम् ।।८२।।

लिंगरूपपरो योऽसौ नित्यं सा राघवी तनुः ।
योनिरूपा तु या शक्तिः दिव्या सा मामश्री तनुः ।।८३।।
दिव्याभरण संपन्नः दिव्यायुध समन्वितः ।
सर्वशक्ति कलानाथः द्विभुजो रघुनन्दनः ।।८४।।
ग्रहं शक्तिः शिवोरामः इति वेद प्रगीयते ।
साम्प्रतं पश्यतां विश्वं शिवः शक्ति द्वयात्मकः ।।८५।।
ममलिङ्ग धरा नार्यः पुरुषारामलिङ्गतः ।
ग्रावाभ्यां चिन्हितं विश्वं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।।८६।।
योनि लिङ्गात्मकं विश्वं रामवीर्यं प्रतिष्ठितम् ।
रामबीजसमुद्भूतं बहुशो मामकं जगत् ।।८७।।

नित्य द्विभुज श्रीराघवेन्द्र प्रभु के द्वारा ही इस कार्य-कारण रूप सम्पूर्ण जगत की रचना हुई है, जो इस समय वर्तमान है । वह सर्व उन्हीं की लीला है ।।७९।। श्री रामचन्द्र को ग्रंश रूप यह सब पूर्व काल से ही सिद्ध है । सर्वप्रकारेण पूर्ण है । इसको दिव्य नेत्रों से देखो, इसका प्रमाण शंकर भगवान की काशीपुरी हैं ।।८०।। श्रीराम सदैव नित्य स्वयं प्रकाशित हैं, दया-माया से परिपूर्ण हैं । इन्द्र-नीलमणि के समान सु-चिक्कन श्याम सुन्दर विग्रह हैं ।।८१।। दो भुजा वाले, मधु मनोहर, प्रेमियों को स्नेहपूर्ण, कृपा से भरी हुई प्रेम दृष्टि से देख रहे हैं । करोड़ों कामदेव से भी श्रेष्ठ सौन्दर्य लावण्य स्वरूप हैं, ग्रतएव रमणी जनों के मन को मोहित करने वाले हैं ।।८२।। लिङ्ग रूप धारण करने वाले शिव श्री राघव के शरीर से हैं तथा योनि रूप धारी जो दिव्य शक्ति है वह मेरे शरीर से उत्पन्न है ।।८३।। दिव्यालंकार विभूषण धारण किये दिव्य शार्ङ्ग धनुष चापादि ग्रायुध धारण किये हुए सर्व शक्ति तथा कलाग्रों के स्वामी श्री रघुनन्दन का द्विभुज स्वरूप परात्पर रूप है ।।८४।। श्री जानकी जी श्री जनक जी से कहती हैं कि—हम ही शक्ति स्वरूपा हैं तथा श्रीराम ही शिव स्वरूप हैं, वेदों में इसी प्रकार के गीत गाये गये है । ग्राप इस समय देखिये सम्पूर्ण विश्व शिव-शक्ति स्वरूप दीख रहा है ।८५।। मेरे चिन्ह को धारण करने वाली नारियां हैं तथा राम के चिन्ह धारण करने वाले पुरुष मात्र हैं । इस प्रकार हम दोनों के चिन्हों से ही सम्पूर्ण

विश्व चिन्हित हो रहा है, यह बात मैं सत्य-सत्य कहती हूँ ।।८६।। योनि लिङ्गात्मक सम्पूर्ण विश्व श्रीराम के वीर्य से ही प्रतिष्ठित है । श्रीराम के बीज द्वारा मेरे संयोग से ये अनन्त प्रकार का जगत प्रत्यक्ष प्रकाशित हो रहा है ।।८७।।

शिवसंहितायाम्–अध्याय २ श्लोक ६–१३–१४ ।

नान्यं रामात्परं तत्त्वं कौशल्यानन्दवर्धनात् ।
जानकीवल्लभात् काल त्रिषु देशेषु दृश्यते ।।८८।।
रामनाम्ना समं नान्यद् नाम विष्णोः शिवस्य च ।
अन्येषां तु कथं नाम्नां सत्यं सत्यमिहोच्यते ।।८९।।
रामनाम्ना शिवः काश्यां भूत्वापूतः शिवः स्वयम् ।
तेन तारयते जीव राशीन् काशीश्वरः सदा ।।९०।।

श्री हनुमान जी से महर्षि अगस्त्य जी कहते हैं—

श्रीराम से परात्पर अन्य कोई तत्व नहीं है । श्री कौशल्यानन्द-वर्धन श्री जानकी वल्लभ राम से श्रेष्ठ त्रिभुवन तीन काल में कहीं भी कुछ नहीं दीखता है ।।८८।। श्रीराम नाम के समान श्री विष्णु और शंकर जी के नाम भी नहीं हो सकते हैं, तो अन्य देवताओं के नाम मन्त्र श्रीराम के बराबर कैसे हो सकते हैं, यह मैं सत्य सत्य कहता हूँ ।।८९।। श्रीराम नाम की कृपा से ही भूतनाथ भगवान शंकर श्मशान वासी होकर के भी काशी में परम पावन बने हुए हैं । इतना ही नहीं, इसी नाम के प्रताप से काशीपति शंकर काशी में मरने वाले अनन्त जीवों को तारते रहते हैं ।।९०।।

अयोध्यापतिरेव स्यात् पतीनां पतिरीश्वरः ।
अन्याषां मथुरादीनां रामांशाः पतयो यतः ।।९१।।
द्विभुजो जानकीजानिः सदासर्वत्रशोभते ।
भक्तेच्छातो भवेदेव वैकुण्ठेतु चतुर्भुजः ।।९२।।
परा सा रूप लावण्या नित्यं द्विभुजमेवतत् ।
परमं रससम्पन्नं ध्येयं ध्येयविदां सदा ।।९३।।

—शिव संहिता–अध्याय २ श्लोक १७–१९–२० ।

अयोध्या के पति श्रीराम ही हैं, जो पतियों के भी पति परमेश्वर हैं, क्योंकि अन्य मथुरादिक मोक्षप्रद पुरियों के पति श्रीराम जी के अंश-भूत हैं, अतएव श्री जानकी नाथ रघुनाथ ही सदैव सर्वत्र सुशोभित हो रहे है। भक्तों की भावना इच्छा पूर्ण करने के लिये वही प्रभु श्रीराम ही वैकुण्ठ में चतुर्भुज स्वरूप धारण करके विराजते हैं। श्री जानकी जी जो परात्परा रूप लावण्य सम्पन्ना प्रभु की प्राण वल्लभा हैं, वे भी नित्य द्विभुज रूप में ही विराजती हैं। अतएव यही नित्य द्विभुज श्रीराम रूप ही ध्यान के रहस्य को जानने वालों को भक्तजनों का परम ध्येय स्वरूप है ॥९३॥

मत्स्य कूर्म किरिर्नैको नार्रसिंहोऽप्यनेकधा ।
वैकुण्ठोऽपि हयग्रीवो हरिर्वामनकेशवौ ॥९४॥
यज्ञो नारायणोधर्मपुत्रो नरवरोऽपि सः ।
देवकीनन्दनः कृष्णो वासुदेवो बलोऽपि च ॥९५॥
पृश्निगर्भो मधुन्माथी गोविन्दो माधवोऽपि च ।
स्वयं ज्योतिः परोनन्तः संकर्षण इलापतिः ॥९६॥
प्रद्युम्नोप्यनिरुद्धश्च व्यूहासर्वेपि सर्वदा ।
रामं सहोपतिष्ठन्ते रामादेश व्यवस्थिताः ॥९७॥
एतैरन्यैश्चसंसेव्यो रामो नाम महेश्वरः ।
तेषामैश्वर्यदातृत्त्वात् मूलत्त्वाच्च निरीश्वरः ॥९८॥

—शिवसंहिता अध्याय २, श्लोक २४–२८ ।

मत्स्य-कूर्म-वराह-नरसिंह तथा अनेक प्रकार के भगवत् स्वरूप-वकुण्ठ-हयग्रीव-हरि–वामन-केशव–यज्ञनारायण--नरनारायण–देवकीनन्दन श्री कृष्ण-वासुदेव-बलराम–पृष्णि-गर्भ-मधुसूदन-गोविन्द–माधव-संकर्षण–अनन्त, इलापति (पृथु) प्रद्युम्न-अनिरुद्धादिक व्यूह ये सभी सर्वदा ही श्रीराम के आदेश का पालन करते हुए श्रीराम के साथ परिकर रूप से विराजते है। इन सबके सहित अन्य सभी देव-देवियों सहित श्रीराम ही महान् ईश्वर के रूप में सेवित होते हैं। इन सभी को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले मूल पुरुप होने से श्रीराम निरीश्वर हैं अर्थात् उनका ईश्वर कोई नहीं वही सर्वेश्वर है ॥९४–९८ ॥

शिव संहिता, अ० २ श्लोक २९–३०–

इन्द्रनामा च इन्द्राणां पतिः साक्षी गतिः प्रभुः ।
विष्णु स्वयं सविष्णूनां पतिर्वेदान्तकृद् विभुः ॥९९॥
ब्रह्मा स ब्रह्मणांकर्ता प्रजापति पतिर्गतिः ।
रुद्राणां स पतो रुद्रो रुद्रकोटिनियामकः ॥१००॥

इन्द्रों में सभी इन्द्रों के पति साक्षी परमगति प्रभु श्रीराम ही महेन्द्र हैं। विष्णु स्वरूपों में वेद-वेदान्त कर्त्ता व्यापक प्रभु महाविष्णु हैं। प्रजापति ब्रह्माओं के कर्ता-धर्ता पति तथा एक मात्र गति महाब्रह्मा है उसी प्रकार करोड़ों रुद्रों के नियामक रुद्रों के पति महारुद्र भी प्रभु श्रीराम ही हैं ॥९९–१००॥

चन्द्रादित्य सहस्त्राणि रुद्रकोटि शतानि च ।
इन्द्रकोटि सहस्त्राणि विष्णु कोटि शतानि च ॥१०१॥
ब्रह्म कोटि सहस्त्राणि दुर्गा कोटि शतानि च ।
महा भैरवकल्पानि कोटयर्बुद शतानि च ॥१०२॥
अवतार सहस्त्राणि भक्त कोटि शतानि च ।
गन्धर्वाणां सहस्त्राणि देव कोटि शतानि च ॥१०३॥
वेदाः पुराण शास्त्राणि तीर्थ कोटि शतानि च ।
देव ब्रह्म महर्षीणां कोटि कोटि शतानि च ॥१०४॥
सभार्यस्य निषेवन्ते स श्रीरामहमीरितः ॥

—शिव संहिता अध्याय २ श्लोक ३१–३४।

हजारों सूर्य-चन्द्र-सौ करोड़ रुद्र, हजारों इन्द्र, सकड़ों करोड़ विष्णु, हजारों ब्रह्मा-सैकड़ों कोटि दुर्गा, महा भैरव आदि अरबों हजारों अवतार तथा कोटि-कोटि उन अवतारों के भक्त, सहस्त्रों गंधर्व तथा अरबों देवगण, वेद-पुराण शास्त्र तथा करोड़ों करोड़ों तीर्थ, देव-ब्राह्मण-महर्षि आदि करोड़ों करोड़ों जिनकी निरन्तर सेवा करते हैं वह प्रभु श्रीराम इस नाम से वर्णित होते हैं, ज्ञात होते हैं ॥१०१–१०४।

यं वेदान्त विदो ब्रह्म वदन्ति ब्रह्म वादिनः ।
परमात्मेति च योगीन्द्राः भक्तास्तु भगवानिति ।।१०५।।
यज्ञो विष्णुरिति स्पष्टमृत्विजो ब्रुवते बुधाः ।
स्वभावकालकर्मादि शब्दवाच्यं तु हैतुकाः ।।१०६।।
भोगेनासौ स्वतः पूर्णो दाता भगगणस्य च ।
स्वतोऽवाप्त समस्तर्द्धी रामकामवरप्रदः ।।१०७।।
नारायण सहस्राणि कृष्णाद्याः शत कोटयः ।
कोटि कोटयवताराश्च जाता रामांघ्रि पंकजात् ।।१०८।।

—शिव संहिता, अ० २ श्लोक ३६–३८ ।

वेदान्त तत्व के जानने वाले ब्रह्मज्ञानी जिसको 'ब्रह्म' कहते हैं, योगीन्द्र महात्मा जिसको परमात्मा कहते हैं, भक्त जन जिसको भगवान कहते हैं, ऋत्विजगण "यज्ञो वै विष्णुः"ऐसा विद्वान स्पष्ट उद्घोष करते हैं । नैयायिक तर्क प्रधान तथा कर्म शास्त्र की मीसांसा करने वाले जिसको काल-कर्म-स्वभाव का प्रेरक ईश्वर कहते हैं, वही श्रीराम है । वह अपने भोगैश्वर्य से स्वतः परिपूर्ण आप्तकाम सर्वकाम है तथा अन्य उपर्युक्त अपने अंश कालाशों से भगवान् कहे जाने सभी को उत्कृष्ट भग ऐश्वर्य प्रदान करने वाले महादानी दाता हैं, सभी को कामना पूर्ति का वर प्रदान करने वाले श्रीराम ही हैं । हजारों नारायण तथा सैकड़ों कोटि श्रीकृष्णादिक अवतार उनके श्रीचरणों के चिन्हों से होते रहते हैं ।।१०५–१०८।।

श्रीमहारामायणे—

नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यक्भगवतस्तेषां रामनाम प्रकाशकः ।।१०९।।

श्रीमन्नारायणादिक बहुत नाम प्रभु के हैं । भक्त जन उनका कीर्तन करते हैं परन्तु उन सब भगवन्नामों का प्रकाशक श्रीराम नाम ही है ।।१०९।।

श्रीहनुमन्नाटके—

तूणेनैकशरं करेण दशधा संधानकाले शतं-
चापेऽभूत् सहस्र लक्षगमने कोटिश्च कोटिर्वधे ।
अन्तेखर्व निखर्व बाण विविधैः सीतापतिः शोभितः-
एतत् बाणपराक्रमस्यमहिमा सत्पात्रदाने यथा ।।११०।।

अब श्रीराम के बाण की महिमा वर्णन करते हैं–तूणीर में एक ही है, हाथ में आते-आते दश गुणा, संधान काल में सौ गुणा, धनुष पर आते-आते हजार गुणा, गमन-काल छूटने पर लक्ष गुणा तथा शत्रु के वध के समय कोटि गुणा तेजस्वी हो जाता है। अन्त में और कुछ आवश्यता पड़े तो खर्व-निखर्व गुणा हो जाता है। श्री सीतापति की भुजाओं में शोभित बाण के पराक्रम की यह महिमा गायी जाती है, जैसे सुपात्र को दिया गया दान अनन्त पुण्य फल देता है वैसे ही श्रीराम के कर कमल का पुण्य स्पर्श पाकर बाण ऐसा पराक्रमी हो जाता है ।।११०।।

नागानां नियुतं तुरंग नियुतं सार्धं रथीनांशतं-
पत्तीनां दशकोटि संनिपतने नृत्यत्कबन्धो रणे ।
एवं कोटिकबन्ध नर्तन विधौ नृत्येतथा खेचरः
तेषां कोटिक नर्तने रघुपते कोदण्ड घण्टारवः ।।१११।।

दश हजार हाथी, दश हजार घोड़े उसके आधा रथीरथ नष्ट हो जाय, दश करोड़ सेना के सैनिक जब रण भूमि में गिरते हैं तब कबंध नाचता है, ऐसे एक करोड़ कबन्धों का नृत्य होने पर खेचर नाचने हैं। ऐसे करोड़ों खेचरों को नृत्य कराने वाला श्रीराघवेन्द्र प्रभु के कोदण्ड के घण्टा ध्वनि का टंकार होता है ।।१११।।

सनत्कुमार संहितायां श्रीरामस्तवराजे श्री व्यास वाक्यं, श्लोक ६५–

इदं सत्यमिदं सत्य सत्यमेतदिहोच्यते ।
रामः सत्यं परं ब्रह्म रामात् किञ्चिन्न विद्यते ।।११२।।

श्री नारद वचनम् श्लोक ४८–

परात्परतरं तत्त्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसा शिरसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ।।११३।।

यह सत्य है, यही सत्य है, इस संसार में यही एक मात्र सत्य तत्व है, श्रीराम ही परात्पर सत्य स्वरूप परब्रह्म है, श्रीराम से श्रेष्ठ कहीं कुछ किंचिन्मात्र भी नहीं है। ऐसे परात्परतम तत्व सच्चिदानन्द रघुवंश-शिरोमणि प्रभु श्रीराम को तन-मन-बचन से शिरसा प्रणाम करता हूँ ।।११२–११३।।

सदाशिवसंहितायाम्—

सीता नित्या पराशक्तिः एकः दाशरथिः प्रभुः ।
राम एव परः सत्यः नान्यः सत्यः कदाचन ।।११४।।
रामादन्यं न सर्वेऽपि परं देवः सदीश्वरः ।
सत्यं सत्यं महावाक्यं पराकाश परात्परम् ।।११५।।
इन्द्रनीलमणिः स्निग्धः रुचिराकृतिरव्ययः ।
द्विभुजावयवो दृप्तः शरकोदण्डमण्डितः ।।११६।।

श्री सीता परात्परा नित्य शक्ति है, प्रभु तो एक दशरथ राजकुमार श्रीराम ही हैं। राम ही परम सत्य है अन्य कोई कभी श्रीराम के समान सत्यस्वरूप नहीं है ।।११४।। राम से अन्य परम पूज्य देव ईश्वर कोई नहीं है तथा सब मिलकर के भी उनके समान नहीं हो सकते हैं। यह पराकाश परात्पर पूर्णब्रह्म है, यह हमारा महावाक्य सत्य है, सत्य है ।।११५।। इन्द्रनील मणि के समान स्निग्ध, रुचिर मनोहर स्वरुप, अव्यय पुरुष नित्य द्विभुज आकृति वाले, परम धीर धनुषवाण शरकोदण्ड से मण्डित हैं ।।११६।।

वशिष्ठ संहितायाम्—

परान्नारायणच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामोदाशरथिः स्वराट् ।।११७।।
यस्यानन्ताव ताराश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मे शाः परब्रह्मस्वरूपभाक् ।।११८।।

अथर्वशाखायाम् श्रीरामतापनीये—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चितात्मनि ।
इति रामपदेनाऽसौ परं ब्रह्माभिधीयते ।।११९।।

वृद्धमनुस्मृतौ—

सप्तकोटि महामन्त्राश्चित विभ्रमकारकाः ।
एक एव परोमन्त्रो रामइत्यक्षर द्वयम् ।।१२०।।

यन्नाम संसर्ग वशाद् विवर्णो नष्टस्वरो मूर्ध्नि गतो स्वराणाम् ।
तद्राम पादौ हृदि सन्निधाय देहीकथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ।।१२१।।

इनकी टीका पीछे हो चुकी है ।

वृद्धहारीत स्मृतौ—

श्रीरामायनमो ह्येतत्तारकं ब्रह्मनामकम् ।
नाम्नां विष्णोः सहस्त्राणां तुल्य एष महामनुः ।।१२२।।
अनन्ता भगवन्मन्त्रा नानेन तु समाकृताः ।
श्रेयोरमण सामर्थ्यात् सौन्दर्य गुण सागरात् ।।१२३।।

"श्रीरामायनमः" यह तारक ब्रह्म मन्त्र है । हजारों विष्णु के नामों के समान यह अकेला ही प्रतापी है । भगवान् के मन्त्र अनन्त हैं परन्तु इसकी समानता कोई नहीं कर सकते । श्री जी को रमण कराने का सामर्थ्य तथा सौन्दर्य गुण के सागर होने से प्रभु का राम नाम प्रधान माना गया है ।।१२२–१२३।।

पद्मपुराणे—

श्रीरामेति परंनाम रामस्यैव सनातनम् ।
सहस्रनाम सदृशं विष्णोर्नारायणस्य च ।।१२४।।
राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ।।१२५।।

पाद्मोत्तर खण्डे अ० २५४ श्लोक २० तथा अध्याय ७१, श्लोक ३३१

रामनाम प्रभावेण सर्वे देवाः प्रपूजिता ।
महेश एव जानाति नान्यः जानाति जैमिने ! ।।१२६।।
पठेन्नाम सहस्राणि विष्णोर्यल्लभते फलम् ।
तत्फलं लभते मर्त्यो रामनामस्मृन्नपि ।।१२७।।
विष्णोर्नामानि विप्रेन्द्र ! सर्ववेदाधिकानि वै ।
तेषां मध्ये तु तत्त्वज्ञैः रामनाम वरं स्मृतम् ।।१२८।।

पाद्मे क्रिया योग खण्डे अ० १५ श्लोक ८७-९०—

विष्णोरेकैक नामापि सर्ववेदाधिकं मतम् ।
तस्मात्कोटि गुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ।।१२९।।
व्ययं नास्ति श्रमोऽल्पोऽपि श्रोतुमत्यन्तसुन्दरम् ।
तथापि रामरामेति न वदन्ति दुराशयाः ।।१३०।।

श्रीराम, यह राम का ही सनातन परात्पर नाम है, जो विष्णु तथा नारायण के हजारों नामों के समान है । श्रीराम-राम-राम इस प्रकार जप करने में ही हे सुन्दरमुखी पार्वती ! मेरा मन रमण करता है । यह विष्णु के सहस्र नाम के तुल्य अकेला ही है । हे जैमिनि ! श्रीराम के प्रभाव से ही सभी देवता पूजनीय बने हैं, यह सत्य वस्तु श्री शंकरजी ही जानते हैं अन्य कोई नहीं जानता हैं । भगवान् विष्णु के हजारों नामों का पाठ करने से जो फल मिलता है वह केवल श्रीराम के नाम का स्मरण करने मात्र से ही मिल जाता है । हे विप्रेन्द्र ! विष्णु के सभी नाम सम्पूर्ण वेदों के पाठ करने के पुण्य फल से भी अधिक फल देने वाले हैं उन सभी नामों में भी तत्वज्ञ महात्माओं ने श्रीराम नाम को ही श्रेष्ठ माना है । विष्णु के एक-एक नाम सभी वेदों से अधिक है ऐसा विद्वानों का मत है । उससे भी कोटि गुण अधिक पुण्य श्रीराम नाम से ही प्राप्त होता है । इसमें न तो कुछ खर्च लगता है, परिश्रम भी नाम मात्र का ही होता है, सुनने में भी अत्यन्त सुन्दर मनोहर लगता है तो भी आश्चर्य है दुष्टात्मा पुरुष श्रीराम नाम का कीर्तन नहीं करते हैं ।।१२४–१३०।।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक ४०–३९।।

नारायणादीनि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यक् भगवतस्तेषां रामनाम प्रकाशकः ।।१३१।।
इत्यादयो महानाम वर्तन्ते बहुकोटयः ।
अग्मा तेषां च सर्वेषां रामनाम प्रकाशकः ।।१३२।।
परमेश्वर नामानि सन्त्यनेकानि पार्वति ।
परन्तु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ।।१३३।।

श्रीनारायणादि भगवान के अनन्तानन्त नाम हैं परन्तु हे पार्वती ! सबका आत्मा सबका प्रकाशक तो श्रीराम ही है । यही सभी नामों में सर्वश्रेष्ठ सर्वोत्तम है ।।१३३।।

महारामायण सर्ग ५२ श्लोक २६–५३–५४–५६–

अंशांशैः रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धाः भवन्ति हि ।
वीजमोंकार सोऽहं च सूत्रमुक्तमिति श्रुतिः ।।१३४।।
चिद्‌वाचको रकारस्याद् सद्‌वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दकं वाच्यं सच्चिदानन्दमव्ययम् ।।१३५।।
रकारस्तत्पदोज्ञेयस्त्वं पदोऽकार उच्यते ।
मकारोऽसि पदं ज्ञेयं तत्त्वमसि सुलोचने ।।१३६।।
वेदसारं महावाक्यं तत्त्वमसीति च कथ्यते ।
रामनाम्नश्च तत्सर्वं रमुक्रीडा प्रवर्तते ।।१३७।।

श्रीराम नाम के अंशांश से ही हे पार्वती ! वीज, ऊँकार तथा सोऽहं तीनों सिद्ध होते हैं ऐसा श्रुति वाक्य है । चिद्‌वाचक रकार है, सत् वाचक आकार है तथा आनन्द वाचक माकार है इस प्रकार श्रीराम नाम स्वयं सच्चिदानन्द स्वरूप है । रकार 'तत्' पद वाचक है । आकार 'त्वं' पद वाच्य है तथा मकार 'असि' पद का बोधक है । इस प्रकार हे सुलोचने ! 'तत्वमसि' का कारण भी राम नाम ही है । वेदान्त के विद्वान 'तत्त्वमसि' को वेद का सार महावाक्य कहते हैं वह भी श्रीराम नाम से ही प्रकट होता है । अतएव 'रमुक्रीड़ा' सबमें खेलने वाला रमण-क्रीड़ा करने वाला श्रीराम नाम है यह निसंशय सिद्धान्त है ।।१३४–१३७।।

श्रुतौ—

यश्चाण्डालोऽपि रामेति वाचं वदेत् तेनसह संवदेत् ।
तेन रह संवसेत् तेन सह भुञ्जीवात् ।।१३८।।

इसका अर्थ पीछे दिया जा चुका है ।

श्रीरामोपनिषदि—

ब्रह्महत्या सहस्राणि महापापानि यानि च ।
स्वर्णस्तेयं सुरापानं गुरुतल्पयुतानि च ।।१३९।।
कोटि कोटि सहस्राणि ज्ञानाज्ञानकृतानि च ।
सर्वाण्यपि प्रणश्यन्ति रामनामानुकीर्तनाम् ।।१४०।।

हजारों ब्रह्महत्यादिक जो जो महा पाप हैं, सोने की चोरी-मदिरा पान-गुरुतल्प गमन सहित करोड़ों-करोड़ों ज्ञान से अज्ञान से किये गये हजारों हजारों पाप सबके सब श्रीराम नाम का संकीर्तन करने से नष्ट हो जाते हैं ।।१३९-१४०।।

सुन्दरीतन्त्रे—

कालानल समायुक्तो वह्निस्तत्रविराजते ।
तस्योर्ध्वे च सुविशाखा सूक्ष्मर्चिस्तुरमाकुला ।।१४१।।
तन्मध्ये चिन्तयेत् विन्दुं नादपूर्वं ततः परम् ।
ज्वलत् जरत् कुरंग नेत्राभ्यां ऊर्ध्वचन्द्र विभूषितम् ।।१४२।।
प्राणेन बिन्दुना युक्तं ध्वनि भूषित मस्तकम् ।
तेजः पुञ्जप्रतिच्छन्नं रसानन्दविलक्षणम् ।।१४३।।
निष्कर्त व्यञ्जनं रामं प्राणबिन्दुरहं युतः ।
आवयांस्तु रसोऽत्र सः भानु सोमो सहायवान् ।।१४४।।
वह्नि सोमात्मकं विश्वं 'रां' बीजे प्रतिष्ठितम् ।
अस्मिन् प्रविष्टो योगीन्द्रो नान्य किंचित्प्रपश्यति ।
न किंचित् खलु पश्यति ।।१४५।।
मत्तो नारायणो विष्णुरात्मानं कतिधा सृजत् ।
तेषु तत्तत् विशिष्टा ये अवतारा हरेर्दश ।।१४६।।

सुन्दरी तन्त्र में श्री जानकी जी समझाती हैं कि हे तात ! "रां" यह राम मन्त्र का बीज है, इसमें क्या-क्या कलायें हैं उसका मैं संक्षेप में वर्णन करती हूँ—

"राँ" बीज के 'र' प्रलयाग्नि के तेज से सम्पन्न होकर समस्त पापों को जलाने के लिये विराजमान है। उसके आगे की मात्रा सूक्ष्म किरणों से सम्पन्न श्री रमा विराजमान है। उसके मध्य बिन्दु अनहद ब्रह्मनाद भगवान् आकाशवाणी को प्रकाशित करने वाला 'बिन्दु' विराजमान है। हिरण के नेत्र के समान चमकता हुआ अर्द्ध चन्द्र उसके ऊपर विभूषित हो रहा है। इस प्रकार यह वीज मन्त्र-प्राण, बिन्दु, ध्वनि से विभूषित मस्तक वाला अमित तेजस्वी, विलक्षण रसानन्द स्वरूप है। अ कर्ता राम

का व्यञ्जक 'र' व्यञ्जन है, प्राणबिन्दु स्वरूप हम उसके साथ विराजमान हैं। हम दोनों "श्री सीताराम युगल प्रभु" का दिव्य चिन्मय रस इस वीज मन्त्र में परिपूर्ण है, जो सूर्य-चन्द्र को प्रकाशित करने में सहायक होता है। इस प्रकार अग्नि तथा सूर्य रूप समस्त विश्व श्रीराम मन्त्र के वीजाक्षर में प्रतिष्ठित है। इस वीजमन्त्र की आराधना में योगीन्द्र जब प्रबेश कर जाता है, तल्लीन हो जाता है तब सांसारिक अन्य कुछ भी देखता नहीं है। वह स्वयं उसमें तन्मय हो जाता है। हमारे ही नारायण-विष्णु न जाने कितने स्वरूप धारण करते हैं, उनमें विशेषतः श्रीहरि के दशावतार प्रसिद्ध हैं ॥१४१–१४६॥

द्वयं वनचरं ज्ञेयं तृतीयं वनगोचरम् ।
एकोहष्टा तथा क्षोण्यांदेवं सर्वेषु मार्जवम् ॥१४७॥
महाविष्णुर्महाशम्भुर्महामाया जलेशया ।
महाहंकृतिर्विश्वञ्च कारणानि च सर्वशः ॥१४८॥
गुणत्रय प्रकृतिश्च सूर्येन्दु हव्यवाहनाः ।
ब्रह्माविष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो ऋषयस्तथा ॥१४९॥
स्थावरा जङ्गमाश्चैव ये चान्ये भूत भाविनः ।
एते तावत्कलायोगिन् ममरामः स्वयं प्रभुः ॥१५०॥

उन अवतारों में नृसिंह तथा वराह दो वनचर हैं, मत्स्य और कूर्म दो जलचर हैं। परशुराम और वामन दो विप्र हैं। राम और कृष्ण दो क्षत्री हैं एवं बुद्ध और कल्की मिलाकर दशावतार प्रसिद्ध हैं। महाविष्णु-महाशंभु-महामाया जलशायी श्रीमन्नारायण-महतत्व-अहंकार ये सब जितने विश्व के कारण हैं, सत्व. रज, तम तीनों गुण, सूर्य-चन्द्र-अग्नि, ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र-देव देवेन्द्र-ऋषिगण, स्थावर, जङ्गम जो हुए हैं, जो होने वाले हैं यह सम्पूर्ण प्रकृति श्रीराम की कला अंश की ही विभूति है। हे योगीराज ! मेरे प्रभु श्रीराम तो स्वयं भगवान ही हैं ॥१४७–१५०॥

सुन्दरीतन्त्रे श्रीरामवचनं सीतांप्रति—

किमुक्तं तव पुत्रेण शम्भुना तु ररेण तु ।
तत्कुरुथ सदा भद्रे ! यथादो विस्तरं भवेत् ॥१५१॥

हे भद्रे ! आपके पुत्र परशंभु ने क्या कहा ? जो महाशंभु ने कहा हो संसार के विस्तार के लिये आप वैसा ही करें ।।१५१।।

श्री सीता कथनं श्रीरामं प्रति—

प्रभोराज्ञां नमस्कृत्य मनसा संविचिन्त्य च ।
विभज्यात्म नात्मानं महाविष्णुं चकार ह ।।१५२।।
सर्वशक्ति समुन्नद्धं प्रवृद्धं विश्वभावनम् ।
सदाशिवात्मिका शक्त्योरीशकार्यनिबोधनात् ।।१५३।।
तस्य तेजः स्वभावस्य महाविष्णुविलोकनात् ।
तेजस्मयं ततोजातं वह्नीन्दु सूर्य संज्ञकम् ।।१५४।।
त्रयोदेवास्ततो जाता ब्रह्म विष्णु महेश्वराः ।
ब्रह्मा सोमात्मकश्चैव विष्णुरग्निस्वरूपधृक् ।।१५५।।
सूर्यो वेदात्मकः स्थाणु जीवसंघातपालकः ।

श्रीराम जी का वचन सुन कर श्री सीताजी कहती हैं कि—हे प्रभो ! आपकी आज्ञा को नमस्कार करके मन में भली भांति विचार कर मैंने अपने आत्म के अंश से महाविष्णु की रचना की । उसी प्रकार सर्वशक्ति से सम्पन्न विश्व भावना में प्रवृद्ध सदा शिव तथा शक्तियों में सर्वश्रेष्ठ शक्तिया जो सभी कार्यों को भली-भाँति जानती हैं ऐसी शक्तियाँ उत्पन्न की, उनके तेजस्वी स्वभाव से तथा महाविष्णु द्वारा दिव्य दृष्टि से देखे जाने पर सूर्य-चन्द्र-अग्नि तीन प्रकार के तेज उत्पन्न हुए, उससे ब्रह्मा-विष्णु महेश्वर तीन देवता उत्पन्न हुए, ब्रह्मा सोमात्मक है, विष्णु अग्नि-स्वरूप धारण किये हैं तथा सूर्य शंकर रूप धारण जीवों का पालन तथा वेदों का दिव्य ज्ञान धारण करने वाले बनते हैं ।।१५२–१५५।।

तस्मिन् विष्णुः चिदंशेन ब्रह्मकोश समाविशत् ।।१५६।।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
विष्णु प्रवेशमात्रेण ब्रह्मकोशस्तदोत्थितः ।।१५७।।
चेष्टमानं च तं दृष्टवा देवा मुमुदिरे भृशम् ।
सहसा तुमुलः शब्दः जयेति च हरे हरे ।।१५८।।

तस्य तात परामूर्तिः संकर्षण परं महः ।
जगद्धेतुः परोदेवः कार्यकारणक्षोभकः ।।१५६।।
देव तिर्यक् मनुष्याणामुत्पत्तिश्च ततोऽभवत् ।
ततः सिद्धमिमं विश्वं गुण तत्त्व प्रबोधकः ।।१६०।।

चिदंश द्वारा भगवान् विष्णु ने जब ब्रह्म कोश में प्रवेश किया, तब विष्णु के प्रवेश मात्र से ब्रह्म कोष उत्थित हुआ, जिसमें सहस्त्रमूर्धा विश्वात्मा, सहस्त्राक्ष सहस्त्रपाद होकर प्रकट हुए। उनको चेष्टा क्रिया करते हुए देख कर देवता बड़े प्रसन्न हुए तथा सहसा आनन्द विभोर होकर जय हो जय हो श्रीहरि-श्रीहरि ऐसी तुमुल ध्वनि करने लगे। उसकी ही परामूर्ति भगवान संकर्षण है, जिससे महत्व है, जो जगत् का कारण पर-देवता है सभी कार्य कारण में चेतना उत्पन्न करने वाले हैं। तब उस महाताप के द्वारा देव-मनुष्य-पशु-पक्षी इत्यादि उत्पन्न हुए हैं। तथा यह विश्व सिद्ध स्वरूप धारण कर प्रकट हुआ है। जो गुणों तथा तत्वों के क्षोभ का परिणाम हैं ।।१५६–१६०।।

ब्रह्म पुराणे—

सावित्री शैलजा रम्भा जानक्यंश समुद्भवा ।
रामस्यांश समुद्भूतो नारायणोऽपि केशवः ।।१६१।।
त्रयोप्यंशा समुद्भूता श्री-भू-लीला विभेदतः ।
श्रीभवेद् रुक्मिणी साक्षात् सत्यभामा दृढ़व्रता ।।१६२।।
लीलास्याद् राधिकादेवी सर्वलोक प्रपूजिता ।
जानकीं च परा प्राहुः शाश्वती रामवल्लभा ।।१६३।।

ब्रह्माणी-रुद्राणी-इन्द्राणी सभी देवियाँ श्री जानकी जी के अंश से ही उत्पन्न हैं, श्रीराम के अंश से श्रीमन्नारायण केशवादि उत्पन्न हुए हैं। श्री-भू-लीला-भेद से तीनों शक्तियाँ भी श्री सीता जी की अंशकला से ही उत्पन्न हैं, श्रीजी रुक्मिणी होती हैं, भू देवी साक्षात् दृढ़ व्रतवाली सत्यभामा हैं, लीला श्री राधिकाजी के नाम से सर्वलोक में पूजित होती हैं। श्री जानकी जी ही श्रीराम की प्राणवल्लभा शाश्वती पराशक्ति है ।।१६१–१६३।।

श्री शुक संहितायां–श्रीरामस्यकथनं श्रीसीतांप्रति—

त्वदंश एव राधास्यात् प्रियंवदा वनेश्वरी ।
मदंश एव श्लाघनीयः कृष्णगोपेन्द्रनन्दनः ।।१६४।।
मदंशात् गोकुले तावत् कृष्णनामा भविष्यति ।
यः तत्सङ्गममाप्नोति लभते परमं पदम् ।।१६५।।

हे प्रिये ! तुम्हारे अंश से वृन्दावनेश्वरी प्रिय भाषिणी श्री राधा होती हैं, मेरे अंश से नन्दनन्दन श्री कृष्ण के नाम से गोकुल में प्रकट होंगे। जिनका सङ्ग करने से प्राणी मात्र परम पद प्राप्त करेंगे ।।१६४–१६५।।

ब्रह्म पुराणे—

हर्षिता राधिका तत्र जानक्यंश समुद्भवा ।
रामस्यांश समुद्भूतः कृष्णो भवति द्वापरे ।।१६६।।

महाशंभु संहितायाम्—

श्रीरामस्य कलांशा वै अवतारा भवन्ति हि ।
कोटि कोटिश्च कार्यार्थे सिंधौवीचिरिव मुने ।।१६७।।
सीताकलांशात् वै ब्रह्मशक्तयः सम्भवन्ति ताः ।
यासां कलाशेन जाता नार्य्यः सर्वाः श्रियादयः ।।१६८।।

श्रीहनुमत्संहितायाम्—

यां सां कला कलाशेन जाता नार्य्यः श्रियादयः ।
सर्वा रामार्पित धिपः जानकी परिचारिकाः ।।१६९।।

अथर्वशाखायां श्री रामोत्तरतापिन्याम्-मन्त्र ५ कंडिका ३

राम सान्निध्यवशाज्जगदानन्दकारिणी ।
उत्पत्ति स्थिति संहारकारिणी सर्वदेहिनाम् ।।१७०।।
सा सीता भगवती ज्ञेया मूलप्रकृति संज्ञिता ।
प्रणवत्वात्प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्मवादिनः ।।१७१।।

ओमित्येतदक्षरं तस्योपव्याख्यानं भूतं भव्यं-
भविष्यदिति सर्वमोकार एव,
यश्वान्यत् त्रिकालातीतं तद्प्योंकार एव,
सर्वंह्य तद् ब्रह्मायमात्मा ब्रह्मसोऽयमात्मा ।।१७२।।

श्री रामजी के सानिध्य संयोग से जो जगत को ग्रानन्द प्रदान करने वाली है, उत्पति-पालन-प्रलय करने वाली, सभी देह-धारियों की मूल प्रकृति स्वरूपा भगवती सीता ही जानने योग्य है। प्रणव (ऊंकार) स्वरूप होने से उसका नाम ब्रह्म तत्व वेत्ता प्रकृति ऐसा कहते हैं। उस प्रणव जो प्रकृति का श्री सीताजी का प्रतीक है उसकी महिमा बताते हैं— ऊँ यही एकाक्षर ब्रह्म है। भूत भविष्य वर्तमान सब कुछ इसी की व्याख्या है, सब कुछ ही ऊँकार स्वरूप है, जो अन्य कुछ भी है वह भी त्रिकालातीत ऊँकार ही है, यह सभी ब्रह्म स्वरूप है, वही ब्रह्म स्वरूप कहा जाता है। तात्पर्य यह है कि यह सब श्रीराम जी का अंश होने से प्रणव का प्रकृति मण्डल में इतना महत्व है ।।१७०–१७२।।

सामवेद संहितायां तृतीयाध्याये प्रथम कण्डिकायां श्रीहनुमतस्तवः

एष श्रीरामः सर्वज्ञः सर्वेश्वरः ग्रानन्दभुक् त्रयावस्थापरः तत्वं नारायणो विष्णु नरसिंह वाराहो कृष्णोमत्स्यादि ग्रवतारा: यस्यांशकलाभूताः तदेव परमात्मनं वृणीमहे भूतं भव्यं भवच्चा-स्मात् संभूत्वा एवं भूतं य वेद स पापात्मानं विहाय ग्रमृतत्त्वं च गच्छति ।।१७३।।

श्री हनुमान जी स्तुति करते हैं कि ये ही श्रीराम सर्वज्ञ हैं, सर्वेश्वर है, ग्रानन्द भोक्ता हैं, तीनों ग्रवस्था से पर हैं, परमतत्व हैं, नारायण-विष्णु नृसिंह, वाराह-कृष्ण-मत्स्यादि सभी ग्रवतार जिनके कलाग्रंश विभूति-स्वरूप है, उसी परमात्मा श्रीराम का हम सब वरण करते हैं। भूत-भविष्य-वर्तमान जिनसे होते रहते हैं वही परमात्मा राम है ऐसा जो जानता है वह सभी पापों को त्याग कर ग्रमृतधाम को प्राप्त करता है ।।१७३।।

महारामायणे श्रीशिववाक्यं पार्वतीं प्रति—

—ग्रध्याय ५२ श्लोक ६७–६८–१०१–४३–४५।

वेदे व्याकरणे चैव ये च वर्णाः स्वराः स्मृताः।
रामनाम्नैव ते जाताः सर्वेषां नात्र संशयः ।।१७४।।
रकारो मूर्ध्नि संचारस्त्रिकूटयाकार उच्यते।
मकारोऽधरयोर्मध्ये लोमे लोमे प्रतिष्ठितः ।।१७५।।

निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिपम् ।
मुकुटः छत्र सर्वेषां मकारो रेफ व्यञ्जनम् ।।१७६।।
तेजो रूप मयो रेफः श्रीरामांबककञ्जयोः ।
कोटि सूर्य प्रकाशश्च परब्रह्म स उच्यते ।।१६६।।
सोऽपि सर्वेषु भूतेषु सहस्रारे प्रतिष्ठितः ।
सर्व साक्षी जगद् व्यापी नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।।१७८।।
रामस्य मण्डलस्यैव तेजोरूपं वरानने ।
कोटि कन्दर्प शोभाढयो रेफाकारो हि विद्धि च ।।१७९।।

उपर्युक्त तीन श्लोकों १७४–१७६ की टीका पूर्व में आ चुकी है ।

श्रीरामजी के नेत्र कमल का जो तेज है वही करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान ब्रह्म का ज्योति स्वरूप कहा जाता है । वह ब्रह्मरंध्र के सहस्रार कमल में प्रतिष्ठित होकर सभी प्राणियों के मूर्धा में प्रतिष्ठित है । सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है, सबका साक्षी है । हे श्रेष्ठ सुन्दरमुखी पार्वती ! कोटि कन्दर्प शोभा धाम रेफ स्वरूप श्रीराम का तेज ही ज्योति मण्डल होकर प्रकाशित होता है । जिसका योगीजन नित्य ही ध्यान करते हैं ।।१७७–१७९।।

अकारस्यापि रूपश्च वासुदेवः स कथ्यते ।
मध्याकारो महारूपः श्रीरामस्यैव वक्षसः ।।१८०।।
सोऽप्यकारो महाविष्णोर्बलवीर्य स्वरूपकः ।
सर्वेषामेव विश्वानांमाधारत्वं च विद्धितम् ।।१८१।।
नारायणो रकारस्यादकारो निर्गुणात्मकः ।
मकारो भक्तिरूपस्यान्महाह्लादाभिधायिनी ।।१८२।।
मस्याकारो भवेद्रूपं श्रीराम कटिजानुनी ।
सोप्याकारो महाशंभुरुच्यते यो जगद्गुरुः ।।१८३।।
इच्छाभूतं च रामस्य मकारव्यञ्जनं च यते ।
तन्मूल प्रकृतिर्ज्ञेया महामाया स्वरूपिणी ।।१८४।।

श्रीराम नाम में जो ह्रस्व अकार है वह वासुदेव पद से पहचाना जाता है। मध्य का जो दूसरा अकार है वह श्रीराम के वक्षस्थल का महान तेज है। वह अकार भी महाविष्णु के बल वीर्य का स्वरूप है। अतएव उस अकार को सम्पूर्ण विश्व का आधार जानना चाहिए। 'राम' नाम का 'रेफ' रकार है वह नारायण स्वरूप है मध्य का अकार निर्गुण ब्रह्म का स्वरूप है तथा मकार परम आह्लाद प्रदायिनी भक्ति का स्वरूप है। मकार के साथ का जो अकार है वह श्रीराम के कटि तथा जानु (घुटनों) का तेज है। वह अकार जगद्गुरु महाशंभु कहा जाता है। मकार का जो व्यञ्जन रूप हलन्त रूप है, आधार 'म्' है वह श्रीराम की इच्छा शक्ति स्वरूपी महामागा का स्वरूप है ।।१८०–१८४।।

महारामायणे–सर्ग ५२ श्लोक ४६–४७–५१–४८–४६–४० ।

नारायणापि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यक् भगवतस्तेषु रामनाम प्रकाशकः ।।१८५।।

हारीत स्मृतौ—

रकारमैश्वर्यरूपन्तु मकारस्तेन संयुतः ।
अवधारणयोगेन रामो यस्तदनुस्मृतः ।।१८६।।

मनुस्मृतौ—

सप्तकोटि महामन्त्राश्चित्त विभ्रमकारकाः ।
एक एव परोमन्त्रो रामइत्यक्षरस्मृतः ।।१८७।।

हारीतस्मृतौ—

श्रेयोरमण सामर्थ्यात् सौन्दर्य गुणसागरात् ।
श्रीराम इति नामेदं तद्राम परिकीर्तितः ।।१८८।।

अथर्वण रहस्ये–मंत्र १५

यथैव वटबीजस्थः प्राकृतश्च महाद्रुमः ।
तथैव रामबीजस्थः जगदेतच्चराचरम् ।।१८९।।

इनकी टीका ऊपर हो चुकी है।

ब्रह्मयामले—

रकारः सर्वदेवानां साक्षात् कालानलः प्रभुः ।
रकारः सर्वलोकानां तेजपुञ्जः सनातनः ।।१९०।।
रकारः सर्वविद्यानां वेद्यस्तत्त्व सनातनः ।
रकारः सर्वशब्दानां कारणोऽनन्तरूपधृक् ।।१९१।।
रकारः सर्वमन्त्राणां व्याप्य व्यापक ईश्वरः ।
रकारोत्पद्यत्ते नित्यं सर्ववर्णेश्वरैः सह ।।१९२।।

रकार सभी देवताओं का साक्षात् कालानल प्रभु है । रकार सभी लोकों का सनातन तेज समूह है । रकार सभी विद्याओं का सनातन सार-तत्व है, रकार ही सभी अनन्त रूप धारी शब्दों का कारण स्वरूप है । रकार ही सभी मन्त्रों में व्यापक व्याप्त स्वरूप है—रकार से ही सभी वर्णों के अधिष्ठाता ईश्वर के सहित सब कुछ नित्य ही उत्पन्न होता है ।।१९०–१९२।।

अथर्वशाखायां श्रीरामोत्तरतापिन्याम् कंडिका ३ श्लोक १–३ ।

अकाराक्षर सम्भूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः ।
उकाराक्षर सम्भूतः शत्रुघ्नस्तेजसात्मकः ।।१९३।।
प्रज्ञात्मकस्तु भरतः मकाराक्षर सम्भवः ।
अर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैक विग्रहः ।।१९४।।

ॐकार के अ उ म् तीन वर्णों में अकार से विश्व कल्याणपरायण श्री लक्ष्मी जो, उकार से तेजस् स्वरूप श्री शत्रुघ्न जो, मकार से प्रज्ञात्मक श्री भरत जो तथा अर्धमात्रात्मक ब्रह्मानन्दन रुप श्रीराम हैं ।।१९४।। ऊँकार नाम है परमात्मा नामी । नाम नामी में कोई भेद नहीं है । यद्यपि परमात्मा एक है । परन्तु उनके सम्पूर्ण स्वरूप का ज्ञान कराने के लिए यहां चार पाद बनाये गये हैं ।

श्रीरामतत्त्व के वर्णन में–'रां' यह बीज ही प्रणव है । तथा पूर्ण ब्रह्म श्रीराम ही परमेश्वर है । लक्ष्मण-शत्रुघ्न-भरत तथा कौशल्यानन्दन श्रीराम ये चारों मिलकर सम्पूर्ण राम है । जंसे सब कुछ ऊँ है । वैसे सब कुछ "रां" भी है । रां और ऊँ में कोई अन्तर नहीं है । अतः यह सम्पूर्ण विश्व श्री राम की ही सत्ता का प्रकाश कर रहा है ।

तस्मात् प्रणवस्य चाकारस्य चोकारस्य मकारस्य, चार्धमात्रा
याः देही देह विभागो न स्यात् सच्चिदानन्द विग्रहः।

रामनाम भुविख्यातं अभिरामेण वा पुनः।
तथा रामस्य रामाख्यः यस्यार्थः भुवि तत्त्वत्तः ।।१९५।।

इसलिये प्रणव के अ-उ-म् अर्धमात्रादिक सब एक ही तत्व हैं उसमें देही-देह विभाग नहीं है। सच्चिदानन्द विग्रह हैं। श्रीराम का नाम संसार में विख्यात है ।।१९५।।

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनाऽ सौ परं ब्रह्माभिधीयते ।।१९६।।

इसका अर्थ पहले हो चुका है।

अगस्त संहितायाम्—

दीर्घाकारयुतो रेफो रामश्चिद् ब्रह्म कारणम्।
मस्तु चित् जीवशक्तीनां कारणं जानकी स्वयम् ।।१९७।।

दीर्घ आकार सहित रेफ सच्चिदानन्द ब्रह्म कारण रूप हैं। मकार चेतन जीव स्वरूप है, एवं अकार सभी शक्तियों का कारण श्री जानकी जी हैं ।।१९७।।

श्रीमहारामायणे

अंशांशैः रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि।
बीजमोंकार सोऽहं च सूत्रमुक्त मितिश्रुतिः ।।१९८।।

इसकी टीका पूर्व में हो चुकी है।

शिवसंहितायाम्—

रघुवंशे रामचन्द्रः वर्धन्ते विश्वभावनः।
सुमित्रा हृदयानन्द चन्द्रको विश्वपालकः ।।१९९।।
विषयेभ्यः परं वस्तु त्वमात्मा सर्वदृक् पुमान्।
दाशरथेः महाराज राक्षसानां कुलान्तकः ।।२००।।
रामानुज महाबाहो देवदेवोर्मिलापते।
सहस्रमूर्धन् विश्वात्मन् कार्यकारणतत्त्ववित् ।।२०१।।

हे लक्ष्मण जी ! आप रघुवंश में उत्पन्न होकर श्री रामचन्द्र जी के आनन्द को बढ़ाने वाले विश्वप्रिय हैं। सुमित्रा जी के हृदय के आनन्दामृत को चन्द्रमा की भांति परिपूर्ण करने वाले हैं। विश्व के पालक हैं। संसार के विषयों से पर सत्यवस्तु हैं। आप सब कुछ देखने वाले आत्म पुरुष हैं। महाराज दशरथ के कुमार हैं एवं राक्षसों के कुल का अन्त करने वाले हैं। हे रामानुज ! हे महाबाहो ! हे देव देव ! हे उर्मिला पते ! आप सहस्र मूर्धा विश्वात्मा कार्यकारण के तत्व को भली-भाँति जानने वाले हैं ।।१९९-२०१।।

सुन्दरी-तन्त्रे -

संकर्षणोऽपि यस्यांशः कलांशःयश्चिदात्मकः।
विभूति शंकरः श्रीमान् विश्वसंहारकारकः ।।२०२।।
स एव राघवो भ्राता लक्ष्मणोऽनुजगामह।
गौराङ्गं च महाबाहो तडित्पीताम्बरावृतः ।।२०३।।

भगवान सङ्कर्षण भी जिसकी कला अंश से उद्भूत सच्चिदात्मक स्वरूप हैं। उन भगवान संकर्षण की ही विभूति श्रीमान् भगवान शङ्कर हैं जो विश्व के संहार करने वाले हैं ।।२०२।। वही सङ्कर्षण रघुकुल में भगवान राम के भ्राता होकर प्रकट हुए हैं, गौराङ्ग हैं, महाबाहु हैं, बिजली की भाँति चमकते हुए पीताम्बर से सुशोभित हैंवह श्री लक्ष्मणजी भी उनके साथ ही साथ अनुगामी बनकर चलें ।।२०३।।

स्कंद पुराणे—

शेषश्चक्षु श्रवः श्रेष्ठः क्षितिं भित्वा सहस्रधा।
सुरलोकात् सुरेन्द्रोऽपि समगादमरैः सह ।।२०४।।
इत्युक्त्वा सुरराजोऽपि लक्ष्मणं सुरसङ्गतः।
शेषं प्रस्थाप्य पाताले भूभारधरणेक्षमः ।।२०५।।
एवं वै ब्रह्मणो धाम प्रप्नुवन्ति सनातनम्।
चतुर्थो राघवोभ्राता द्विभुजेति धनुर्धरः ।।२०६।।

उस समय (भगवान् के परमधाम गमनकाल में) पृथ्वी का भेदन कर सहस्रात्मा चक्षु से सुनने वालों में श्रेष्ठ शेषनाग प्रकट हुए। सुरलोक

से सुरेन्द्र भी देवताओं के साथ आये ।।२०४।। सुरराज इन्द्र ने श्री लक्ष्मण जी से देवताओं सहित इस प्रकार प्रार्थना करके भूमि भार को धारण करने में परम समर्थ अपने शेष रूप में विलीन पाताल में विराजमान करवाये । इसका जो स्मरण करता है वह भी इसी प्रकार सनातन प्रभु के परम धाम में जाता है । चौथे श्री राघवेन्द्र के भाई धनुषधारी द्विभुज प्रभु राम के साथ परमधाम पधारे ।।२०६।।

अगस्त्य संहितायाम्—

दीर्घाकार युतो रेफो रामश्चिद् ब्रह्मकारणम् ।
मस्तु चिज्जीवशक्तीनां कारणं जानकी स्वयम् ।।२०७।।
इसकी टीका पहले हो चुकी है ।

रकारो रामचन्द्रश्च चिन्मयानन्द विग्रहः ।
अकारो जानकीचैव मकारो लक्ष्मणः स्वराट् ।।२०८।।

रकार सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीराम हैं । अकार श्री जानकी जी हैं तथा मकार श्री लक्ष्मण जी हैं ।।२०८।। महाशंभु संहितायाम्—

प्रणवं केचिदाहुर्वैबीजं श्रेष्ठं तथा परे ।
तत्तु ते नाम वर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतः ।।२०९।।
रामेति नाम मात्रस्य प्रभावश्चाति दुर्गमः ।
मृगयन्ते तु यं वेदा कुतश्चान्यस्य ते प्रभो ।।२१०।।

कोई ओंकार को, कोई बीजाक्षर को श्रेष्ठ बताते हैं परन्तु हे प्रभो ! वह तो आपके 'राम' नाम के ही अक्षरों से सिद्धि प्राप्त करते हैं, ऐसा मेरा मत है । श्री शंकर जी पुनः कहते हैं-'राम' इस नाम का ही प्रभाव अत्यन्त दुर्गम है, जिसको वेद भी ढूंढ रहे हैं, अन्यान्यशास्त्रों का तो कहना ही क्या है ।।२०९-२१०।।

महारामायणे, सर्ग ५५ श्लोक २९-३४ ।

रामनाम महाविद्या षडभिर्वस्तुभिरावृता ।
ब्रह्म-जीव-महानादैस्त्रिभिरन्यद् वदामि ते ।।२११।।

स्वरेण बिन्दुना चैव दिव्यया मायेयाऽपि च ।
पृथक्त्वेन विभागेन साम्प्रतं शृणु पार्वति ।।२१२।।
परब्रह्ममयो रेफो जीवोऽकारश्च मश्च यः ।
रस्याकार मयोनादः रामादीर्घस्वरः स्मृतः ।।२१३।।
मकारं व्यञ्जनं विन्दुर्हेतुः प्रणवमापयोः ।
अर्द्ध भागादुकारस्यादकारान्नादरूपिणः ।।२१४।।
रकार गुरुराकारस्तथा वर्ण विपर्ययः ।
मकारं व्यञ्जनं चैव प्रणवं चाभिधीयते ।।२१५।।
मस्या सर्वाणितं मत्वा प्रणवे नाम रूपधृक् ।
अन्तर्भूतो भवेद् रेफः प्रणवे सिद्धिरूपिणी ।।२१६।।
रामनाम्नः समुद्भूतो प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेद तत्त्वाधिकारिणः ।।२१७।।

इनकी टीका पूर्व में हो चुकी है ।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्यया ज्ञान प्राप्तये ।
तं गुरुः प्राह रामेति रमणात् राम इत्यपि ।।२१८।।

मुनिजन सद्विद्या द्वारा ज्ञान प्राप्ति के लिये जिसमें रमण करते हैं तथा जो सब में रमण करता है इसलिये भी श्री गुरुदेव ने प्रभु का 'राम' नाम ही कहा है ।।२१८।।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक ५, ६, ७, १४-१५, १८-२४ ।

कोटि कन्दर्प शोभाढये सर्वाभरणभूषिते ।
रम्यरूपार्णवे रामे रमन्ति सनकादयः ।।२१९।।
अत एव रमुक्रीडा रामनाम्नः प्रवर्तते ।
रमन्ति मुनयस्सर्वे नित्यं यस्यांघ्रि पङ्कजे ।।२२०।।

अनेक सखिभिः साकं रमते रासमण्डले ।
अत एव रमुक्रीडा रामनाम्नाः प्रवर्तते ।।२२१।।
नानामुनिगणाः सर्वे दण्डकारण्यवासिनः ।
ज्ञानयोग तपोनिष्ठा जापकाः ध्यानतत्पराः ।।२२२।।
मुनिवेषधरं रामं नीलजीमूत सन्निभम् ।
रमन्ते योषितो भूत्वा रूपं दृष्टवा महर्षयः ।।२२३।।
रमिता राम मूर्तौ ते स्त्रियोरूपास्तपश्चरन् ।
ऊतो देवि रमुक्रीडा रामनाम्नैव वर्तते ।।२२४।।
रमन्ते मुनयो यस्मिन् योगिनश्चोर्ध्वरेतसः ।
अतो देवि रमुक्रीडा रामनाम्नैव वर्तते ।।२२५।।

पद्म पुराणे—

विष्णोर्नामानि विप्रेन्द्र सर्ववेदाधिकानि वै ।
तेषां मध्ये तु तत्त्वज्ञैः रामनाम वरं स्मृतम् ।।२२६।।
रामेत्यक्षर युग्मं हि सर्वमन्त्राधिकं द्विज ।
यदुच्चारण मात्रेण पापी यान्ति परांगतिम् ।।२२७।।
रामनाम प्रभावो हि सर्वदेव प्रपूजितः ।
महेश एव जानाति नान्यः जानाति तत्त्वतः ।।२२८।।
पठेन्नाम सहस्राणि विष्णोर्यत् लभते फलम् ।
तत्फलं लभते मर्त्यो रामनाम स्मरन्नपि ।।२२६।।
अहोचित्रं मनुष्याणां चरित्रमिदमुच्यते ।
रामेति मुक्तिदं नाम न स्मरन्ति दुराशयाः ।।२३०।।
मूल्यं नास्ति श्रमश्चाल्यः श्रोतुमत्यन्त सुन्दरम् ।
तथापि राम रामेति न वदन्ति दुराशयाः ।।२३१।।

पद्म पुराणे—

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने ।।२३२।।

श्री रामेति परं नाम रामस्यैव सनातनम् ।
सहस्त्रनाम सदृशं विष्णोर्नारायणस्य च ।।२३३।।
इत्यादयो महामन्त्राः वर्तन्ते सप्तकोटयः ।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनाम प्रकाशते ।।२३४।।
नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यग् भगवतस्तेषां रामनाम प्रकाशते ।।२३५।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है ।

पुलहसंहितायाम्—

रामित्येकाक्षरं ब्रह्म कारणं प्रणवस्य च ।
तस्माद् ब्रह्मा हरिः शम्भुः योगिनः समुपासते ।।२३६।।

"रां" यह एकाक्षर ब्रह्म प्रणव ॐकार का भी कारण है । अतएव ब्रह्मा-शम्भु-हरि तथा सभी योगीजन इसकी उपासना करते हैं ।।२३६।।

:: अथर्वशाखायां श्रीरामोत्तरतापिन्याम् ::

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैत परमानन्दात्मा यत्परं ब्रह्म भूर्भुवः स्वस्तस्मै नमो नमः ।।२३७।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्चाखण्डैकरसात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै नमो नमः ।।२३८।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यच्च ब्रह्मानन्दामृतं भूर्भुवः ।।२३९।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यत्तारकं ब्रह्म भू० ।।२४०।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो ब्रह्माविष्णुरीश्वरो यः सर्व देवात्मा भूर्भुव० ।।२४१।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये सर्वे वेदाः साङ्गाः सशाखाः सपुराणा भूर्भुवः ।।२४२।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो जीवात्माभू० ।।२४३।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सर्वभूतान्तरात्मा भू० ।।२४४।।

ॐ जो जगत प्रसिद्ध श्री रामचन्द्र जी हैं वे निश्चय ही भगवान् हैं। अद्वितीय परमानन्द स्वरूप हैं। जो सर्वोत्कृष्ट ब्रह्म तथा भूर्भुवः स्वः ये तीनों लोक हैं। वह सब कुछ वही हैं उन श्री रामचन्द्र जी को मेरा निश्चय ही वारंवार नमस्कार है ।।२३७।। जो सर्वत्र विख्यात श्री रामचन्द्र जी हैं वे निश्चय ही भगवान हैं। तथा जो अखण्ड एकरस स्वरूप परमात्मा हैं एवं जो भूर्भुवः स्वः सब कुछ वही उनको मेरा वारंवार नमस्कार है ।।२३८।। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्र जी हैं, वे निश्चय ही भगवान् हैं, तथा जो आनन्दमय-अमृतमय ब्रह्म है तथा तीनों लोक जिनका स्वरूप है उन भगवान श्रीराम को मेरा वारंवार प्रणाम है ।।२३९।। परम विख्यात श्री रामचन्द्र जी निश्चय ही भगवान है जो तारक ब्रह्म तथा भूर्भुवः स्वः स्वरूप हैं उनको मेरा वारंवार प्रणाम है ।।२४०।। जो श्री रामचन्द्र जी ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव स्वरूप हैं, जो सर्वदेव मय सबका आत्मा है। उस पर ब्रह्म परमात्मा भगवान राम को मेरा वारंवार नमस्कार है ।।२४१।। जो श्री रामचन्द्र जी अङ्गों सहित सम्पूर्ण वेद, उनकी शाखायें, पुराण तथा भूर्भुवः स्वः सबके स्वरूप में प्रकाशित हैं, वे निश्चय ही भगवान हैं। उनको मेरा वारंवार निश्चय ही नमस्कार है ।।२४२।। परम प्रसिद्ध श्रीरामचन्द्र जी निश्चय ही भगवान हैं तथा जो जीवात्मा तथा भूर्भुवः स्वः का स्वरुप हैं तथा समस्त प्राणीमात्र के अन्तरात्मा हैं, उन तीनों लोक में विराजमान श्रीराम को मेरा वारंवार नमस्कार है ।।२४३–२४४।।

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः सभगवान् ये देवासुरामनुष्यापि भावाः भुर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः ।।२४५।। ॐ यो वै श्रीराम मत्स्यकूर्माद्यवतारा भूर्भुव० ।।२४६।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च प्राणो भूर्भुवः ।२४७।। ॐ यो वै श्रीराम योऽन्तःकरणचतुष्टयात्मा भूर्भुव० ।।२४८।। ॐ यो वै श्रीराम०यश्च यमो भुर्भुवः ।।२४९।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्चान्तको भूर्भुवः ।।२५०।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च मृत्युभूर्भुवः ।।२५१।। ॐ यो वै श्रीराम०यच्चामृतं भूर्भुवः० ।।२५२।। ॐ यो वै श्रीराम० यानि पञ्चमहाभूतानि भूर्भुवः ।।२५३।। ॐ यो वै श्रीराम० स्थावरजङ्गमात्मा भूर्भुवः

।।२५४।। ॐ यो वै श्रीराम० ये च पञ्चाग्नयो भूर्भुवः ।।२५५।। ॐ यो वै श्रीराम० याः सप्त महाव्याहृतयो भूर्भुवः ।।२५६।।

जो सुप्रसिद्ध श्री रामचन्द्र जी हैं वे निश्चय ही भगवान हैं, जो देवता-असुर-मनुष्यादि भावों में विराजमान हैं । जो मत्स्यकूर्म वराहादि अवतार धारण किये हैं, जो मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार अन्तःकरण चतुष्टय स्वरूप हैं, जो यम तथा मृत्यु स्वरूप हैं । जो पुनः अमृत स्वरूप भी है जो पञ्चमहाभूत स्वरूप हैं, जो स्थावर जङ्गम सबके आत्मा हैं । जो आहवनीय आदि पञ्चाग्नि स्वरूप हैं तथा जो सप्तव्याह्रति "भूःभुवः स्वः महः जनः तपः सत्यादि सातों व्याहृति जिसका स्वरूप है वह श्री रामचन्द्र जी निश्चय ही भगवान हैं, तथा तीनों लोक उन्हीं का स्वरूप है, उन श्रीराम को मेरा निश्चय ही वारंवार नमस्कार है ।।२४५-२५६।।

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या विद्या भूर्भुवःस्वस्तस्मै वै नमो नमः ।।२५७।। ॐ यो वै श्रीराम० या सरस्वती भूर्भुवः ।।२५८।। ॐ यो वै श्रीराम० या लक्ष्मीभूर्भुवः ।।२५९।। ॐ यो वै श्रीराम० या गौरी भूर्भुव० ।।२६०।। ॐ यो वै श्रीराम० या जानकी भूर्भुवः ।।२६१।। ॐ यो वै श्रीराम० यच्च-त्रैलोक्यं भूर्भुवः ।।२६२।। ॐ यो वै श्रीराम० यः सूर्यो भूर्भुवः ।।२६३।। ॐ यो वै श्रीराम० यः सोमो भूर्भुवः ।।२६४।। ॐ यो वै श्रीराम० यानि नक्षत्राणि भूर्भुवः ।।२६५।। ॐ यो वै श्रीराम० ये च नवग्रहा भूर्भुवः ।।२६६।।

ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्र जी हैं वे अवश्यमेव भगवान है । जो विद्या तथा सरस्वती-लक्ष्मी-गौरी तथा भगवती जनकनन्दनी जिनका जिनका स्वरूप है तथा भू आदि तीनों लोक भी वे ही हैं उन प्रभु श्रीराम को मेरा निश्चय ही बारंबार प्रणाम है । ॐ जो भगवान श्रीरामचन्द्र जी त्रिलोकी स्वरूप हैं । जो सूर्य स्वरूप हैं, जो चन्द्रस्वरूप हैं । जो नक्षत्रों के समूह का रूप हैं तथा जो नवग्रह भी हैं उन भगवान श्रीराम को जो भूभुवः स्वः स्वरूप है उनको मेरा वारंवार नमस्कार है ।।२५७–३६६।।

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् य चाष्टौ लोकपाला-भूर्भुवःस्वस्तस्मै वै नमो नमः ।।२६७।। ॐ यो वै श्रीराम० ये चाष्टौ वसवो भूर्भुवः ।।२६८।। ॐ यो वै श्रीराम० ये चैकादश रुद्रा भूर्भुवः ।।२६९।। ॐ यो वै श्रीराम० ये च द्वादशापित्या भूर्भुवः ।।२७०।। ॐ यो वै श्रीराम० यच्च भूत भव्यं भविष्यद् भूर्भुवः० ।।२७१।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च ब्रह्माण्डस्यान्तर्बा-हिर्व्याप्नोति विराड् भूर्भुवः० ।।२७२।। ॐ यो वै श्रीराम० यो हिरण्यगर्भो भूर्भुवः० ।।२७३।। ॐ यो वै श्रीराम० या प्रकृति-र्भूर्भुवः० ।।२७४।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्चोंकारो भूर्भुवः० ।।२७५।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च तस्त्रोऽर्धमात्रा भूर्भुवः ।।२७६।।

ॐ जो परम विख्यात श्रीरामचन्द्र जी हैं वे भगवान् ही हैं जो आठ लोकपाल तथा आठ वसु हैं, वे जिनके स्वरूप हैं। जो ग्यारह रुद्र तथा बारह सूर्य हैं, वे जिनके स्वरूप हैं। जो हुआ है, होता है, आगे होगा, वह सब जिसके रूप हैं। जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के भीतर बाहर सर्वत्र व्याप्त विराट रूप हैं। जो हिरण्यगर्भ हैं। जो प्रकृति है। जो ॐकार हैं तथा जो चार प्रकार की अर्धमात्रायें तथा तीनों लोक स्वरूप हैं उन प्रभु श्रीराम को मेरा अवश्य ही वारंवार नमस्कार है ।।२६७–२७६।।

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः परमपुरुषो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः ।।२७७।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च महेश्वरो ।।२७८।। ॐ यो वै श्रीराम० यश्च महादेवो० ।।२७९।। ॐ यो वै श्रीराम० य ॐ नमो भगवते वासुदेवाय यो महाविष्णु भूर्भुवः० ।।२८०।। ॐ यो वै श्रीराम० यः परमात्मा भूर्भुवः० ।।२८१।। ॐ यो वै श्रीराम० यो विज्ञानात्मा भूर्भुवः ।।२८२।। ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सच्चिदानन्दै करसात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः ।।२८३।।

ॐ जो सुप्रसिद्ध श्री रामचन्द्र जी हैं, वे अवश्य ही भगवान हैं तथा जो परमपुरुष स्वरूप हैं। जो महेश्वर स्वरूप हैं। जो महादेव स्वरूप हैं,

जो ॐ नमो भगवते वासुदेवाय हैं, जो महाविष्णु स्वरूप हैं। जो परमपिता परमात्मा स्वरूप हैं। जो विज्ञानात्मा हैं। तथा जो सच्चिदानन्द स्वरूप दिव्य रस के एक मात्र आत्मा स्वरूप हैं एवं भू आदि तीनों लोक हैं, ये उपर्युक्त वर्णित सभी जिनके ही स्वरूप हैं। उन भगवान श्रीराम को निश्चय ही मेरा बारंबार नमस्कार है ।।२७७-३८३।।

ॐ इत्येतैः सप्तचत्वारिंशन्मन्त्रैः नित्यं देवं स्तौति तस्य देवः प्रीतो भवति। स्वात्मानं दर्शयति। एभिर्मन्त्रैर्नित्यं देवं स्तौति स देवं पश्यति। सोऽमृतत्वं प्राप्नोति ।।

तब सुप्रसिद्ध श्री याज्ञवल्क्य महर्षि ने श्री भारद्वाज मुनि से कहा– जो ब्रह्मवेत्ता महात्मा इन सैंतालीस मन्त्रों से प्रतिदिन भगवान श्रीराम का स्तवन करता हैं उसके ऊपर इस स्तुति को सुनकर भगवान श्री रामचन्द्र जी प्रसन्न होते हैं। अतएव जो इन मन्त्रों से भगवान की स्तुति करता है, वह भगवान श्रीराम का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त करता है। वह अमृतत्व को प्राप्त करता है ।।

आनन्द संहितायाम्—

स्थूलमष्टभुजं प्रोक्तं सूक्ष्मंचैव चतुर्भुजम्।
परं तु द्विभुजं रूपं तस्मादेतत् त्रयं यजेत् ।।२८४।।

इसकी टीका हो चुकी है।

नारद पञ्चरात्रे—

आनन्दो द्विविधः प्रोक्तः मूर्तश्चामूर्त एव च।
अमूर्तस्याश्रयो मूर्तः परमात्मा नराकृत्तिः ।।२८५।।

आनन्द दो प्रकार का है मूर्त तथा अमूर्त। अमूर्त का निराकार ब्रह्मनन्द का आश्रय भी नराकार साकार परमात्मा ही है ।।२८५।।

अथर्वशाखायां—

यथैव वट बीजस्थः प्राकृतस्थः महाद्रुमः।
तथैव रामनामस्थः जगदेतच्चराचरम् ।।२८६।।
रेफारूढ़ा मूर्तयश्च शक्तयस्त्रय एव च।

इसकीटीका हो चकी है।

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपं वभूवः इतिभूयसी श्रुतिः ।। जैसे एक ही अग्नि अनेक रूप से सर्वत्र व्यापक है, वैसे ही परब्रह्म नाना रूप होकर, प्रतिरूप होकर सर्वत्र विराजमान हैं । ऐसी अनेकों श्रुतियाँ हैं । —श्रीरामपूर्वतापिनी २ उपनिषद् मन्त्र १५-१६ ।

श्रीमन् महारामायणे—५२ सर्ग श्लोक ६२-६३-६४ ।

रकारोऽनल बीजंस्यात् ये सर्वे वाडवादयः ।
कृत्वामनोमलं सर्वं भस्मकर्म भ्रमाद्भ्रमम् ।।२८७।।
अकारो भानुबीजं स्यात् वेदशास्त्र प्रकाशकम् ।
नाशयत्येव सद्दीप्त्या याऽविद्या हृदये तमः ।।२८८।।
मकारं चन्द्रवीजञ्च सदम्बु परिपूरणम् ।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ।।२८९।।

इनकी टीका हो चुकी है ।

राम नाम महाविद्या षड्भिर्वस्तुभिरावृता ।
ब्रह्म-जीव-महानादैस्त्रिभिरन्यद् वदामिते ।।
स्वरेण बिन्दुना चैव दिव्यया मायय़ऽपि च ।।२९०।।
परब्रह्ममयो रेको जीवोऽकारश्च मस्य च ।
रस्याकार मयो नादः राया दीर्घस्वरः स्मृतः ।।२९१।।
मकारं व्यञ्जनं बिन्दुर्हेतुः प्रणव माययोः ।
अर्धभागादुकारस्यात् अकारान्नाद रूपिणः ।।२९२।।
रकार गुरुराकारस्तथा वर्ण विपर्ययः ।
मकारं व्यञ्जनं चैव प्रणवंचाभिधीयते ।।२९३।।
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ।।२९४।।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक २९-३४ ।

इन श्लोकों की टीका हो चुकी है ।

यो ह वै एको रामो आसीत् । सर्वत्रैव एवं गीतं राम-स्यैक्यं नान्योऽस्ति । रामाख्य सर्वमिदं आद्यं अक्षरं प्रकाशे प्रभवो प्रभुः परिभूः स्वयंभूरिति श्रीरामसत्तायाः भूयसी सकाशात् प्रकटितं यो महादेवो भूः ।। सर्वान् भगवान् परित्यज्य आत्मज्ञानैश्वर्ये महति महीपते तस्मादुच्यते महादेवं इति श्रुतिः ।।२९५।।

जो श्री रामचन्द्र सर्व प्रसिद्ध हैं वह निश्चय ही एक हैं सभी शास्त्रों ने ऐसा ही गाया है । राम एक ही हैं, दूसरा कोई नहीं है । राम नाम से ज्ञात होने वाला तत्व ही सर्वोपरि है । आद्य है, अक्षर है, प्रकाशमय है । सबका उत्पत्ति स्थान है । सबका प्रभु है । सर्वत्र व्याप्त है स्वयंभू है उसको उत्पन्न करने वाला दूसरा कोई नहीं है । श्रीराम की महान सत्ता के द्वारा प्रकट होने से "महादेव" इनका नाम पड़ा है । सभी सांसारिक भावों का परित्याग करके आत्मज्ञान के ऐश्वर्य में परिपूर्ण होकर महान आनन्द में निमग्न रहते हैं इसलिये इनका महादेव नाम है ऐसा श्रुति का कथन है ।।२९५।। अथ वासुदेवार्थः—

वसति-वासयति आच्छादयति वा, सः यमिति वासुः
दिव्यति क्रीडति, विजिगीयते व्यवहरति द्योतते
स्तूयतेकाम्यते मुमुक्षुभिर्गच्छति इति वासुदेवः ।
वासुश्चासौदेवश्च वासुदेवः ।।२९६।।

छादयामि वृहद्विश्वं भूत्या सूर्य इवांशुभिः ।
सर्वभूताधिवासश्च वासुदेव स्ततः स्मृतः ।।२९७।।

जो सबमें वसता है, सबको अपने में वसाता है, जो सब को आच्छादित करता है उसका नाम 'वासु' है । जो स्वयं प्रकाशित है । सभी में क्रीड़ा करता है । जिसको सब चाहते हैं । जो सबकी जिज्ञासा का मूल है । जो सब व्यवहार चलाता है । जो स्वतः प्रकाशमय है । जिसकी सब स्तुति करते हैं । जिसको सब चाहते हैं । जो मुमुक्षुओं को साथ चलता है वह वासुदेव है । इस प्रकार वासु और देव मिलकर वासुदेव शब्द बनता है ।।२९६।। भगवान का श्रीमुख वचन है कि—जैसे सूर्य अपनी

किरणों से संसार को प्रकाश से भर देते हैं वैसे ही मैं भी इस महान् विश्व को आच्छादित करता हूँ, इसीलिये मेरा वासुदेव नाम है ।।२९७।।

ब्रह्म पुराणे—

वसनात् सर्वभूतेषु वसुत्त्वाद्देव योनिषु ।
वासुदेवस्ततो ज्ञेयो योगिभिस्तत्त्व दर्शिभिः ।।२९८।।

सभी प्राणियों में निवास करने तथा देव योनियों में 'वसु' नाम से प्रसिद्ध होने से तत्वदर्शी योगीजनों के द्वारा 'वासुदेव' ऐसे नाम से जाने जाते हैं ।।२९८।।

उद्योगपर्वणि महाभारते—

सर्वत्रासौ समस्तञ्च वसत्यत्रेति वै यतः ।
ततोऽसौ वासुदेवेति विद्वद्भिः प्रतिपाद्यते ।।२९९।।
सर्वाणि तत्रभूतानि वसन्ति परमात्मनि ।
विभूतिषु च सर्वात्मा प्रेरको वासुदेव सः ।।३००।।

जो सर्वत्र है, जिसमें सभी का निवास है, अतएव विद्वज्जन उनका वासुदेव नाम से प्रतिपादन करते हैं । जो सबका प्रेरक है, जिसकी विभूति से सम्पूर्ण विश्व व्याप्त है वह सर्वात्मा परमात्मा वासुदेव कहलाता है ।।३००।। वशिष्ठ संहितायाम्—

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमःश्रीमान् रामो दाशरथिः स्वराट् ।।३०१।।
यस्यानन्तावताराश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मेशा परब्रह्म स्वरूपभा ।।३०२।।
अंशभूतो विराट् ब्रह्म विष्णुरुद्रस्तथापरे ।
ब्रह्मतेजो घनीभूतो वर्तते जानकीपतेः ।।३०३।।
मायामयमिदं सर्वं पञ्चतत्त्वोद्भवं तनुम् ।
दृष्टं श्रुतादिकं चैव क्षरमित्यभिधीयते ।।३०४।।

व्यापकः सर्वभूतेषु यस्यनाशः कदापि न ।
जीवात्मा सर्वगोऽभेधः साक्षरोभूधरात्मजे ।।३०५।।
सर्वसाक्षी चिदानन्दोनिर्द्वन्दोऽखण्ड एव च ।
परमात्मा परब्रह्म कथ्यते स निरक्षरः ।।३०६।।
असंख्यमित्रवत्तेजो वेदा अपि न यं विदुः ।
स वै निरक्षरातीतो रामः परतरात्परः ।।३०७।।
भूतोऽक्षरोक्षरश्चांशकला चैव निरक्षर ः ।
स्वयं निरक्षरातीतो वर्तते जानकीपतिः ।।३०८।।
इच्छाभूतोऽक्षरस्तस्य चाक्षरस्तेज उच्यते ।
निरक्षरो घनस्तेजो वर्तते जानकीपतेः ।।३०९।।
स्वयं निरक्षरातीतो राम एव इति श्रुतिः ।
यो वै वसति गोलोके द्विभुजश्च धनुर्धरः ।।३१०।।
ॐ यो वै श्री सर्वोत्कृष्टः भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमोनमः ।।३११।।

(इनकी टीका पहले हो चुकी है) विशेष में जो निश्चय ही सर्वोत्कृष्ट परब्रह्म है उन श्री रामचन्द्र जी को मेरा वारंवार नमस्कार है ।।३११।। यह सिद्ध करने के लिए ऊपर वाले श्लोक प्रमाण दिये गये हैं ।

मनुस्मृतौ —

यन्नाम संसर्गवसाद् विवर्णो नष्टस्वरो मूर्धिन गतौ स्वराणाम् ।
तद्राम पादो हृदि सन्निधाय देहीकथंनोर्ध्वगतिं प्रयाति ।।३१२।।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक १०१ ।

निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिपम् ।
मुकुटः छत्र सर्वेषां मकारो रेफेव्यञ्जनम् ।।३१३।।

पद्मे पुराणे —

रामान्नास्ति परोदेवो रामान्नास्ति परं तपः ।
रामान्नास्ति परो योगः नहि रामात्परो मखः ।।३१४।।

इनकी टीका पूर्व में हो चुकी है ।

शिवसंहितायाम्—

ब्रह्माण्डानामसंख्यानां उद्भवः लय पालनम् ।
रकारादेव जायन्ते कान्त तवैव का कथा ।।३१५।।
रकारादप्रमेयाच्च महतां विष्णुनां गणाः ।
भवन्ति तत्प्रलीयन्ते सिन्धोरिव तरङ्गिता ।।३१६।।
ऊकारात् शक्तयः सर्वा मकाराज्जीव कोटिशः ।
अभ्राकाशे यथालीना भवन्त्येव पुनः पुनः ।।३१७।।

श्रुतौ—प्रकृत्या सहितः श्यामः पीतवासा प्रभाकरः ।
द्विभुजः कुण्डलीरत्नमाली धीरो धनुर्धरः ।।३१८।।

हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशालम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं विभुं चिदानन्दस्वरूपमद्भुतम् ।।३१९।।

स्कन्दपुराणे —

ब्रह्मा विष्णु महेशाद्याः यस्यांशाः लोक साधकाः ।
तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्धं परमं भजे ।।३२०।।

इनकी पूर्व में टीका हो चुकी है ।

तैत्तरियोक्ता श्रुतिः—

ॐ भृगुर्वै वारुणिः वरुणं पितरभुपससार-
अधीहि भो भगवो ब्रह्मेति, सोऽब्रवीत् ।।३२१।।

राम एव परं ब्रह्म रामादन्यं न किञ्चन यत एते रामादेव
उत्पद्यन्ते रामे एव विलीयन्ते रामे एव स्थितो लभना ।
तस्माद् राम एव विभुरिति तैतरीया श्रुतिः ।।३२२।।

वरुण पुत्र भृगु अपने पिता वरुण के पास गये और कहने लगे कि हे भगवान ! ब्रह्म क्या है ? सो बताइये, वह बोले—राम ही परंब्रह्म है, राम से अन्य कुछ भी नहीं हैं, सभी राम से ही उत्पन्न होते हैं, राम में ही विलीन होते हैं, राम में ही स्थिर निवास करते हैं इसलिये राम ही प्रभु हैं । ऐसा तैत्तरीय श्रुति कहती है ।।३२१–३२२।।

अथर्वणे उत्तरार्द्धे श्रुति—

जनकस्य राज्ञः सद्मनि सीतोत्पन्ना ताँ सर्वपरां परानंद मूर्तिं गायन्ति मुनयोऽपि देवाश्च कारणकार्याभ्यामेव परा तथैव कारणकार्ये शक्तिर्यस्याः विधात्री गौरीणां सैव कर्त्री सैव रामानन्दस्वरूपिणी जनकस्य योगफलमिव विभाति ।।३२३।।

अथर्वण के उत्तरार्ध में श्रुति है कि श्री जनक महाराज के गृह में श्री सीतानाम्नी पराशक्ति उत्पन्न हुई। उन्हीं को परमानन्दमूर्ति कहकर मुनिजन तथा देवगण गान करते हैं। यही कार्य कारण से पर हैं, कार्य कारण दोनों इन्हीं की शक्ति है। यही ब्रह्माणी-पार्वती आदि सबकी करने वाली हैं। यही श्रीराम की आनन्द स्वरूपिणी महान आह्लादिनी शक्ति हैं। इनके रूप में श्री जनक जी महाराज का मानों योगफल ही प्रकट है, ऐसी प्रकाशित हो रही है ।।३२३।।

ॐ यो वै श्री रामचन्द्रः लोचनाभा भाति स एव ब्रह्मेति। स एव साक्षी। स एव केवलं निर्गुणात्मकः सम्मीलनम्। सृष्टि-स्थित्यन्तकारिणे ब्रह्मविष्णुशिवात्मकं स संज्ञाययति। भगवान् एक एव राम आसीत्। एकस्तु त्रयानुस्यूतं सामर्थ्यरूप आसीत् ।।अथर्वशाखायां ।।३२४।।

श्री रामचन्द्र जी जो सुप्रसिद्ध हैं वही सूर्य-चन्द्र दोनों नेत्र के रूप में प्रकाशित है। वही ब्रह्म है। वही निश्चयपूर्वक सबके साक्षी हैं। वही एक केवल निर्गुणात्मक होकर सबको मिलते हैं। संसार की रचना-पालन प्रलयादिक करने वाले ब्रह्मा विष्णु शिव नामों से ही वही पहचाने जाते हैं। भगवान् राम तो निश्चय ही एक ही हैं। एक होकर भी त्रिदेवों से अपनी प्रचण्ड शक्ति से प्रविष्ट होने का सामर्थ्य रखने वाले हैं। ऐसा अथर्व की शाखा श्रुति का वचन है ।।३२४।।

श्रीरामोत्तरतापिन्याम्—

अत्र रामोऽनन्तरूपस्तेजसा वह्निना समः।
सत्त्व ब्रह्मात्मकं विश्वं अग्निसोमात्मकं जगत् ।।
उत्पन्नं सीतया भाति चन्द्रश्चन्द्रिकया यथा ।।३२५।।

यहां श्रीराम अनन्त रूप से अपने अप्रतिभ तेज से अग्नि के समान प्रकाशित हो रहे हैं। यह समस्त सत्व ब्रह्मात्मक जगत् अग्नि तथा सोमात्मक श्री सीतारामजी युगल प्रभु से ही उत्पन्न है। वे श्रीराम जब शीतल किरणों वाली कान्तिमती भगवती श्री सीता जी के साथ संयुक्त रहते हैं, तब चन्द्रिका के साथ चन्द्रमा की भांति श्री सीतारामजी प्रकाशित होते हैं। यह प्रकरण श्रीरामायण की व्याख्या का है उसमें 'रां' अग्नि बीज हैं। बिन्दु चन्द्र स्वरूप है। श्रीराम अग्नि स्वरूप तथा श्री सीताजी चन्द्र किरण के समान है। यह भाव बताया गया है। राम अग्नि स्वरूप होकर जीव की कर्म वासना भस्म करते हैं। श्री जानकी जी अमृत सिंचन कर जीव के उत्थान का मार्ग प्रशस्त करती है। यही भाव है।

प्रकृत्या सहितः श्यामः पीतवासा प्रभाकरः।
द्विभुजः कुण्डली रत्नमाली धीरोधनुर्धरः ३२६॥
प्रसन्नवदनो जेता धृत्यष्टक विभूषितः।
प्रकृत्या परमैश्वर्या जगद्योन्याङ्कितांकभृत् ॥३२७॥
हेमाभयाद्विभुजया सर्वालङ्कारयार्चिता।
श्लिष्ट कमलधारिण्या पुष्टः कोशलजात्मजः ॥३२८॥
दक्षिणे लक्ष्मणेनाथ सधनुः पाणिना पुनः।
हेमाभेनानुजेनैव तदाकोणत्रयं भवेत् ॥३२९॥

॥ श्रीरामोत्तर तापनीय—३ उपनिषद् मंत्र २५—२८ ॥

अपनी प्रिय दिव्य प्रकृति स्वरूपा श्री जानकी जो के सहित श्यामसुन्दर पीताम्बर धारी, प्रभाकर के समान तेजस्वी, दो भुजा वाले, कुण्डल-किरीट-रत्नमाला धारण किए हुए, धीर धुरंधर धनुष धारी, प्रसन्न वदन, शत्रुओं को जीतने वाले, अपने दृष्टि-सुमन आदि अष्ट मन्त्रियों के द्वारा विभूषित, परमैश्वर्य सम्पन्ना, संसार की आदि का कारणभूता स्वर्ण के समान गौराङ्गी, द्विभुज सुन्दरी, सभी अलङ्कारों से अलंकृत श्री जानकी जी को बामाङ्ग में धारण किये कमल धारिणी श्री सीताजी के आलिङ्गन को प्राप्त कर अत्यन्त पुष्ट बने हुए श्री कौशल्याकुमार श्रीराम विराजते हैं। दाहिनी ओर स्वर्ण के समान गौराङ्ग धनुष बाण धारण किये श्री लक्ष्मण जी जब विराजते हैं तब त्रिकोणाकार यन्त्र के समान शोभा परम सुन्दर लगती है ॥३२६—३२९॥

सुन्दरी तन्त्रे—

कृत्यमेतत् जगत्सर्वं कार्यं कारणरूपकम् ।
द्विभुजात् राघवात् नित्यात् सर्वमेतत् प्रवर्तते ।।३३०।।
स्वप्रकाशते नित्यरूपो रामो मायादयात्मवान् ।
इन्द्रनीलमणि स्निग्धः श्यामसुन्दर विग्रहः ।।३३१।।
पूर्वं सिद्धञ्च सिद्धार्थं रामभद्रं सुविग्रहम् ।
दिव्येन चक्षुषा पश्यत् प्रमाणं शाङ्करीपुरी ।।३३२।।
दिव्याभरण सम्पन्नं दिव्यायुध समन्वितम् ।
सर्वशक्ति कलानाथं द्विभुजं रघुनन्दनम् ।।३३३।।
अहं शक्तिः शिवोरामः इति वेदे प्रगीयते ।
साम्प्रतं दृश्यतां विश्वं शिव शक्ति द्वयात्मकम् ।।३३४।।
ममलिङ्गधरानार्यः पुरुषा रामलिङ्गकाः ।
आवाभ्यां चिन्हितं विश्वं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।।३३५।।

—श्रीरामपूर्वतापनी उपनिषद् ३, मंत्र १७

सीतारामौ तन्मयावत्रपूज्यौ जातान्याभ्यां भुवनानि सप्त स्थितानि च प्रहृतान्येव तेषु ततो रामो मानवो माययाधात् ।।३३६।।

इनकी टीका पूर्व में हो चुकी है ।

अथर्वण उत्तरार्द्ध—

यस्यांशेनवै ब्रह्मविष्णुमहेश्वर अपि जाता, महाविष्णुर्यस्य-दिव्यगुणांश्च स एव कार्यकारणयोः परः परमपुरुषोरामो दाशरथिर्बभूव ।।३३७।।

जिसके अंश से ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वरादिक भी उत्पन्न हैं । महाविष्णु जिनके दिव्य गुणों का प्रतीक है, वही कार्यकारण से पर पुरुष श्रीराम ही निश्चयपूर्वक दशरथ नन्दन हुए हैं ।।३३९।।

श्री रामोत्तरतापनीये अथर्वशाखायाम् कंडिका ३ मंत्र ३–४ ।

राम सानित्यवशाज्जगदानन्द दायिनी ।
उत्पत्ति स्थिति संहार कारिणीं सर्वदोहिनाम् ॥३३८॥
सा सीता भगवती ज्ञेया मूलप्रकृति संज्ञिता ।
प्रणवत्वात् प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्मवादिनः ॥३३९॥

श्रीराम के सानिध्य से ही जो सम्पूर्ण देह धारियों की उत्पति पालन तथा संहार करने वाली है, वे जगत को परमानन्द दायिनी श्री वैदेह नन्दिनी 'सीता' नाद बिन्दु स्वरूपिणी है । वे ही मूल प्रकृति के नाम से पहिचानी जाती है । प्रणव स्वरूपा होने से ब्रह्मवादी जन इनको 'प्रकृति' कहते हैं ॥३३८–३३९॥ यह प्रणव का अर्थ श्रीराम युगल रूप में परिघटित होता है ऐसा भाव दर्शाया है ।

ॐ सोऽयमात्मा जागरित स्थानो बहिः प्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोर्नविंशति मुखः स्थूलभुक् वैश्वानरः प्रथम पादः ॥३४०॥

लीलावतार प्रभु श्रीराम के चार पादों में प्रथम पाद श्री लक्ष्मण जी हैं । ये शेष नाग के स्वरूप में अखिल विश्व के आश्रय होने से 'विश्व' अथवा 'वंश्वानर' कहे जाते हैं । श्रीराम की प्राप्ति के लिये इनकी कृपा ही प्रथम उपाय है । अतएव श्री लक्ष्मण जी की आराधना 'प्रथम पाद' कहा गया है । वे सदा श्रीराम सेवा में जागरूक रहते हैं अतएव 'जागरित स्थान' कहे जाते हैं । बाहर की सम्पूर्ण बातों को जानने में श्रीराम सेवा प्रतिबन्धकों से सतत सावधान रहने के कारण "बहिः प्रज्ञ" कहा गया है । श्री वाल्मीकि जी ने भी उन्हें "बहिः प्राण इवापरः" । श्रीराम के दूसरे बाह्य प्राण स्वरूप कहा है । भूर्भुवः आदि सात उर्ध्व के लोक तथा तल-अतल आदि सात पाताल सबकी स्थिति इनके आधार पर है अतः "सप्ताङ्ग" कहा गया है । पुराण–न्याय–मीमांसा–धर्मशास्त्र-व्याकरण-ज्योतिष-छन्द-कल्प-शिक्षा एवं निरुक्त-चार वेद, चार उपवेद तथा दर्शन ये सब मिलकर उन्नीस विद्यायें श्री लक्ष्मण जी के मुखारविन्द में विराजमान हैं । अर्थात् वे इनका वर्णन करने में परम समर्थ हैं । अतएव इनका "एकोर्नविंशति मुखः" कहा गया है । संकर्षण रूप से प्रलय काल में अपनी मुखाग्नि द्वारा समस्त स्थूल जगत को ग्रस लेते है । अतः 'स्थूलभुक्" कहलाते हैं ॥३४०॥

ॐ स्वप्नस्थानोन्तः प्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविंशतिमुखः ।
प्रविभक्त भुक् तैजसो द्वितीय पादः ।।३४१।।

स्वप्न अवस्था के विभु "तैजस" स्वरूप श्री शत्रुघ्न जी ही पूर्णतम परमात्मा श्रीराम के द्वितीय पाद हैं, अंश है। श्री लक्ष्मण की अपेक्षा दूसरे होने से द्वितीय है। प्रद्युम्न काम के अंश होने से सबके मन में निवास करते हैं। स्वप्नावस्था में सभी इन्द्रियों के सुप्त हो जाने पर भी मन अपना कार्य करता रहता है। अतः इनको भी "स्वप्न स्थान" कहा गया है। अन्तःकरण की बातों को मन में रहने के कारण यथावत् जानते हैं अतएव इनको "अन्तः प्रज्ञ" कहा है। भूः आदि सातों लोकों का इनकी सूक्ष्मावस्था भार वहन करते हैं अतः "सप्ताङ्ग" है। उन्नीस मुख पूर्ववत् हैं। पांच ज्ञानेन्द्रिय, पञ्चकर्मेन्द्रिय, पञ्चप्राण तथा अन्तः-करण चतुष्टय समष्टि रूप से 'उन्नीस मुख' हैं। सूक्ष्म लोकों का अधिष्ठाता है, वह सूक्ष्म तत्वों का भोक्ता अनुभव करने वाला होगा ही। अतः श्री शत्रुघ्न जी ही 'प्रविविक्त भुक्' एकान्त में सबसे विरक्त अलग होकर भोगने वाले कहलाते हैं। श्री शत्रुघ्न जी अपने मन की बातें किसी से न कहकर प्रभु सेवा परायण रहते हैं और उनके तेज प्रताप से सबकी रक्षा होती है अतएव उन्हें "तेजस्" तेज मय परम कान्तिमान तथा प्रद्युम्न काम रूप होने से अप्रतिभ सौन्दर्यमय है, ऐसा कहा गया है ।।३४१।।

ॐ यत्र सुप्तो न कञ्चन कामं कामयते । न कञ्चनस्वप्नं पश्यति तत्प्रसुप्तं । सुषुप्तस्थान एकीभूतः प्रज्ञानघन एव आनन्दमयोह्यानन्दभुक् चेतोमुखः प्राज्ञस्तृतीय पादः ।।३४२।।

अब सुषुप्ति अवस्था के विभु "प्राज्ञ" श्री भरतलाल जी का वर्णन करते हैं। श्री लक्ष्मण जी तथा श्री शत्रुघ्न जी की अपेक्षा ये तीसरे हैं अतः इन्हें तृतीय पाद कहा है। श्रीरामं पादयति गमयति इति पादः। जहां इन्द्रियां तथा मन दोनों सो जाते हैं इन दोनों के अनियन्त्रित व्यापार बन्द हो जाते हैं। उस शम-दम से सम्पन्न स्थिर प्रज्ञता की अवस्था को ही यहां सुषुप्ति कहा है। इसमें सप्त जितेन्द्रिय पुरुष न तो स्थूल भोगों की इच्छा करता है और न तो स्वप्न के सूक्ष्म भोगों की ओर ही

देखता है। इस जितेन्द्रिय एवं स्थिर प्रज्ञता में स्थित होने के कारण श्री भरत जी को "सुषुप्त स्थान" कहा गया है। इन्होंने पिता की ओर से स्वतः प्राप्त राज्य की कामना नहीं की, स्वप्न में भी उसका चिन्तन भी नहीं किया। ये नन्दिग्राम में ही समाधि लगा कर भगवान् श्रीराम के साथ एकीभूत हो गये थे। यों भी सदैव श्री रघुनाथ जी का ही चिन्तन करने के कारण वे उनके साथ तपाकार एक रूप हो गये थे। वे प्रज्ञान घन अर्थात् महाप्राज्ञ परम बुद्धिमान है। श्री रघुनाथ जी का अनन्य भक्त होना ही तो बुद्धि के उत्कर्ष की चरम सीमा है। हर्ष, शोक आदि से विचलित न होने का कारण वे सदा आनन्दमय कहे गये है। दिव्य सच्चिदानन्द के भोक्ता हैं। उनमें विवेक शक्ति का प्राधान्य होने से "चेतोमुख" कहा है। 'प्राज्ञ' उनकी संज्ञा है। परम ज्ञानी कुशाग्रबुद्धि होने के कारण भी वे महाप्राज्ञ हैं ।।३४२।।

ॐ एष सर्वेश्वरः एष सर्वज्ञः एषोन्तर्याम्येष योनिः, सर्वस्य प्रभवाप्ययो हि भूतानां न बहिः प्रज्ञं, नान्तः प्रज्ञं, नोभयतः प्रज्ञं, न प्रज्ञं नाप्रज्ञं, न प्रज्ञानघनं, अदृष्टमव्यवहार्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यक्तमव्यपदेश्यमेकात्म प्रत्यय सारं प्रपञ्चोपशमं शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते ।।३४३।।

अवस्था	विभु	स्वरूप	व्यूह	ॐ
जागृत	विश्व	श्री लक्ष्मण जी	संकर्षण	अकार
स्वप्न	तेजस्	श्री शत्रुघ्न जी	प्रद्युम्न	उकार
सुषुप्ति	प्राज्ञ	श्री भरत जी	अनिरुद्ध	मकार
तुरीय	तुरीय	श्री राम श्री सीता	वासुदेव	अर्धमात्रा नादरूपा

—श्रीरामोत्तरतापनीयोपनिषद् कंडिका ३ मन्त्र ६–९ ।।

ऊपर तीन पादों के रूप में वर्णित प्रभु श्रीराम सबका शासक परमेश्वर है। वह सबको जानने वाला है। वही सबका अन्तर्यामी है।

वही सम्पूर्ण जगत का कारण है। वही सभी भूतों के उत्पत्ति तथा प्रलय का कारण है। जिसकी प्रज्ञा न अन्तर्मुखी है, न बाह्यमुखी और न अन्तर्वाह्य दोनों ओर मुख रखने वाली है। जो न प्रज्ञानघन है न जानने वाला है जिसको इन चर्म चक्षुओं से देखा नहीं गया, व्यवहार में लाया नहीं गया, जो पकड़ा भी नहीं जा सकता, जिसका कोई खास लक्षण नहीं, जो चिन्तन में पूर्णरूप से नहीं आ सकता। जो किसी संकेत द्वारा भी समझाया नहीं जा सकता, एक मात्र उसकी स्वतन्त्र आत्म सत्ता ही सार स्वरूप है जिसमें प्रपञ्च का सर्वथा अभाव है, ऐसे सर्वप्रकारेण शान्त एवं कल्याणमय अद्वितीय परब्रह्म श्रीराम को ही ज्ञानी जन सर्वेश्वर प्रभु का चतुर्थ पाद मानते हैं ।।३४३।। तात्पर्य यह है कि जो कुछ वर्णन किया जाता है वह प्रभु के अनिर्वचनीय परम तत्व का दिग्दर्शन मात्र है। स्वरूपतः परिपूर्ण वर्णन करने में श्रुतियाँ भी असमर्थ ही हैं।

स आत्मा विज्ञेयः सदोज्वलोऽविधातत्कार्य हीनः स्वात्मबन्ध हरः सर्वदाद्वैतरहितः। आनन्दरूपः सर्वाधिष्ठानसन्मात्रो निरस्ता विद्यातमो मोहोऽहमेवेति सम्भाव्यः ।।३४४।।

वे पूणब्रह्म परमात्मा श्रीराम सदैव परमोज्ज्वल निर्मल यश प्रकाश से प्रकाशित हैं। अविद्या तथा उसके कार्यों से सर्वथा रहित हैं। अपने प्रिय भक्तजनों के आत्मा का अज्ञानमय बन्धन हरण करने वाले हैं। सर्वदा अद्वितीय स्वरूप हैं। वे आनन्द मूर्ति हैं। सबके अधिष्ठाता हैं। सत्तामात्र उनका स्वरूप है। अविद्याजनित अन्धकार तथा मोह जिनका स्पर्श नहीं कर सकता है अथवा जिनके श्रीचरणों की शरणागति स्वीकार करते ही भक्तों का अज्ञानान्धकार, मायामोह, अहंकार तुरन्त नष्ट हो जाता है, ऐसे भगवान श्रीराम का अंश होने से मैं उनका ही स्वरूप हूँ। ऐसी भावना निरन्तर करनी चाहिए, तात्पर्य यह है कि जो ऐसी भावना में निमग्न रहता है वह श्री रामस्वरूप ही है ।।३४४।।

ॐ तत्सत् यत्परं ब्रह्म रामचन्द्रश्चिदात्मात्मकः सोऽहं। ॐ तद्रामभद्रः परं ज्योतिः असौऽहमित्यात्मानमादाय मनसा ब्रह्मणै की कुर्य्यात् ।।३४५।।

सदा रामोऽहमित्येतत् तत्त्वतः प्रवदन्ति ये ।
न ते संसारिणो नूनं राम एव न संशयः ।।३४६।।
इत्युपनिषदि य एवं वेद स विमुक्तो भवति ।
स विमुक्तो भवतीति याज्ञवल्क्यः ।।३४७।।

श्री याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं—

ॐ तत्-सत्-यत् तथा परंब्रह्म आदि नामों से प्रतिपादित होसे वाले चिन्मय अनिर्वचनीय परात्मा जो श्रीराम हैं, व्यापक व्यापक सम्बन्ध से मैं भी वही हूँ । ॐ सच्चिदानन्दमय, परम ज्योतिः स्वरूप जो श्रीरामचन्द्र जी हैं वह मैं ही हूँ । इस प्रकार तन्मय तदाकार वृत्ति से मैं उनको अपनी आत्मा में स्थिर करके उनके ध्यान में निमग्न हो जाने से उनके साथ एक रूप हो गया हूँ । अतः मैं ही राम हूँ ऐसा वास्तविक रूप से तत्त्व जानकर जो प्रेम के आवेश में भाव समाधि में "मैं ही राम हूँ" ऐसा प्रेमपूर्ण वचन बोलते हैं ये संसारी हैं ही नहीं वे तो श्रीराम के ही स्वरूप हैं । इसमें कुछ भी संदेह नहीं है । इस प्रकार यह उपनिषद् की गाथा जो यथार्थ रूप से जानता हैं वह सर्वथा मुक्त हो जाता हैं, एकदम मुक्त हो जाता है ।।३४७।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्यया ज्ञानप्राप्तये ।
तं गुरुः प्राह रामेति रमणात् राम इत्यपि ।।३४८।।

श्री महारामायणे—

कोटि कन्दर्यलावण्ये सर्वाभरण भूषिते ।
रम्यरूपार्ण वे रामे रमन्ति सनकादयः ।।३४९।।

इसकी भी टीका हो चुकी है ।

महाशंभुसंहितायाम्—

प्रणवं केचिदाहुर्वै बीजं श्रेष्ठं तथापरे ।
तत्र तु नामवर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतिः ।।३५०।।

रामेति नाममात्रस्य प्रभावश्चाति दुर्गमः ।
मृगयन्ति तु यद्वेदा कुतोऽन्यस्य च ते विभो ।।३५१।।

इसकी व्याख्या पहले हो चुकी है ।

श्री महारामायणे—

मुग्धेश्रृणुस्व मनुजोऽपि सहस्रमध्ये-
धर्मव्रतो भवति सर्वसमानशीलः ।
तेष्वेव कोटिषु भवेद् विषये विरक्तः
सद्ज्ञान को भवति कोटि विरक्त मध्ये ।।३५२।।
ज्ञानिषु कोटिषु नृजीवन कोऽपि मुक्तः
कश्चित् सहस्रनृजीवनमुक्त मध्ये ।
विज्ञानरूप विमलोऽप्यथ ब्रह्मलीनः
तेष्वेव कोटिषु सकृत् खलु रामभक्तः ।।३५३।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

विष्णोः संख्या न पश्यामि तवरुद्रानेकशः ।
चतुरानन रुपस्य रामः सत्य पराक्रमः ।।३५४।।
अवताराः सन्ति बहवो विष्णोर्लीलानुकारिणः ।
तेषां सहस्र कृत्वा रामो ज्ञानमयो शिवः ।।३५५।।

सुन्दरी तन्त्रे—

महाशम्भुर्महाविष्णुर्महामाया जलेशयाः ।
महानन्दकृतिर्विश्वं कारणानि च सर्वशः ।।३५६।।
गुणत्रय प्रकृतिश्च सूर्येन्दु हव्यवाहनाः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो ऋषयस्तथा ।।३५७।।
स्थावराजङ्गमाश्चैव ये चान्ये भूतभाविनः ।
एते तावत् कला योगिन् ममरामः स्वयं प्रभुः ।।३५८।।

महाशंभु संहितायाम्—

श्री रामस्य कलांशाद्वै अवतारा: भवन्ति हि ।
कोटि कोटिश्च कार्यार्थं सिन्धौ वीचीव वै मुने ! ।।३५९।।

मनुस्मृतौ—

अंशभूता विराट् ब्रह्म विष्णुरुद्रास्तथापरे ।
ब्रह्मतेज घनीभूतो वर्तते जानकीपते ।।३६०।।

शिव संहितायाम्—

सगुणं निर्गुणं चैव परमात्मा तथैव च ।
एतेचांशा हि रामस्य पूर्वे चान्ते च मध्यतः ।।३६१।।

आदि ज्योतिर्महाशम्भुरात्मपूर्णेन चाक्षरम् ।
तत्परो वासुदेवस्यात् तत्त्वं ब्रह्मनिरक्षरम् ।।६६२।।
राघवस्य गुणो दिव्यो महाविष्णुस्वरूपवान् ।
वासुदेव घनीभूतं तनु तेजो महाशिवः ।।३६३।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है ।

"अपने आत्मा में परिपूर्ण महाशम्भु की आदि ज्योति स्वरूप अक्षर ब्रह्म है । उससे पर वासुदेव हैं जो निरक्षर ब्रह्मतत्व हैं ।"

श्रीवृहद् हनुमन्नाटके—

एको महामाहेभूतादि सृष्टि स्थितिध्वंसहेतुः महाविष्णुरस्ति ।
रामस्य तत् हृद् पादाब्जजातः परः कारणात् कार्यात् सुपरात्मा ।।
।।३६४।।
स ब्रह्मणस्तद्जगतोविधातुः नारायणः कारण एष एव ।
जातस्ततो भाति यशःप्रपञ्च प्रपञ्चसेतत्परितोविधीयते ।।३६५।।

मोह-महामोह पञ्चभूतादि संसार की उत्पत्ति पालन तथा विध्वंस का एकमात्र कारण महाविष्णु ही है, इतने महान प्रभु श्रीराम जी की

हार्दिक भावना से उनके श्रीचरण कमल से उत्पन्न हुए हैं। अतएव श्रीराम ही कार्यकारण से परे परात्पर परमात्मा हैं ।।३६४।। वही जगत्कर्ता ब्रह्मा श्रीमन्नाराय आदि सभी के कारण हैं, सम्पूर्ण संसार उनके यश प्रताप से प्रकाशित है। यह प्रपञ्च सभी प्रकार से उनके द्वारा ही बना है ।३६५।

श्री सनन्तकुमारसंहितायाम् वेदव्यास कथनम् युधिष्ठिरं प्रति—

अशेषवेदात्मकमादिसंज्ञ अजं हरि विष्णुमनन्तमाद्यम् ।
अपार संवित् सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ।।३६६।।

समस्त वेदों के आत्मस्वरूप, आदि पुरुष, अजन्मा श्रीहरि-विष्णु अनन्त इत्यादि नाम जिनके हैं, उस अपरम्पार ज्ञानसम्पन्न सुखस्वरूप एक रूप से सदैव रहने वाले परात्पर पर ब्रह्म श्रीराम का मैं भजन करता हूँ ।।३६५।।

अनन्तसंहितायाम्—

नारायणोऽपि रामांशः शंखचक्र गदाब्जधृक् ।
चतुर्भुज स्वरूपेण वैकुण्ठे च प्रकाशते ।।३६७।।

श्रीराम का अंश ही शंख-चक्र-गदा-पद्म धारण कर चतुर्भुज स्वरूप से वैकुण्ठ में श्रीमन्नारायण होकर विराजते हैं ।।३६७।।

श्रीरामतापनीयाम्—

सीतारामौतन्ययावत्रपूज्यौ जातान्यावाभ्यां भुवनानि सप्त ।
स्थितानि च प्रहृतान्येव तेषुततोरामोमानवो माययाधात् ।।३६८।।

अत्र रामोऽनन्तरूपस्तेजसा वन्हिना समः ।
सत्त्व ब्रह्मात्मकं विश्वं अग्निसोमात्मकं जगत् ।।३६९।।
उत्पन्नं सीतया भाति चन्द्रश्चान्द्रिकया यथा ।
प्रकृत्या सहितः श्यामः पीतवासा प्रभाकरः ।।३७०।।

इसकी टीका हो चुकी है।

श्रीमद्वाल्मीकि रामायणे युद्ध काण्डे—

आत्मानं मानुषं मन्त्रे रामं दशरथात्मजम् ।
योऽहं यस्य यतश्चाहं भगवान् तद् ब्रवीहि मे ।।३७१।।

श्री अयोध्याकाण्डे-वाल्मीकीय श्री सुमित्रा वचनं श्री कौशल्यां प्रति—

सूर्यश्चापि भवेत् सूर्ये अग्नेरग्नि प्रभोः प्रभुः ।
श्रियः श्रीश्च भवेदग्या कीर्त्याः कीर्तिः क्षमा क्षमा ।।३७२।।
दैवतं दैवतानाञ्च भूतानां भूतसत्तमः ।
तस्य के ह्यगुणा देवि ! देशेवाप्यथवावने ।।३७३।।
पृथिव्या सह वैदेह्या श्रिया च पुरुषर्षभः ।
क्षिप्रं तिसृभिरेताभिः सहरामोऽभिषेक्ष्यते ।।३७४।।

सुन्दरकाण्डे—

परं ब्रह्म परं तत्त्वं परं ज्ञानं परं तपः ।
परं बीजं परं क्षेत्रं परं कारणकारणम् ।।३७५।।

नारद पञ्चरात्रे—

आनन्दः द्विविधः प्रोक्तो सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम् ।
अमूर्तस्याश्रयो मूर्त्तः परमात्मा नराकृत्तिः ।।३७६।।

आनन्द संहितायाम्—

स्थूलमष्टभुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम् ।
परं तु द्विभुजं रूपं तस्मादेतत् त्रयं यजेत् ।।३७७।।

सुन्दरीतन्त्रे—

प्रभोराज्ञां नमस्कृत्य मनसा संविचिन्त्य च ।
विभज्यात्मनात्मानं महाविष्णुं चकार ह ।।३७८।।
सर्वशक्ति समुत्पन्नं प्रबुद्धं विश्वभावनम् ।
सदाशिवात्मा च शक्त्यामीशकार्य्यं निबोधनात् ।।३७९।।
तस्य तेजः स्वभावष्य महाविष्णु विलोकनात् ।
तेजस्त्वयं ततो जातं बह्मिन्दु सूर्यसंज्ञकम् ।।३८०।।

त्रयो देवास्ततो जाता ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
ब्रह्म सोमात्मकं चैव विष्णुरग्निस्वरूपधृक् ।।३८१।।

सदाशिव संहितायाम्—

विष्णु कोटि प्रतिपालं ब्रह्मा कोटि विसर्जनम् ।
रुद्रकोटि प्रमर्द्दं वै मातृ कोटिविनाशनम् ।।३८२।।
काम कोटि कलानाथं दुर्गा कोटिविमोहनम् ।
कौशल्यानन्दनं रामं केवलं भवखण्डनम् ।।३८३।।
अखण्डगुण सम्पन्नः राघवः नित्यविग्रहः ।
परात्परतरः नित्यः साकेतनगराधिपः ।।३८४।।

उपर्युक्त सभी श्लोकों की व्याख्या पूर्व में हो चुकी है ।

यजुर्वेदाय आपस्तम्भशाखायाम् अध्याय ३१ मन्त्र १६ ।

ॐ यज्ञेन यज्ञमजयन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् तेह नाकं महिमानं सचन्त यत्रपूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।३८५।।

यज्ञ के द्वारा ही सर्वप्रथम भगवान का यजन हुआ, अतएव देवताओं ने प्रथम इसी प्रभु की पूजा को ही मुख्य धर्म स्वीकार किया । वह अपनी महिमा से स्वर्ग में (दिव्य धाम में) प्रकाशित है, सभी साध्यादिक देवगण (भगवत्पार्षद) नित्यमुक्त प्रभु के परिकर वहां निवास करते हैं ।।३८५।।

श्रीमद्भागवते पञ्चम् स्कन्धे—श्रीहनुमत्वाक्यम्—

ॐ नमो भगवते उत्तमश्लोकाय नमः आर्यलक्षण शीलव्रताय नमः उपशिक्षितात्मने उपासित लोकाय नमः साधुवाद निकषणाय नमो ब्रह्मण्यदेवाय महापुरुषाय महाराजाय नमो नमः ।।३८६।।

जो भगवान हैं षड़विश्व ऐश्वर्य परिपूर्ण हैं उनको प्रणाम है जिनके सर्वोत्तम श्रेष्ठ गुण हैं, उनको नमस्कार है, जो आर्यों के सभी शुभ लक्षणों से सम्पन्न हैं, शीतल व्रत वाले हैं, जो स्वयं सभी को शिक्षा प्रदान करने वाले हैं, जो स्वयं सभी शिक्षाओं से सम्पन्न हैं, उनको नमस्कार है । जिनकी

तीनों लोक चौदहों भुवन में उपासना होती है उनको नमस्कार है । जो सन्त भक्तों के उत्कर्ष को बढाने वाले हैं उनको प्रणाम है । जो ब्राह्मणों को देवतुल्य मानते हैं ऐसे महापुरुष महाराजाधिराज श्रीराम को पुनः पुनः नमस्कार है ।।३८६।।

सनत्कुमार संहितायाम् श्री सूतवचनम्—

श्रीरामचन्द्र रघुपुङ्गव राजवर्य्यं-
राजेन्द्रराम रघुनायक राघवेश ।
राजाधिराज रघुनन्दन रामभद्र-
दासोऽहमद्यभवतशरणागतोऽस्मि ।।३८७।।

हे श्री रामचन्द्र जी ! रघुवंश शिरोमणि ! राजाओं में सर्वश्रेष्ठ ! राज राजेन्द्र श्रीराम ! हे रघुनायक ! हे राघवेन्द्र प्रभु ! हे राजाधिराज! हे रघुनन्दन ! हे राम भद्र ! मैं आपका दास आपकी शरण आया हूँ ।।३८६।। श्रुतौ—'सर्वान् कामान् आत्मकामान् सिद्धिर्भवति ।।"

आप्तकाम पूर्णकाम श्रीराम से ही सभी कामनाओं की सिद्धि हो सकती है ।।३८७।।

वाराह पुराणे—

परमानन्द सन्दोहाः ज्ञान मात्राश्च सर्वतः ।
सर्वे सर्वगुणैः पूर्णाः सर्वदोष विवर्जिताः ।।३८८।।

प्रभु के सभी अवतार परमानन्द परिपूर्ण हैं । सभी दिव्य ज्ञान स्वरूप हैं सभी सभी गुणों से परिपूर्ण हैं, प्रभु के सभी अवतार माया के सभी दोषों से रहित हैं ।।३८८।।

अथर्वशाखायाम्—

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः लोचनाभ्यां भाति स एव ब्रह्मेति स एव साक्षी स एव चेति केवलं निर्गुणात्मकः ।।३८९।।

महारामायणे सर्ग ५० श्लोक ९–१०–१७ ।

भूतः क्षरोऽक्षरश्चांशः कला चैव निरक्षरः ।
स्वयं निरक्षरातीतः स एव जानकीपतिः ।।३९०।।

इच्छाभूतः क्षरस्तस्य चाक्षरस्तेज उच्यते ।
निरक्षरो घनस्तेजो वर्तते जानकीपतेः ॥३६१॥

असंख्य मित्रवत्तेजो वेदा अपि न यं विदुः ।
स वै निरक्षरातीतो रामः परतरात्परः ॥३६२॥

सर्ग ५२ श्लोक ४३–४४–२६ ।

तेजोरूपोमयो रेफः श्रीरामाम्बक कञ्जयोः ।
कोटिसूर्यप्रकाशश्च परब्रह्म स उच्यते ॥३६३॥

सोऽपि सर्वेषु भूतेषु सहस्रारे प्रतिष्ठितः ।
सर्वसाक्षी जगद् व्यापी नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥३६४॥

अंशांशै रामनाम्नेश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोंकार सोऽहं च सूत्रैरुक्तमिति श्रुतिः ॥३६५॥

अथर्वशाखायाम् पूर्वतापिनी मन्त्र ४८–४९ ।

ततः सिंहासनंस्थः सन् द्विभुजो रघुनन्दनः ।
धनुर्धरः प्रसन्नात्मा सर्वाभरण भूषितः ॥३६६॥

मुद्रां ज्ञानमयी यामे वामे तेजः प्रकाशनम् ।
धृत्वा व्याख्याननिरतश्चिन्मयः परमेश्वर ॥३६७॥

इन सभी की टीका पूर्व में हो चुकी है ।

श्रीराम नाम वैराग्य-योग-भक्ति परिपूर्णम्ब्रह्मणो वाक्यम् । अत्रोच्चते—

अक्ष्योऽमक्षत सूयं परिदधासि वशिष्ठ त्वम् । पुरोधासि स एव ब्रह्मोद्भवं परि पश्यन्तु धीराः । अनन्यमनसा चिन्तयन्तु देवाः स्वर्गेषु यज्ञाय आप्यायतांधियः । कोशिकेन समग्रंवपुः

विलीयताम् । देवाः वीरोऽसि बहुभ्योरसि सूर्यं मङ्गलायताम् प्रधानानि यज्ञासीत् ॥३९८॥

श्रीराम नाम वैराग्य योग तथा भक्ति प्रेम से परिपूर्ण है, ऐसा यजुर्वेद में श्री ब्रह्मा जी का वाक्य है, जो यहां कहा जा रहा है ॥३९८॥

महारामायणे सर्ग ४८ श्लोक ५१–५२ ।

तथा पुरुषचिन्हेन तत्सद् ब्रह्म प्रकाशकः ।
परमात्मा परंब्रह्म सर्वसाक्षी जगद्गुरुः ॥३९९॥
यस्यध्यान समायुक्तः योगिनो नित्यमेव च ।
रामरूपस्य तेजोऽयं ब्रह्मवेद प्रभाषितम् ॥४००॥

वशिष्ठ संहितायाम्—

सच्चिज्ज्योतिर्मयं ब्रह्म निरीहं निर्विकल्पकम् ।
निर्विशेषं निराकारं ज्ञानकारं निरञ्जनम् ॥४०१॥
निर्वाच्यं निर्गुणं नित्यं अनन्तं सर्वसाक्षिकम् ।
इन्द्रियैर्विषयैः सर्वे अग्राह्यं तत्प्रकाशकम् ॥४०२॥

मनुस्मृतौ—

अंशभूताः विराट्ब्रह्म विष्णुरुद्रास्तथा परे ।
ब्रह्मतेज घनीभूताः वर्तन्ते जानकीपतेः ॥४०३॥

इनकी टीका पहले हो चुकी है ।

श्रुत्याह—

एष ब्राह्मणः वशिष्ठस्याह । प्रयोजनाय यज्ञाः केषुचानु वंशस्य कृतोद्भवः । आचरणाय कर्मणे सर्वस्याप्रमेयानि कर्माणि नाहं बभूव । एवस्तु ज्ञेयं समीचीनैः । तन्नो गृहाणिकाले काले मङ्गलाय परिपूर्ण ब्रह्मलोकादिशंगताः । पूज्यमान स आपः सुमनस्य मनोभवः देवर्षिगच्छन्तु । परे मङ्गलमास्तान चिन्मयोः । सम्मेलन विधिः संगोयताम् ॥४०४॥

श्री वशिष्ठ संहितायाम् —

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामो दाशरथिः स्वराट् ॥४०५॥
यस्मानन्तावताराश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मेशाः परंब्रह्मस्वरूपभाः ॥४०६॥
स एव सच्चिदानन्दो विभूतिद्वयनायकः ।
वात्सल्याद्यद्भुतानन्तकल्याणगुण वारिधिः ॥४०७॥
राजेन्द्र मुकुटः प्रोद्यत रत्ननीराजितांघ्रिणा ।
पित्रा दशरथेनैव वात्सल्यामृत सिन्धुना ॥४०८॥
गर्भोदक निवासीं च क्षीरार्णव निवासकृत ।
श्वेतद्वीपाधिपश्चैव रमावैकुण्ठनायकः ॥४०९॥
सलोकाः सगणाः सर्वे मथुरा च महापुरी ।
पुरी द्वारावती नित्या काशीलौकैक वन्दिता ॥४१०॥
काञ्ची मायापुरी दिव्या तथा चावन्तिका पुरी ।
अयोध्यामेव सेवन्ते चतुर्थावरणे स्थितः ॥४११॥

श्रीमद् वाल्मीकी रामायणे अयोध्याकाण्डे—

रामस्य पुरुषोलोके सत्यधर्मयशोगुणैः ।
समो न विद्यते कश्चित् विशेषश्च कुतः पुनः ॥४१२॥

श्रुतिः—

ब्रह्माण्डानामसंख्यानां ब्रह्म विष्णुहरात्मनाम् ।
उद्भवे प्रलयेहेतुः राम एव इति श्रुतम् ॥४१३॥

सनन्तकुमार सहितायां श्रीरामस्तवराजे नारद वचनम्—

अशेष वेदात्मकमादिसंज्ञं अजं हरिं विष्णुमनन्तमाद्यम् ।
अपारसंवित् सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ॥४१४॥

इन सबका अर्थ पहले हो चुका है ।

।। श्री अयोध्या वर्णनम् ।।

अष्टचक्रानवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गज्योषितावृतः ।।४१५।।
यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतां पुरम् ।
तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माश्च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः ।।४१६।।

—अथर्ववेद, दशमकांड प्रथम अनुवाक् द्वितीय सूत्र मंत्र २९–३१ ।

यह श्री अयोध्या पुरी हैं जो आठ चक्र अर्थात् आवरणों वाली है। जिसमें प्रधान नवद्वार है जो दिव्य गुण सम्पन्न प्रपत्तिनिष्ठ परम भहा भागवतों से सेवित है। उस अयोध्या पुरी के मध्य भाग में बहुत ऊंचा तथा परम सुन्दर प्रकाश पुञ्ज से आच्छादित सुवर्णमय महामण्डप है। जो कोई परब्रह्म श्रीराम की उस दिव्य पुरी को जानता है उसको प्रभु तथा भगवान श्रीराम के दिव्य पार्षद-दिव्य चक्षु-दिव्य प्राण तथा दिव्य प्रज्ञा प्रदान करते हैं ।।४१५–४१६ ।।

पद्मपुराणे अयोध्या महात्म्ये—

अकारो वासुदेव स्यात् यकारस्तु प्रजापतिः ।
उकारो हररूपस्त्वयोध्यायां त्रयीश्वराः ।।४१७।।

अकार वासुदेव है यकार प्रजापति ब्रह्मा है, उकार शिव स्वरूप है। इस प्रकार अयोध्या शब्द में तीनों देवताओं का निवास है ।।४१७।।

रुद्रयामले अयोध्यां महात्म्ये—

ब्रह्मा प्रोक्तः अकारश्च यकारो विष्णुरुच्यते ।
धकारोरुद्ररूपश्च अयोध्यायां विराजते ।।४१८।।

अकार ब्रह्मा-यकार विष्णु-धकार रुद्र तथा मात्रायें अन्य देवताओं के रूप में अयोध्या नाम में विराजते हैं ।।४१८।।

यस्यां भाति प्रमोदकानन वरं रामस्य लीलास्पदं-
यत्र श्रीसरितां वरा च सरयू रत्नाङ्किता शोभते ।
ध्येया ब्रह्म महेश विष्णुमुनिभिः या नन्ददा सर्वदा-
साऽयोध्या परमात्मनो विजयते धाम्नांपरा मुक्तिदा ।।४१९।।

वशिष्ठ संहितायाम्—

अथ श्रीरामचन्द्रस्य यद्धाम प्रकृतेः परम् ।
सच्चिद्घन परानन्दं नित्यं साकेत संज्ञकम् ।।४२०।।
यदंश वैभवालोका वैकुण्ठाद्याः सनातनाः ।
सप्तावरणानि तस्याहं वक्ष्यामि मुनिसत्तमः ।।४२१।।
एकैकस्यां दिशिः श्रीमान् दशयोजन सम्मितः ।
अयोध्यायां बहिर्देशः स वै गोलोक संज्ञकः ।।४२२।।

हे मुनिश्वर भरद्वाज ! अब मैं प्रकृति से पर सच्चिद् परमानन्दमय जो श्री साकेताख्य परमधाम है जिसके अंश वैभव से श्री वैकुण्ठादिक सनातन लोक प्रकाशित हैं उसके दिव्य धाम के सातों आवरणों का मैं वर्णन करता हूँ । श्री अयोध्या के बाहर चारों ओर जो दश-दश योजन विस्तीर्ण दिव्य प्रदेश है वही प्रभु की क्रीड़ा भूमि गोलोक है ।।४२२।।

महारामायणे—

गोलोकाच्च परंज्ञेयं साकेतान्तः पुरं प्रिये ।
गोप्या गोप्यतरा गोप्या साऽयोध्यातीव दुर्लभा ।।४२३।।
पुंसामगोचर स्थानं सखादास विर्वाजितम् ।
महापुरुषरूपेण श्रीरामो हि विराजते ।।४२४।।
अनन्त सखिभिः सार्धं रामचन्द्रस्तु सीतया ।
स्वेच्छया कुरुते रासं ताः सर्वा गात्रसम्भवाः ।।४२५।।
सर्वाभरण सम्पन्नो रत्नाद्यैः विविधैर्वरैः ।
मध्येवयः किशोरश्चानन्तरूपो रघूत्तमः ।।४२६।।
किशोर्य्य सकला सख्यः भूषिताश्चन्द्रिकादिभिः ।
जानकी रामरूपास्ताः महालक्ष्म्यादि संयुताः ।।४२७।।
शृणुष्व सुभगेमत्तो विस्तरेण कथां पराम् ।
रामराससमाविष्टां प्रवक्ष्येत्वद् हिताय वै ।।४२८।।

इसकी टीका हो चुकी है ।

अथर्वशाखायाम् उत्तरार्द्ध—

ॐ याऽयोध्या सा सर्ववैकुण्ठानामेवमूलाधारा प्रकृत्तेः परा तत्सद् ब्रह्ममयी विरजोत्तरा दिव्यरत्न कोशाढया तस्यां नित्यमेव श्रीसीतारामयोर्विहारस्थलमस्ति ।।४२९।।

इनकी टीका हो चुकी है।

श्री वशिष्ठसंहितायाम्—

सर्वेभ्यश्चापि लोकेभ्यश्चोर्ध्वं प्रकृति मण्डलात् ।
विरजायाः परेपारे वैकुण्ठं यत्परं पदम् ।।४३०।।
तस्मादुपरि गोलोकं सच्चिदन्द्रिन्द्रिय गोचरम् ।
तन्मध्ये रामधामास्ति साकेतं यत्परात्परम् ।।४३१।।
एभ्यः परतमं धाम श्रीरामस्य सनातनम् ।
पृथिव्यां भारतवर्षे ह्ययोध्याख्यं सुदुर्लभम् ।।४३२।।
अखंड सच्चिदानन्द सन्दोहं परमाद्भुतम् ।
वाङ्मनोगोचरातीतं त्रिषु कालेषु निश्चलम् ।।४३३।।
विभोति सरयूर्यत्र पश्चिमादि त्रिदिक्षु च ।
विरजाद्याः सरिच्छ्रेष्टाः प्रकाशन्ते यदंशतः ।।४३४।।

प्रकृति मण्डल के सभी लोकों से ऊपर विरजा के उस पार श्री वकुण्ठ नाम का परमधाम है। उससे ऊपर दिव्य सच्चिदानन्द दिव्य इन्द्रियों द्वारा दिव्यात्माओं का निवास गोलोक है। उसके मध्य में श्रीराम जी का परात्पर धाम श्री साकेत धाम है। यह रामजी का परात्पर सनातन धाम है। इसी का प्रतिरूप पृथ्वी में भारत वर्ष में अत्यन्त दुर्लभ श्री अयोध्या धाम है। यह परम अद्भुत अखण्ड सच्चिदानन्द स्वरूप है। यह मन वाणी से अगोचर तीनों काल में एक रूप अविचल धाम है। इसके तीन ओर पूर्व-पश्चिम उत्तर श्री सरयू जी की धारा प्रवाहित होती है। जिसके दिव्यांश से श्री विरजादिक परम श्रेष्ठ नदियाँ प्रकाशित होती हैं।४२९–४३४।।

रुद्रयामले अयोध्या महात्म्ये—

न योध्या सर्वतो यस्मात् नामायोध्यां ततो विदुः ।
श्रुति स्मृति पुराणादि इतिहासेन शोभिता ।।४३५।।

अकारो ब्रह्मा च प्रोक्तः यकारो विष्णुरुच्यते ।
धकारो रुद्ररूपश्च अयोध्या नाम राजते ।।४३६।।

जो सभी प्रकार से युद्ध में जीती न जाय उसका नाम अयोध्या है। जो श्रुति-स्मृति-इतिहास पुराणों में प्रकाशित हो रही है। अकार ब्रह्मा है, यकार श्री विष्णु है धकार श्री शंकर जी हैं। या सभी देवताओं का वाचक है। इस प्रकार अयोध्यापुरी सर्वदेवमयी है ।।४३५-४३६।।

अथर्वेदे—

अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्मयः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ।।४३७।।
यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतां पुरम् ।
तस्मै ब्रह्म च ब्रह्मा च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः ।।४३८।।

इसकी टीका पहले हो चुकी है।

वशिष्ठसंहितायाम्—

सच्चिद् घन परानन्दं नित्यं साकेत संज्ञकम् ।
यदंश वैभवा लोका वैकुण्ठाद्याः सनातना: ।।४३९।।

वह सच्चिद् घनानन्द रूप परमानन्द श्री साकेत नाम का धाम है। जिसके अंश वैभव से श्री वैकुण्ठादि सनातन सभी दिव्य लोक प्रकाशित हो रहे हैं ।।४३९।।

शिवसंहितायाम्—

सर्वोत्कृष्टं तु यद्धाम तं नैव प्रकृतेर्गुणाः ।
संस्पृशन्ति क्वचित् तत्र पद्मपत्रमिवाम्भसा ।।४४०।।

यह सर्वोत्कृष्ट प्रभु श्रीराम का परम धाम है। इसको प्रकृति के गुण कमल पत्र को जल बिन्दु के समान कभी भी स्पर्श नहीं करते हैं। ।।४४०।। पद्मपुराणे—

मथुराद्याः पुरः सर्वाः अयोध्यापुर दासिकाः ।
अयोध्यामेव सेवन्ते प्रलयेऽप्रलयेऽपि च ।।४४१।।

अथर्वशाखायाम् श्री रामोत्तरतापनीये कंडिका ३, मंत्र ३-४-५ ।

श्रीराम सनिध्यवशात् जगदानन्ददायिनी ।
उद्भव स्थिति संहारकारिणी सर्व देहिनाम् ।।४४२।।
सा सीता भगवती प्रोक्ता मूलप्रकृति संज्ञिता ।
प्रणवत्वात् प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्म वादिनः ।।४४३।।

ॐ इति एतदक्षरं सर्वस्योपरि व्याख्यानं भूतं भव्यं भविष्यदिति सर्वं ओंकार एव यच्चान्यं त्रिकालातीतं तदप्योंकार एव सर्वं । सर्वं धृतते तद् ब्रह्माऽयमात्मा ब्रह्म इति उपनिषद् ।।४४४।।

इनकी व्याख्या पहले हो चुकी है ।

सदा शिवसंहितायाम् श्री महाविष्णु प्रति—

आनन्दावयव भिन्ना नित्यलीला सविग्रहा ।
सर्वशक्तिमयी धात्री सर्वशक्तिवरा तथा ।।४४५।।
प्रेमानित्या सुखोत्पत्तिर्निन्यरूपा चिदात्मका ।
ज्ञानमयी ज्ञानभूता ज्ञानदा ज्ञप्ति मात्रिका ।।४४६।।
अर्धमात्रात्मिका शश्वत् बिन्दुनादस्वरूपिणी ।
ब्रह्मोत्पत्ति रसावेशा ब्रह्मैकपदमव्यया ।।४४७।।
निष्कलापि कलाधीशा निर्गुणापि गुणात्मिका ।
नित्योत्सवा परास्निग्धा रामावयव सम्भवा ।।४४८।।
विश्वोत्पत्तिर्गुणाभासा जगदानन्द कारिणी ।
रामस्य सानिध्यवशात् करोति विकरोति च ।।४४९।।
इन्दुकोटि सहस्राणां ब्रह्माण्डानां शतानि वै ।
लीला मात्रं जगद्धात्री श्रीसीतायाः निबोध मे ।।४५०।।

श्री जानकी जी का स्वरूप वर्णन करते हैं कि वे आनन्द रूपिणी है, आनन्द स्वरूप प्रभु से अभिन्न हैं, नित्य लीला विधायिनी है । लीला रस विग्रहा हैं । सर्व शक्तिमयी एवं सभी शक्तियों की जननी हैं तथा सभी शक्तियों की शिरोमणि हैं । प्रेम रूपिणी है, नित्य है, सुख की

उत्पत्ति आप से ही होती है, नित्य सुख स्वरूपा हैं । सच्चिदानन्द की आत्मा है । ज्ञानमयी है, ज्ञान स्वरूपा है, ज्ञान देने वाली हैं तथा ज्ञान मात्रिका हैं, अर्धमात्रात्मिका है, बिन्दु नाद स्वरूपिणी है, ब्रह्म रस की उत्पत्ति करने वाली है, रस के आवेश में रहती हैं, ब्रह्म पद वाच्य एक अव्यय स्वरूपा है । स्वयं किसी की कला न होकर सभी कलाओं की स्वामिनी है । प्राकृत गुणों से रहित दिव्य कल्याण गुणगणागार हैं । नित्य उत्सवरूपा है, परात्पर है, अत्यन्त स्नेहमयी है, लोला कला में श्रीराम के वामाङ्क से समुत्पन्ना हैं । विश्व की उत्पत्ति तथा गुणों का विकास करने वाली है । जगत को परमानन्द प्रदायिनी है । श्रीराम जी के सानिध्य मात्र से ही संसार की उत्पत्ति-प्रलय-पालन करने वाली हैं, ये सम्पूर्ण संसार श्री सीताजी की ही लीला मात्र है । करोड़ों चन्द्रमा तथा सैकड़ों ब्रह्माण्ड की रचियता श्री सीताजी हैं, यह मेरे वचन द्वारा आप समझ लें ।।४४५–४५०।।

शिबसंहितायाम्—

नित्य मात्रात्मिका नन्दा सर्वैश्वर्य रसोत्सवा ।
अर्धमात्रात्मिका नित्या ॐकाराक्षर सम्भवा ।।४५१।।

श्री सीताजी नित्य मात्रात्मिका, सभी ऐश्वर्य सम्पन्ना एवं सदैव रसोत्सवमयी हैं । अर्धमात्रात्मिका तथा ॐकार के अर्थ द्वारा उत्पन्न ज्ञान स्वरूपा हैं ।।४५१।।

मार्कण्डेय संहितायाम् श्री जानकी नवरत्न माणिक्ये ब्रह्म वाक्यं—

वर्णत्रयेति भुवनत्रय महिनीति वागीश्वरीति वसुधाधर कन्यकेति । कमलालयेति कवयः सततं भजन्ति अम्बत्वदीय महिमां गणयन्नशेषः । पद्मे पद्मासनस्थे परिमल भरिते बालार्क कोटिद्युते पद्मालंकृत हस्तपद्मयुगले पद्मालये पद्मिनी ।।४५२।।

पद्मोल्लास विशालशोभिनयने पद्मप्रिये पावने-
पद्मे राम मनोहरे हरि हर ब्रह्मादि पीतस्तने ।।४५३।।

अजाण्ड प्रभानन्त यन्त्राधिरूढे प्रकाराच चिन्मात्र मन्त्राधिवासे ।
हरिब्रह्मरुद्रादि विमृग्यप्रभावे भजे सन्ततंतारकब्रह्मरूपे ।।४५४।।

"अ-उ-म" अथवा "र-अ-म" तीन वर्णमयी, तीनों भुवनों को विमोहित करने वाली, वागीश्वरी, श्री बिदेह राज नन्दिनी, कमल वासिनी इत्यादि नामों से कविजन जिनका भजन करते हैं ऐसी हे अम्मा ! आपकी महिमा की गणना तो शेष भगवान भी नहीं कर सकते हैं। हे पद्मे ! कमल के आसन पर विराजमान, प्रेम परिमल से भरपूर, करोड़ों बाल सूर्य के समान प्रभा वाली कमल पुष्प से अलंकृत हस्त कमलों वाली, हे कमल वासिनी ! हे श्री कमले। कमल के समान उल्लासपूर्ण बिलास से सम्पन्न सुशोभित विकसित खिले हुए नयनों वाली, प्रभु के मुख कमल से प्रीति करने वाली, परम पावनी, हरिहर ब्रह्मादिकों को करुणामय स्तनों का प्रेम रस पिलाने वाली हे श्री किशोरी जी आप मुझ पर कृपा करें।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड रूपी यन्त्रराज पीठ पर आप विराजमान हैं, विविध प्रकार की अर्चना रूपी चिन्मय मन्त्रों में आपका निवास है। हरि-हर-ब्रह्मा आपके प्रभाव का चिन्तवन करते हैं, ऐसी हे श्रीरामतारक ब्रह्म स्वरूपिणी श्रीराम परब्रह्म की कान्ता श्री जानकी जी मैं आपका निरन्तर भजन करता हूँ ।।४५२–४५४।।

—अगस्त संहितायां श्री जानकी स्तवराजे, श्लोक ३९।

किं चित्रमत्रजननि ! प्रभयाप्रकाश्यं विश्वं
वदन्ति मुनयस्तव देवि देवाः।
जाताश्रयस्त्रिभुवनैगुणतोऽभिवन्द्यस्त्राणा-
दिकर्म विभवं परमस्य यस्याः ।।४५५।।

हे माता ! शास्त्र तत्व का मनन करने वाले मुनिजन श्रेष्ठ तथा दिव्य ज्ञान सम्पन्न देव देवेन्द्र विश्व को आपकी प्रभा से ही प्रकाशित होना कहते हैं। हे देवि ! विश्व के संरक्षण आदि कार्य को आपका सर्वोत्कृष्ट वैभव बतलाते हैं, तब आपका शरणागत प्रेमीजन उत्तमोत्तम गुणों से त्रिलोकी में सर्वप्रकार से वन्दनीय हो जाय तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? ।।४५५।।

अथर्वशाखायाम्—

"जनकस्य राज्ञः सद्मनि सीतोत्पन्ना सा सर्वपरानन्दमूर्तिः गायन्ति मुनयोऽपि देवाश्च कार्यकारणाभ्यामेवपरा। तथैव

कार्यकारणार्थे शक्तिर्यस्याः विधात्री श्री गौरीणां सैव कर्मी रामानन्दस्वरूपिणी सैव जनकस्य योगफलमिव भाति ।"।४५६।

इस श्लोक की टीका पूर्व में हो चुकी है ।

श्री लक्ष्मणवाक्यं वेदान् प्रति—

इन्द्र कोटि सहस्राणि ब्राण्डानां शतानि च ।
लीलामात्रं जगद् धात्री सीतायास्ते निबोध मे ।।४५७।।
तया देव्या परावेदाः काले काले प्रसूयते ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो ऋषयस्तथा ।।४५८।।
भवकाले नृणां सैव राजसी शक्तिरूपिका ।
जगतां पालने शक्तिर्लक्ष्मी रूपाऽभवत् पुनः ।।४५९।।
संहारे सा मनः प्राप्ते तामसी शक्तिरुत्तमा ।
विश्वकर्मा विश्वगर्भा मूलप्रकृति संज्ञका ।।४६०।।
यस्याः कटाक्षमात्रेण ब्रह्माण्डानां सहस्रशः ।
आविर्भावस्तिरोधानं किं पुनः शक्तिरेकधा ।।४६१।।
सा तु देवी परानित्या सोऽथ रामः परः स्वयम् ।
तयोरैक्यं विजानीयात् कार्यकारणकारणात् ।।४६२।।
ज्ञानमात्रात्मिका नित्या सर्वैश्वर्य रसोत्सवा ।
अर्धमात्रात्मिका नित्या ॐकाराक्षर संभवा ।।४६३।।

श्री लक्ष्मण जी वेदों को समझाते हैं कि—उन्हीं श्री परात्परा श्री सीता देवी से समय-समय पर वेद उत्पन्न होते हैं । ब्रह्मा-शिव-विष्णु देवेन्द्र तथा ऋषि-मुनि आदि उत्पन्न करने के समय श्रीजी राजसी शक्ति का स्वरूप धारण करती हैं । जगत का पालन करने के समय वे ही सात्विक लक्ष्मी का स्वरूप लेती हैं । संहार करने की इच्छा होती है, तब तामसी शक्ति बन जाती है । वही विश्व की करने वाली, विश्व को गर्भ में धारण करने वाली मूल प्रकृति कहलाती है । जिसके भृकुटि विलास मात्र से ही हजारों ब्रह्माण्डों का आविर्भाव होता है । एवं तिरोधान भी

हो जाता है तब फिर उनको एकाध महान् शक्ति के ह्रास-विकास में क्या देर लग सकती है ? वही परब्रह्म श्रीराम की पराशक्ति हैं, नित्य है, तथा श्रीराम ही स्वयं परात्पर प्रभु हैं, उन दोनों की एकता है, सभी कार्य कारणों का ये युगल प्रभु ही कारण है। वह ज्ञान स्वरूपिणी हैं, अर्धमात्रा स्वरूपिणी है, सर्वैश्वर्य तथा सम्पूर्ण रस एवं उत्सवानन्द की प्रत्यक्ष प्रतिमा है। ॐकार के रहस्यार्थ का तात्पर्य स्वरूपिणी श्री सीताजी ही हैं ।।४५७-४६३।।

श्री वशिष्ठसंहितायाम्—

साकेतपूर्व दिग्भागे श्रीमती मिथिलापुरी ।
सर्वाश्चर्यमयी नित्या सच्चिदानन्द रूपिणी ।।४६४।।
हर्म्यैं प्रासादवर्यैश्च नानारत्न परिष्कृतैः ।
विमानैः विविधैरुच्चैश्चित्र ध्वजपताकिभिः ।।४६५।।
भ्राजते परिखादुर्गो विविधोद्यान संकुला ।
तस्यां श्रीमन्महाराज सीरकेतुः प्रतापवान् ।।४६६।।
श्वसुरो रामचन्द्रस्य वात्सल्यादि गुणार्णवः ।
निमिवंशध्वजः शूरः चतुरङ्ग बलान्वितः ।।४६७।।
वेद वेदान्त तत्त्वज्ञः सर्वशास्त्र विशारदः ।
धनुर्वेद विदां श्रेष्ठः सर्वैश्वर्य समन्वितः ।।४६८।।
श्रीमतीभिः स्वपत्नीभिः परिवारैरनेकशः ।
दासीदास गणैर्नित्यं सेवितो वसति स्वराट् ।।४६९।।

नित्यधाम श्री साकेत के पूर्व भाग में श्री मिथिलापुरी विराजती हैं। वह सर्वप्रकार के महान् आश्चर्यों से भरी हुई नित्य है। सदैव सच्चिदानन्द स्वरूपिणी है। बड़े-बड़े भवन और मन्दिरों के शिखरों से सुशोभित है। नाना प्रकार के रत्नों से जटित है। विविध प्रकार के विमानों से तथा ऊँची-ऊँची ध्वजा पताकाओं से अलंकृत है। चारों ओर परिखा तथा कोट शोभा बढ़ा रहे हैं। सुन्दर वन-उपवन तथा बाग-बगीचों से सुसम्पन्न है। उसमें विदेह महाराज श्री सीरध्वज महाराज महान प्रतापशाली

विराजते हैं। जो श्री रामचन्द्र जी के श्वसुर तथा श्री जानकी जी के पिता जो हैं। वात्सल्यादिक गुणों के सागर हैं, निमि वंश के ध्वजा के समान शूरवीर हैं, चतुरंगिणी सेना से सम्पन्न रहते हैं। वेद-वेदान्त के तत्व को जानने वाले तथा सभो शास्त्रों को जानने वालों में सर्वश्रेष्ठ हैं। धनुर्वेद शस्त्रास्त्रों के ज्ञाताओं में शिरोमणि हैं, सर्वप्रकार के ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं। अपनी श्रीमती महाराणी श्री सुनैना आदि पत्नियों के तथा अनेक परिवार एवं परिवार के स्वजनों सहित विराजते हैं। दासी-दास जनों द्वारा सुसेवित आप स्वयं स्वतन्त्र सम्राट हैं ।।४६२–४६६।।

ब्रह्माण्ड पुराणे—

श्रीतायास्त्रयोप्यंशा श्रीभूलीलादि भेदतः।
श्रीभवेद् रुक्मिणी साक्षात् सत्यभामा दृढव्रता ।।४७०।।
लीलास्याद्राधिका देवी सर्वलोकैक पूजिता।
जानक्यां तु परां प्राहुः शाश्वतीरामबल्लभा ।।४७१।।

इनकी पूर्व में टीका हो चुकी है।

पद्मे पुराणे—

नीलाम्भोजदलाभिरामनयनां नीलाम्बरालङ्कृताम्-
गौराङ्गी शरदिन्दु सुन्दरमुखीं विस्मेरबिम्बाधराम् ।।
कारुण्यामृत वर्षिणीं हरिहरब्रह्मादिभिर्वन्दिनां-
ध्यायेद्भक्तजनोप्सितार्थफलदां रामप्रियां जानकीम् ।।४७२।।

नील कमलदल के समान अति सुन्दर विशाल नयनों वाली, नील रंग की साड़ी धारण किये हुए, गौराङ्ग बर्ण वाली, शरदपूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाली, विस्मय प्रदायक आश्चर्य करने वाले लाल अरुणारे ओठ वाली, निरन्तर करुणा रूपी अमृत रस बरसाने वाली ब्रह्मा-विष्णु-शिव-इन्द्र-चन्द्र-सूर्यादिक देव गणों द्वारा वन्दित पूज्य श्री चरणों वाली सभी भक्तों के मङ्गलमय मनोरथों को पूर्ण करने वाली, श्री रामवल्लभा श्री जानकी जी का ध्यान करें ।।४७२।।

श्री हनुमत्संहितायाम् अध्याय ५ श्लोक ७१।

जयति जनकजायाः पादपद्मं मनोज्ञं-
हरि हर विधि वन्द्यं साधकानां सुसेव्यम्।

नखर निकर कान्त्यै मुद्रिका नूपुराद्यै

रहरह हृदि मध्ये योग योगीश भाव्यम् ।।४७३।।

जय हो, श्री जनकनन्दिनी जू के मनोहर श्रीचरणों की सदैव जय हो, जो हरि-हर-ब्रह्मादिक देवताओं के वन्दनीय तथा साधकों द्वारा सुन्दर सेवनीय है, नखों की किरणों की कान्ति से चमकते हुए, नूपुर तथा अंगुठिओं से सुशोभित हैं, तथा योगीजनों द्वारा एवं स्वयं योग के द्वारा निरन्तर रात दिन हृदय में भावनीय हैं उनकी सदा जय हो, विजय हो ।।४७३।।

श्री सीताप्रभाव वर्णनम् अगस्त्य संहितायाम्—

श्री जानकीस्तवराज—श्लोक २७, ४१ ।

वक्त्रेन्दुमिन्दुचय खण्डित मण्डितांशु-

खण्डांशपण्डितमनः परिदण्डितानाम् ।

सम्माल साब्जमुदितद्युतिदं वरेण्यं-

रामाक्षितारक चकोरमहं भजेते ।।४७४।।

जातंत्वदेव नितरां जगतां निदानं-

मन्यावहे तदिदमम्ब ! कृतं श्रुतीनाम् ।

सर्वं यतः खलु विचेष्टितमाशु शक्तेः

कार्यंहिकारणगुणानवलम्ब्य विधात् ।।४७५।।

हे देवि ! चन्द्रों के समूह के सौन्दर्य का मद खण्डित करने वाले, चन्द्रिका के किरणों से सुमण्डित-न्याय शास्त्र के पण्डितों के मद को खण्डित करने वाले, भक्तों के मानस रूपी कमल को प्रकाशित करने वाले वरणीय श्री रामजी के नेत्रों के तारों को चकोर बना देने वाले आपके श्रीमुख चन्द्र का मैं भजन करता हूँ। हे मां ! जगत का अतिशय आदि कारण महत्वादिक आप से ही उत्पन्न हुए हैं यह श्रुतियों का अभिप्राय हम मानते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् आदि शक्तियों की चेष्ठा का ही शीघ्र फलस्वरूप प्रत्यक्ष दीखता है, क्योंकि कार्य अपने कारण के ही गुणों का अवलम्बन ग्रहण करके स्थिर होता है, शक्ति के बिना किसी की चेष्टा देखने में नहीं आती है, इसीलिये श्रीराम जी की परात्पर शक्ति स्वरूपा आप ही जगत का कारण हैं यह श्रुतियों का अभिप्राय है ।।४७४–४७५।।

श्रुत्याह:—

अखण्डात् ब्रह्मणो रामात् प्रेरकः पुरुषस्तथा । प्रकृतिर्महान् प्रकृतेस्ततो ह त्रिगुणात्मकः । तस्माद् वा एतस्मात् आत्मनः आकाशः सम्भूतः । आकाशात् वायुः । वायोरग्निः । अग्नेरापः । अद्भ्यः पृथिवी । पृथिव्यारोषधिः । ओषधिभ्य अन्नम् । अन्नात् रेतः । रेतसः पुरुषः । स एष पुरुषः अन्नरसमयः । तस्येदमेव शिरः । अयं दक्षिण पक्षः । अयमुत्तरः पक्षमात्मा इदं मूलं प्रतिष्ठामि ।।इति श्रुतिः ।।४७६।।

अखण्ड परम ब्रह्म श्रीराम ही सबके प्रेरक परम पुरुष हैं । पुरुषोत्तम से प्रकृति, प्रकृति से महान् । महत्त्व से त्रिगुणात्मक संसार है । उसी पुरुष आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि । अग्नि से जल, जल से पृथ्वी । पृथ्वी से औषधि । औषधियों से अन्न । अन्न से वीर्य । वीर्य से पुरुष । यह पुरुष अन्न का रसमय स्वरूप है । यही इसका मस्तक है । दाहिना पक्ष पुरुष है । उत्तर वामपक्ष शक्ति है, प्रकृति है । आत्मा इसका मूल है, इसी मूल रूप आत्मा को प्रतिष्ठित करता हूँ । तात्पर्य यह है कि पुरुषोत्तम श्रीराम तथा उनकी शक्ति पराप्रकृति श्री सीता ही संसार का मूल वीज कारण है ।।४७६।।

अथर्वशाखायाम् रामपूर्वतापनीये २ उपदिषद् मन्त्र १४–१६ ।

स्वभूर्ज्योतिर्मयोनन्तरूपी स्वेनैव भासते ।
जीवत्त्वेनेदमोंयस्य सृष्टि स्थितिलयस्य च ।।४७७।।
कारणत्वेन चिच्छक्त्यारजः सत्त्वतमोगुणैः ।
यथैव वट बीजस्थं प्राकृतश्च महाद्रुमः ।।४७८।।
तथैव रामबीजस्थं जगदेतच्चराचरम् ।
रेफारूढामूर्तयः स्युः शक्तयास्तिस्त्र एव च ।।४७९।।

भगवान् किसी कारण की अपेक्षा न रखकर स्वतः प्रकट होते हैं । नित्य निरन्तर विद्यमान रहते हैं, अतः "स्वभूः" कहलाते हैं । चिन्मय

प्रकाश स्वरूप हैं, अतः ज्योतिर्मय हैं। देश-काल-वस्तु की सीमा से परे जिनका अन्त पाना असम्भव है अतः वे अनन्त हैं। उन्हें प्रकाशित करने वाली किसी दूसरी शक्ति का सामर्थ्य नहीं है, वे स्वतः ही प्रकाशित हैं। वे अपनी चैतन्य शक्ति से सबके भीतर जीवात्मा के अन्तर्यामी बन कर प्रतिष्ठित हैं अतएव वे ही सत-रज-तम स्वरूप धारण कर संसार की उत्पत्ति-पालन-प्रलय करने वाले हैं। जैसे वट का महान वृक्ष वट के छोटे से बीज में स्थित रहता है वैसे ही यह सचराचर जगत् श्रीराम नाम में प्रतिष्ठित है। राम तथा ॐ में तत्त्वतः अभेद है। इसलिये वेदों में 'राम' अथवा प्रणव भी जगत् का कारण माना जाता है ।।४७७–४७६।।

"सीतारामौ तन्मयावत्र पूज्यौ जातान्याभ्यां भुवनानि द्वि सप्त। स्थितानि च प्रहृतान्येवतेषु तत्तोरामो मानवो मायग्राधात् इति श्रुतिः ।।४८०।।

सुन्दरी तन्त्रे—

लिप्यन्तं त्रिविधं सीता कंकणाकृति शोभितम्।
चित्र काले भवेत्तत्र जानाति कवि पण्डितः ।।४८१।।
ब्रह्मेति तत्पदं विद्धि त्वं पदोंकार उच्यते।
सुदीर्घावसी प्रोक्ता तत्त्वमसि महामुने ।।४८२।।

इसकी टीका पहले हो चुकी है।

इस 'राम' वीज मन्त्र में प्रकृति तथा पुरुष में श्री सीता तथा श्री श्रीराम" दोनों युगल प्रभु ही पूजनीय हैं। इन्हीं दोनों से इन चौदह भुवनों की उत्पत्ति हुई है। इनमें ही सभी लोकों की स्थिति है तथा इनमें रकार अकार मकार में ही ब्रह्मा-विष्णु-शिव सबका ही लय अन्तर्भाव होता है। अतः श्रीराम ने माया (कृपा) रूपी श्री सीता से ही अपने को मानव देह धारण करने की सार्थकता मानी ऐसे जगत् के प्राण तथा आत्मा श्रीसीताराम जी को मेरा वारंवार नमस्कार है ।।४८०।।

।।इति द्वितीयो भागः ।।

अथ तृतीयो भाग

नित्यं नौमि परेश राम रमणं माधुर्य लीला परं-
रूपं राशि गुणाकरं सुखकरं लावण्य शोभावरम् ।
सौन्दर्यं वर शेष चैव सततं विरहन्ति सरयूतटे-
सीता सङ्गरसादि मोद करणं श्रीमान् सर्वेश्वरः ।।४८३।।

मैं श्रीराम जी का नित्य वन्दन करता हूँ, जो परात्पर परेश हैं, सबमें रमण करने वाले हैं, माधुर्य रस लीलाओं में परायण हैं, रूप के राशि हैं, गुणों के भण्डार हैं, सुख करने वाले हैं, लावण्य, सौन्दर्य तथा शोभा में सर्वश्रेष्ठ हैं। निरन्तर श्री लक्ष्मण जी के तथा श्री किशोरी जू के साथ सरयू तट पर विहार करते हैं, रस मोद आनन्द करने वाले हैं श्रीराम ही सर्वेश्वर हैं, उनकी मैं वन्दना करता हूँ ।।४८३।।

सुन्दरी तन्त्रे—

संकर्षणोऽपि यस्यांशः कलाशेषश्चिदात्मकः ।
विभूति शंकरः श्रीमान् विश्वसंहारकारकः ।।४८४।।
स एव राघवोभूत्वा लक्ष्मणोऽनु जगाम ह ।
गौराङ्गश्च महाबाहू तडित पीताम्बरावृतः ।।४८५।।

व्यूह स्वरूप संकर्षण भगवान भी जिनके अंशभूत हैं, चिदात्मक श्री शेष जिनकी कला हैं, विश्व का संहार करने वाले श्रीमान् भगवान शंकर जी जिनकी विभूति हैं, वही श्री लक्ष्मण जी रघुकुल में प्रकट होकर श्रीरामजी के अनुगामी बने हैं, वे गौराङ्ग दिव्य विग्रह महान् बलिष्ठ भुजाओं वाले पीले बिजली के समान वस्त्र धारण किये हुए हैं ।।४८४-४८५।।

शिवसंहितायाम्—

अक्षरार्थोऽधुनास्यैव विशदी क्रियते मनोः ।
बीजोक्तं उभयार्थत्वं रामनामानि दृश्यते ।।४८६।।

बीजं माया विनिर्मुक्तं परं ब्रह्मे ति कीर्त्यते ।
मुक्तिदं साधकानां तत् मकारो भुक्तिदो मनः ।।४८७।।
सारूपत्वादतो रामो भुक्ति मुक्ति फलप्रदः ।
आद्यो तत् पदार्थ स्यात् मकारस्त्वं पदार्थवान् ।।४८८।।
तयोः संयोगमसीत्यात्मा तत्त्वं तत्त्वविदोविदुः ।
तत्त्वमस्यादिवाक्यं तु केवलं मुक्तिदं यत् ।।४८९।।
भुक्ति मुक्तिप्रदं तस्मादप्यतिरिच्यते ।
रमन्ते योगिनो नित्यं यद्वा रमयति स्वकान् ।।४९०।।
निर्गुणः सच्चिदानन्दः सगुणश्चे ति कीर्त्यते ।
जीव वाचिनमोनाम आत्मारामेति गीयते ।।४९१।।
फलदं चैव सर्वेषां साधकानामसंशयः ।
यथा नामी वाचकेन नाम्नायोऽभिमुखो भवेत् ।
तथा बीजात्मको मन्त्रो मन्त्रिणोऽभिमुखा भवेत् ।।४९२।।

अब मन्त्र के अक्षरों का अर्थ विशद रूप में विवरण किया जाता है। श्रीराम मन्त्र का बीज "रां" ही रामनाम तथा मन्त्र दोनों में प्रकट दीखता है। यह बीज माया से रहित परब्रह्म का कथन करता है। वह साधकों को मोक्षप्रद है तथा 'मकार' सभी प्रकार के भोगों को देने वाला है। इन दोनों अक्षरों का एक साथ राम-नाम के रूप में जप करने वालों को भुक्ति-मुक्ति दोनों फल प्रदान करता है। आदि अक्षर 'र' तत् पदवाच्य परमात्मा का वाचक है तथा मकार 'त्वं' पद वाच्य जीव का वाचक है। दोनों का संयुक्त 'राम' नाम 'असी' पद जीवात्मा परमात्मा के सम्मिलन का बोध कराता है। अतः "तत्वमसि" आदि वेदान्त वाक्य केवल मोक्षप्रद ही है। परन्तु श्रीराम नाम भुक्ति-मुक्ति दोनों का देने वाला होने के कारण उन वाक्यों की अपेक्षा परम श्रेष्ठ है। जिसमें योगीजन नित्य रमण करते हैं अथवा जो अपने प्रेमी भक्तों को रमण कराते हैं वह राम माया गुण रहित निर्गुण सच्चिदानन्द एवं कल्याण गुणगणागार सगुण स्वरूप कहे जाते हैं। जीव वाचक मकार आत्मा में रमण करने वाले जीवनमुक्तों का वर्णन करता है। जैसे नाम लेकर किसी को बुलाने

से उन नाम वाला नामी पुरुष उसके सामने आता है वैसे ही प्रभु श्रीराम मंत्र का जप करने से श्रीराम का साक्षात्कार होता है। अतः यह साधकों को सभी प्रकार का फल निश्चय ही प्रदान करता है इसमें कोई संशय नहीं है ।।४८६–४९२।।

श्र.रामतापनीय उपनिषद् खण्ड १ मन्त्र ७।

चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्फलस्याशरीरिणः।
उपासकानां कार्यार्थे ब्रह्मणोरूपकल्पना ।।४९३।।

यद्यपि परब्रह्म चिन्मय-अद्वितीय प्राकृत अवयव रहित (पञ्च-भौतिक) शरीर से रहित है तथापि भक्तजनों के अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए वह सच्चिदानन्दमय दिव्य विग्रह को प्रकट करता है अर्थात् निराकार ब्रह्म भी भक्तों के स्नेह के वशीभूत होकर नराकार होकर दर्शन देता है। उपासकों के लिए वह सगुण साकार रसमय होकर के दर्शन देता ।।४९३।।

रूपस्थानां देवतानां पुंस्त्र्यंगास्त्रादि कल्पना।
द्विचत्वारि षडष्टांसा दश द्वादश षोडश ।।४९४।।
अष्टादशामी कथिता हस्ताशंखादिभिर्युताः।
सहस्रान्तास्तथा तासां वर्णवाहन कल्पना ।।४९५।।
शक्ति सेनाकल्पना च ब्रह्मण्येव हि पञ्चधा।
कल्पितस्य शरीरस्य तस्यसेनादिकल्पना ।।४९६।।

भगवान के स्वरूप में स्थित जो देवता हैं उन्हीं की पुरुष-स्त्री अङ्ग-अस्त्र आदि के रूप में कल्पना भावना होती है। अर्थात् भिन्न-भिन्न देवता ही अस्त्र आदि के रूप में भगवान राम की सेवा करते हैं, परन्तु वे भगवत्स्वरूप से पृथक नहीं हैं। भगवान जो अनेक प्रकार के स्वरूप धारण करते हैं उनमें किसी के दो, किसी के चार, किसी के छ, आठ-दस-बारह-सोलह तथा अठारह इतने-इतने हाथ कहे गये हैं। ये शंख आदि आयुधों से सुशोभित हैं। विश्व रूप धारण करने पर विराट भगवान के सहस्त्रों हाथ हो जाते हैं। उन सभी विग्रहों के भिन्न-रङ्ग और वाहनों आदि की भी कल्पना भावना होती हैं। उनके लिए उनके अनुरूप नाना

प्रकार की शक्तियों की तथा सेना आदि की भी कल्पना की जाती है। इस प्रकार परब्रह्म परमात्मा श्रीराम में विष्णु-शिव-दुर्गा-सूर्य-गणपति आदि के रूप में पञ्चविध शरीर की कल्पना की जाती है तथा उन सबके लिये भिन्न-भिन्न शक्ति-सेना आदि कल्पना-भावना भी होती है।४९-४९६।

महारामायणेऽपि—

रकारस्तत्पदो ज्ञेयस्त्वं पदोऽकार उच्यते।
मकारोऽसि पदं ज्ञेयं 'तत्त्वमसि' सुलोचने।।४९७।।

श्री शिवजी कहते हैं कि—हे सुन्दर नेत्र वाली पार्वती! वेदों का महावाक्य 'तत्त्वमसि' है वह भी श्रीराम नाम से ही प्रगट हुआ है। रकार 'तत्' पद का वाचक है, अकार 'त्वं' पद का वाचक है तथा 'मकार' 'असि' पद का वाचक है। इस प्रकार 'तत्त्वमसि' वाक्य भी 'राम' नाम में गतार्थ होता है।।४९७।।

सनत्कुमार संहितायाम्—

श्रीराम रामेति जनाः ये जपन्ति च सर्वदा।
तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः।।४९८।।

श्री राम-राम इस प्रकार जो सर्वदा निरन्तर जप करते हैं उनको भुक्ति तथा मुक्ति सहज ही प्राप्त हो जाती है। इसमें कुछ भी संशय नहीं है।।४९८।।

वृद्धमनुस्मृतौ—

सप्तकोटि महामन्त्राश्चित्त विभ्रमकारकाः।
एक एव परोमन्त्रौ राम इत्यक्षर द्वयम्।।४९९।।

महारामायणे—

इत्यादयो महामन्त्रा वर्तन्ते सप्तकोटयः।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनाम प्रकाशकः।।५००।।

नारायणादीनि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यग् भगवतस्तेषु रामनाम प्रकाशकः ।।५०१।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है ।

इत्युक्तरीत्या प्रमाणसंग्रहात् प्रणवादि अनन्तकोटि-मन्त्राणां श्रीराममन्त्रे पर्यवसानात् । यद्वा-यइमं मन्त्रं जपति तेनाधीतं सर्ववेदेषु श्रवणात् । स एव सर्वश्रुत्योक्तशुभकर्मफल प्राप्तोति । तेन सर्वं कृतं यः निर्मलात्मा पुरुषप्रसिद्धः इमं सर्वमन्त्राणामधिराज मन्त्रमधीयते । इदमेव श्रीराममन्त्रं यजनीयम् । सः विद्वान् अमृतीभूत्वा कैवल्यपदमापद्यते । शुद्धान्तः-करण आचार्यस्यानुग्रहेण प्राप्तोपदेशात् विदेहत्वं जीवन मुक्तात्मत्वञ्च आपादयति ।।५०२।।

इस प्रकार शास्त्रीय प्रमाणों से प्रणवादिक कोटि-कोटि मन्त्रों का श्रीराम मन्त्रराज में पर्यवसान होता है यह निर्विवाद सिद्ध है । अथवा जो इस मन्त्र को जपता है उसको श्रुति-स्मृति निरूपित सभी प्रकार के शुभ फलों की प्राप्ति हो जाती है, यह निःसंशय बात है । जिस निर्मल अन्तः-करण वाले प्रसिद्ध पुरुष ने मन्त्रों का राजाधिराज श्रीराममन्त्र को जप किया वह सर्वश्रेष्ठ है । यही श्रीराम मन्त्र जपनीय-भजनीय-यजनीय है ऐसा जानने वाला विद्वान पुरुष अमृत होकर कैवल्य पद प्राप्त कर लेता है । शुद्ध अन्तःकरण वाले आचार्य के अनुग्रहपूर्ण आशीर्वाद से उपदेश प्राप्त कर इस मन्त्र को ग्रहण करने वाला विदेहत्व जीवनमुक्त पद प्राप्त कर लेता है ।।५०२।।

निरतिशय परत्वपूर्ण रकारात्मके षडक्षर श्रीरामतारक मन्त्रे परब्रह्मस्य संस्थितिः । अतः स एव प्राधान्यत्वेन उपासितव्यं तेन सकला सफला श्रुतिः । अणिमादिकमष्टसिद्धि ऐश्वर्यादिक नवनिधि श्रीराममन्त्रप्रभावात् अचिरादेव प्राप्नोति । श्रीमद्राम मन्त्रः कथं प्रणवादि बहुकोटि मन्त्रैः योजनीयम् ।

तत्तु सर्वमन्त्रनियन्तृत्वात् तारक ब्रह्म उच्यते । श्रीराममन्त्रस्य सर्वेषां मनुष्यमात्रस्य अधिकारः इति वेदनीयम् ।।५०३।।

इस प्रकार निस्सीम परत्वपूर्ण रकारात्मक षडक्षर श्रीराममन्त्र में परब्रह्म परमात्मा श्रीराम की नित्य स्थिति है । अतः प्रधानतः उसी श्रीराम मन्त्र को उपासना करनी चाहिये । यही सभी श्रुतियों का सारांश सफल तात्पर्य है । अणिमादिक अष्ट सिद्धियां तथा ऐश्वर्यादिक नव निधियां इस श्रीराम मन्त्र राज के अनुष्ठान से अनायास ही जापक को तुरन्त प्राप्त होती हैं । ऐसे श्रीराम मन्त्र राज को प्रणवादिक कोटि-कोटि मन्त्रों के साथ विनियोग करने की क्या आवश्यकता है । यह तो श्रद्धा विहीन लोगों का काम है क्योंकि यह श्रीराममन्त्रराज सभी मन्त्रों का नियन्त्रण करने वाला है । तारक ब्रह्म कहलाता है । इस श्रीराम मन्त्र को प्राप्त करने का सभी मनुष्य मात्र को श्रद्धा-भक्ति से प्राप्त करने का अधिकार है यह जानना चाहिये ।।५०३।।

मुमुक्षुणां अपि वासना परित्यागेन स्वचरणारविन्द प्रापकत्वात । विरक्तानामपि कैवल्यैक भोगेन निरतिशय आनन्द प्रदायकत्वात् । आश्रमिणामपि ततः लौकिक विषय भोगार्थ करण कलेवरादिदानेन प्रेरकत्वात् । यतीनां विशेषतः स्वात्मानन्द प्रदातृत्वात् । एवं समष्टिरूपेण सर्वेषामपि कल्याणकारकत्वात् । सृष्टयनन्तरं तु विचित्र तत्तत् कर्मकृत् विचित्रकरण कलेवर देव-तियङ्-मनुष्यादि नामरूप विभागेन सर्वदशायां प्रत्येकस्य प्रेरकत्वात् । श्रीमद्राम एव ध्येयः ।।५०४।।

श्रीराम मुमुक्षुओं को वासना परित्याग कराकर अपने श्रीचरणारविन्दों की प्राप्ति कराता है । विरक्तों को भी कैवल्य पद का दिव्य निरातिशय आनन्द प्रदान करने वाला है । लौकिक सुख चाहने वाले आश्रम धर्म वालों को भी संसार सुख भोग का सामर्थ्य प्रदान करने योग्य दैहिक सुख सम्पन्न बनाने वाला है । योगियों को आत्मानन्द की अनुभूति कराने वाला है । इस प्रकार समष्टि रूप से सभी का परम कल्याण करने

वाला श्रीराम मन्त्रराज है। सृष्टि आरम्भ होने के पश्चात् देव-मनुष्य पशु-पक्षी आदि नाम रूप विभाग से सभी को सुख प्रदायक है। अतएव श्रीराम ही परम ध्येय है। यही सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त है ।।५०४।।

"प्रणवनिषेधः"

प्रणवशब्दः श्रीरामशब्दानन्तर प्रयोगः इति जानीयात् ।
अतः श्रीरामन्त्रे न प्रयोजनीयः ।।५०५।।

ॐकार श्रीराम नाम से ही उत्पन्न है, अतः श्रीराममन्त्र की अपेक्षा उसकी श्रेष्ठता न होने से राममन्त्र के साथ उसका प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।।५०५।।

"तारक व्युत्पत्तिः"---

संसार सागरात् तारयतीति तारकः ।
गर्भ-जन्म-जरा-मृत्यु भयात् तारयतीति तारकः ।
श्रीराममन्त्रः तारकब्रह्म उच्यते ।।५०६।।

जो संसार सागर से तारता हैं वह तारक है। जन्म-मृत्यु जरा-व्याधि आदि भय से तारता है अतः श्रीराम मन्त्र तारक ब्रह्म कहलाता है ।।५०६।।

प्रणवादि बहुकोटि मन्त्राणां तेषां सर्वेषां राजाधिराज
श्रीमद् राममन्त्रराज एव, तदेव तारकं ब्रह्म उच्यते ।।५०७।।

प्रणवादिक अनन्त कोटि भगवन्मन्त्रों का राजाधिराज श्रीमद् राम मन्त्र है, अतएव वही तारक ब्रह्म कहाता हैं।

मननाराधनात् मन्त्रो मन्त्राणां कल्पभूरुहः ।
मूलत्त्वात् सर्वमन्त्राणां मूलाधार समुद्भवात् ।।५०८।।
मूलस्वरूप भूतत्त्वात् मूलमन्त्र इति स्मृतः ।
सप्तकोटि महामन्त्राः उपमन्त्राश्च तादृशाः ।।५०९।।
वर्ण मात्रा स्वरा सर्वे मूलमन्त्रात्समुत्थिताः ।
तेनाधीतं श्रुतं तेन सर्वमन्त्रमनुष्ठितम् ।।५१०।।
मूलमन्त्र विजानाति यो विद्वान् गुरुदर्शितः ।

मूलविज्ञान मात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ।
अणिमादिक ऐवर्श्यं अचिरादेव जायते ।।५११।।
मनुष्याणां च सर्वेषामधिकारोऽस्ति देहिनाम् ।
मुमुक्षुणां विरक्तानां तथैवाश्रमवासिनाम् ।।५१२।।
रामोध्येयः प्रणवत्वाच्च यतीनां च विशेषतः ।
अत्युत्पन्न तारकत्वात् मन्त्रराजस्य यत्स्फुटम् ।।५१३।।
ॐ अर्धमात्रा विन्दुश्च नादो वर्णं क्रमेणषट् ।
तारकत्वात् तारकंतत् श्रुत्युक्तमवधार्यताम् ।।५१४।।

मनन आराधन करने से जो त्राण करता है, रक्षा करता है उसका नाम मन्त्र है । वह कल्प वृक्ष के समान सभी मनोरथों की पूर्ति करता है। सभी मन्त्रों का मूल है, सृष्टि का मूलाधार है, सभी का मूल स्वरूप है। अतः इस श्रीराम मन्त्र को मूलमन्त्र-बीजमन्त्र-मन्त्रराज कहा जाता है। सात करोड़ महामन्त्र तथा उसी प्रकार के अन्य अनन्त उपमन्त्र तथा सभी वर्ण-मात्रा-स्वर सभी इसी श्रीराम मूलमन्त्र से ही उत्पन्न हुए हैं । अत इसको भलि-भांति जानकर जो इसका अनुष्ठान करता है उसने सब कुछ जान लिया । सब कुछ सुन समझ लिया, सभी अनुष्ठानों का फल प्राप्त कर लिया, जिसने श्री गुरु चरणों की कृपा से मूलमन्त्र की महिमा का ज्ञान प्राप्त कर लिया वह जीवन मुक्त हो गया । उसको अष्ट सिद्धि नव-निधि भी तुरन्त प्राप्त हो जाती हैं। इस मन्त्र की प्राप्ति को मानव देह धारी प्राणी मात्र को अधिकार है। मोक्षार्थी-विरक्त-सन्यासी तथा सभी आश्रम वासियों की श्रीराम ब्रह्म ही परमध्येय हैं । श्रुतियों का सारभूत ॐकार भी जिसकी शक्ति से अनुप्राणित है ऐसे श्रीराम मन्त्र का यतियों को भी निरन्तर आराधन करना ही चाहिए । अर्द्ध-मात्रा-बिन्दु नाद आदि षट्वर्ण इसी षडक्षर श्रीराम मन्त्र का ही प्रकाश है। अतः यही तारक ब्रह्म है । यही श्रुतियों का तात्पर्य है ।।५०८-५१४।।

श्री रामोत्तरतापनीये कंडिका २ मंत्र १-४

अथ है नं भरद्वाजः पप्रच्छ याज्ञवल्क्यं किं तारकं किं तरतीति । स हो वाच याज्ञवल्क्यस्तारकं दीर्घानलं बिन्दुपूर्वकं

दीर्घानलं पुनर्माय नमश्चन्द्राय नमोभद्राय नमः । इत्योमिति तत् सत् ब्रह्मात्मकाः सच्चिदानन्दाख्या इत्युपासितव्यम् ।।५१५।।

श्री भारद्वाज मुनि ने श्री याज्ञवल्क्य जी मुनि का पूजन करके पूछा कि तारक क्या है ? तरता कौन है ? आप कृपा कर हमको समझावें । तब श्री याज्ञवल्क्य जी भरद्वाज मुनि से बोले—तारक मन्त्र का यह स्वरूप है दीर्घ आकार सहित रेफ बिन्दु सहित "रां" बीज जिसके आगे हो, तत्पश्चात् पुनः 'रा' सहित माय "रामाय" जिसके बीच में हो तथा अन्त में "नमः" शब्द हो इस प्रकार "रां रामाय नमः" यही तारक मन्त्र है । इस प्रकार "श्रीराम" पद सहित "चन्द्राय नमः" "भद्राय नमः" अर्थात रां रामचन्द्राय नमः तथा रां रामभद्राय नमः यह भी तारक मन्त्र है । इस प्रकार ये तीनों मन्त्र ॐकार-तत्सत् स्वरूप-तथा ब्रह्म स्वरूप ॐतत्सत् ब्रह्म के प्राण स्वरूप है । यही क्रमशः सत्-चित-आनन्द के कारण हैं । इस प्रकार इनकी उपासना करनी चाहिए । जैसे श्रीराम षडक्षर मन्त्र है उसी प्रकार ॐकार भी छ अक्षरों का समूह है । ५१५।।

अकारः प्रथमाक्षरो भवति । उकारो द्वितीयाक्षरो भवति । मकारस्तृतीयाक्षरो भवति । अर्धमात्रा चतुर्थाक्षरो भवति । बिन्दुः पञ्चमाक्षरो भवति । नादः षष्ठाक्षरो भवति । तारकत्वात् तारको भवति । तदेवतारकं ब्रह्म त्वं विद्धि, तदेवोपास्यमिति ज्ञेयं । गर्भ जन्म जरा मरण संसार महद्भयात्संतारयतीति तस्मादुच्येत तारक मिति ।।

य एतत् तारकं ब्राह्मणो नित्यमधीते स पाप्पानं तरति । स मृत्युं तरति, स भ्रूणहत्यां तरति, स ब्रह्महत्यां तरति । स वीरहत्यां तरति, स सर्व हत्यां तरति, स संसारं तरति । स सर्वं तरति, सो विमुक्ताश्रितो भवति, स महान् भवति । सोऽमृतत्त्वं च गच्छतीति ।।५१६।।

ॐकार में प्रथम अक्षर अकार है । दूसरा अक्षर उकार है । तीसरा अक्षर मकार है । चौथा अक्षर अर्धमात्रा है । पांचवां अक्षर बिन्दु (अनुस्वार) है तथा छठा अक्षर नाद है । इस प्रकार श्रीराम तारक मन्त्र

के 'रां' बीजाक्षर अथवा ॐकार को ही तुम तारक मन्त्र समझो। यह सबको तारने वाला होने से ही इसको तारक मन्त्र कहते हैं। यही उपासना करने योग्य है, ऐसा जानना चाहिए। यह गर्भ-जन्म-जरावस्था मृत्यु तथा संसार के महान भय से भलिभांति तारने वाला है, इसलिये 'तारक' इस नाम से इसका कथन किया जाता है। जो ब्राह्मण इस तारक मन्त्र का नित्य जप करता हैं वह सम्पूर्ण पापों से तर जाता है, वह मृत्यु को लांघकर पार हो जाता है। वह ब्रह्म हत्या से तर जाता है। वह भ्रूण हत्या से तर जाता है, वह वीर हत्या से तर जाता है। इतना ही नहीं वह सभी हत्याओं से तर जाता है। वह संसार से पार उतर जाता है। वह कहीं भी रहे विमुक्ति देने वाले काशी, कांची, अयोध्या जैसे मुक्ति-क्षेत्रों में रहने का सम्पूर्ण लाभ प्राप्त करता है। वह महान हो जाता है। वह अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है ।।५१६।।

श्रीरामेति परंजाप्यं तारकं ब्रह्म संज्ञकम् ।
तथा च रामरामेति एतत् तारकमुच्यते ।।५१७।।
इत्याद्याः श्रुतयः सन्ति स्मृतश्च सहस्रशः ।
एतदेव विमुक्तश्रीः रुद्रः कथयति स्वयम् ।।५१८।।
मुमूर्षोः मणिकर्णिकायां अर्धोदक निवासकः ।
रुद्रस्तु तारकं ब्रह्म व्याचष्टे इति श्रुतिरपि सर्वेषां अधिकारो द्योतयति इति ज्ञातव्यं देशिकोत्तमैः ।।५१९।।

'श्रीराम' यही परम जपनीय तारक ब्रह्म संज्ञक महामन्त्र है। उसी प्रकार राम-राम यही तारक मन्त्र कहा जाता है। इत्यादि हजारों श्रुति-स्मृति के वचन इसमें प्रमाण है। यही मोक्षप्रद भी है। श्री रुद्र भगवान काशी में इसी से सबको मोक्ष प्रदान करते हैं। इस प्रकार प्राणी मात्र को श्रीराम मन्त्र का अधिकार है। यह श्रेष्ठ सद्गुरु आचार्यों को जानना चाहिये, क्योंकि काशी पुरी में श्री शंकर भगवान ने किसी प्रकार का भेद न रख कर प्राणी मात्र को इस मूल मत्रंराज का उपदेश करते हैं ।।५१७-५१९।। स्कंदपुराणे काशी खण्डे—

पेयं पेयं श्रवण पुटके रामनामाभिरामं-
ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्म संज्ञम् ।

जल्पं जल्पं प्रकृति विकृतौ प्राणिनां कर्ण मूले-

वीथ्यां वीथ्यामटति जटिलो कोऽपि काशीनिवासी ।।५२०।।

जब शरीर विकृत होकर मरण शय्या पर प्राणी सोता है उस समय उन प्राणियों के कान में गली-गली में घूम-घूम कर श्री शंकर भगवान-काशी निवासी जटाधारी भोला बाबा जिस राम-नाम को सुना कर मोक्ष प्रदान करते हैं वही एक मात्र श्रीराम नाम अत्यन्त अभिराम प्रदान करने वाला प्रभु का प्यारा नाम ही श्रवण के दोनों में भर कर पीने लायक है। मन में भी निरन्तर उसी तारक ब्रह्म श्रीराम नाम मन्त्र का ही निरन्तर ध्यान करने योग्य है ।।५२०।।

शिव संहितायाम्—

रामनाम्ना शिवः काश्यां भूत्वा पूतः शिवः स्वयम् ।

तेन तारयते जीवराशीं काशीश्वरः सदा ।।५२१।।

श्रीराम नाम के द्वारा ही काशीश्वर श्री शिवजी स्वयं परम पवित्र होकर काशी में मरने वाले जीवों को सदैव तारते हैं, उद्धार करते हैं। ऐसा शिव-संहिता में कहा है ।।५२१।।

वृद्ध हारीतस्मृतौ श्लोक २४४–२४६ ।

अद्यापि रुद्रः काश्यान्तु सर्वेषां त्यक्त जीविनाम् ।

दिशत्येतन्महामन्त्रं तारकं ब्रह्मनामकम् ।।५२२।।

तस्य श्रवणमात्रेण सर्व एव दिवंगताः ।

इममेव जपन्मन्त्रं रुद्रस्त्रिपुर घातकः ।।५२३।।

अद्यावधि सभी प्राणियों के जीवन त्याग करने की वेला में श्री शंकर जी तारक ब्रह्म नामक इस महामन्त्र का उपदेश देकर सबको तारते हैं। उसके श्रवण करने मात्र से सभी दिव्य धाम में चले गये हैं। इसी महामन्त्र को जप कर श्री शंकर जी त्रिपुरासुर को मारकर त्रिपुरारी कहलाये हैं ।।५२२–५२३।।

वशिष्ठ संहितायाम्—

नान्यो मन्त्रः परोराममन्त्रा दष्टाक्षराधिकः ।

सूर्य शक्ति शिवादीनां मन्त्राः हीनतरा स्फुटम् ।।५२४।।

नारायण स्वयम्भूश्च शिवश्चेन्द्रादयस्तथा ।
सनकाद्याश्च योगीन्द्राः नारदाद्याः महर्षयः ।।५२५।।
सिद्धाःशेषादयश्चैव लोमशाद्याः मुनीश्वराः ।
लक्ष्म्यादि शक्तयः सर्वाः नित्यमुक्ताश्च सर्वदा ।।५२६।।
मुमुक्षवश्च मुक्ताश्च सूरयश्च शुकादयः ।
तत्प्रभावं परं ज्ञात्वा मन्त्रराजमुपासते ।।५२७।।

"श्रीरामः शरणं मम" इसी श्रीराम अष्टाक्षर मन्त्र से श्रेष्ठ कोई मन्त्र नहीं है । सूर्य-शक्ति-शिवादिकों के मन्त्र इसके सामने अत्यन्त हीन स्वरूप हैं, यह स्पष्ट ही हैं, इसी कारण श्रीमन्नारायण-स्वयम्भू ब्रह्मा जी शंकर जो तथा इन्द्रादिक देवगण, सनकादिक योगीन्द्रजन, नारदादिक महर्षि, शेष भगवान आदि सिद्धजन, लोमशादिक मुनीश्वर, श्री लक्ष्मी जी आदि शक्तियां दिव्यधाम निवासी नित्य मुक्त भगवत्पार्षद, मोक्ष-कामी सन्तजन, शुकदेवादिक सूरिगण, इसका महान् प्रभाव जानकर निरन्तर इसी की उपासना करते हैं ।।५२४–५२७।।

सुन्दरी-तन्त्रे –

षड्वर्णः सुमहामन्त्रः स एव कल्प भूरुहः ।
ब्रह्मागस्त्यावृषी प्रोक्ता विश्वामित्र वशिष्ठ कौ ।।५२८।।
नारदो वामदेवश्च भरद्वाज पराशरौ ।
वाल्मीकिर्ऋषयः प्रोक्ताः देवः तस्य रघूद्वहः ।।५२९।।

श्रीराम का यह षडक्षर महामन्त्र है यही महान् कल्पवृक्ष है, इसके ब्रह्मा-अगस्त्य-विश्वामित्र–वशिष्ठ–नारद–वामदेव–भरद्वाज–पराशर तथा वाल्मीकि आदि ऋषि हैं । इस मन्त्र के तथा इन ऋषियों के इष्ट देवता श्री रघुनन्दन राम ही हैं ।।५२८–५२९।।

हारोतस्मृतौ–अध्याय ६ श्लोक २४० से २४६ तक ।

षडक्षरं दाशरथेस्तारकं ब्रह्म गद्यते ।
सर्वैश्वर्यप्रदं नृणां सर्वकाम फलप्रदम् ।।५३०।।
एतदेव परंमन्त्रं ब्रह्मरुद्रादि देवता ।
ऋषयश्च महात्मानो जप्त्वा मुक्ताभवाम्बुधौ ।।५३१।।

एतन्मन्त्रं अगस्त्यो वै जप्त्वारुद्रत्वमाप्नुयात् ।
ब्रह्मत्वं काश्यपेयो वै कौशिकोह्यमरेशताम् ।।५३२।।
इतमेव जपन्मन्त्र रुद्रस्त्रिपुरघातकः ।
ब्रह्महत्यादिनिर्मुक्तः पूज्यमानोऽभवत् सुरैः ।।५३३।।
कार्तिकेयो मनुश्चैव रुद्रार्क भृगु नारदाः ।
बालखिल्यादि मुनयो देवतात्वं प्रपेदिरे ।।५३४।।
अद्यापिरुद्रः काश्यान्तु सर्वेषांत्यक्त जीविनाम् ।
दिशत्येतन्महामन्त्र तारकं ब्रह्म नामकम् ।।५३५।।
तस्य श्रवणमात्रेण सर्व एव दिवंगताः ।

श्री दशरथनन्दन परब्रह्म श्रीराम का "रां रामाय नमः" यही षड-क्षर मन्त्र तारक ब्रह्म कहाता है। जो मनुष्यों को सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करने वाला तथा सभी कामनायें सुफल करने वाला है। इसी परम मन्त्र का जप कर ब्रह्मा-रुद्र आदि देवगण ऋषि तथा महात्मा मुक्त होकर भवसागर से तर गये हैं। यही मन्त्र सभी लोकों को परमैश्वर्य प्रदान करने वाला है। इसी मन्त्र के जप के प्रभाव से शंकर जी त्रिपुरासुर को मारने में समर्थ हुए हैं तथा ब्रह्महत्यादिक पापों से विमुक्त होकर देवताओं द्वारा पूजित हुए हैं, इस मन्त्र को जप कर अगस्त्य जी रुद्रतत्व को प्राप्त किये हैं, कश्यपनन्दन ब्रह्मा पद प्राप्त किये हैं, कौशिक मुनि देवेन्द्र बने हैं। कार्तिकेय, मनु, रुद्र-सूर्य-भृगु-नारद-बालखिल्यादि मुनिजन देवतत्व को प्राप्त हुए हैं। आज भी भगवान शंकर काशी में मरने वालों को यही मन्त्र प्रदान कर मोक्षधाम प्रदान करते हैं। उसके श्रवण करने मात्र से ही सभी दिव्य लोक में गये हैं ।।५३१-५३५।।

रकारैश्वर्यबीजन्तु मकारस्तेन संयुतः ।
अवधारणयोगेन रामो यस्मान्मनुः स्मृतः ।।५३६।।

रकार ऐश्वर्य का वीज है, मकार आनन्द रूप हैं जो उसके साथ रहने पर 'राम्' यह महामन्त्र जाना जाता है ।।५३६।।

पुलहसंहितायाम्—

वीजे यथा स्थितो वृक्षः शाखा पल्लव संयुतः ।
तथैव सर्ववेदादि रकारेषु व्यवस्थिताः ।।५३७।।

रकाराज्जायते ब्रह्मा रकारज्जायते हरिः ।
रकाराज्जायते शंम्भुः रकारात्सर्व शक्तयः ।।५३८।।

जैसे बीज के अन्दर शाखा पत्ता सहित सम्पूर्ण वृक्ष रहता है उसी प्रकार सम्पूर्ण वेद शास्त्र पुराणादि 'राम' नाम में विराजमान हैं। रकार से ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं। रकार से ही श्रीहरि प्रकट होते हैं। रकार से ही शंकर जी तथा रकार से ही सभी शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है ।।५३७–५३८।।

श्री वाल्मीकि रामायणे—

अनन्या हि मया सीता भास्करेण यथा प्रभा ।।५३९।।

श्रीरामजी कहते हैं कि जैसे सूर्य से उसकी प्रभा कभी पृथक नहीं होती वैसे ही श्री सीताजी भी मुझसे सदैव अभिन्न ही है ।।५३९।।

पञ्चरात्रे—

दासभूताः स्वतः सर्वेह्यात्मा वै परमात्मनः ।
नान्यथा लक्षणं तेषां बन्धे मोक्षे तथैव च ।।५४०।।

सभी आत्मा परमात्मा के ही दास हैं, बन्धन में तथा मोक्ष पद पाने पर भी सभी प्रभु के दास ही रहते हैं, दूसरा कोई लक्षण स्वरूप उनका नहीं है ।।५४०।।

वृद्ध हारीत स्मृति में अध्याय १ श्लोक १८।

दास्यमेव परं धर्मं दास्यमेव परं हितम् ।
दास्येनैव भवेन्मुक्तिरन्यथा निरयं व्रजेत् ।।५४१।।
तस्माद्दास्य परां भक्ति अवलम्ब्य नृपसत्तमे ।
नित्यं नैमित्तिकं कर्म कुर्यात् प्रीत्यै हरेः सदा ।।५४२।।

प्रभु का दासत्व ही परमधर्म है, प्रभु की दास्यता ही परम हित है, प्रभु की दास्यता से ही मुक्ति प्राप्त होती है, अन्यथा भाव रखने वाले नरक गामी बनते हैं। अतः हे राजेन्द्र ! प्रभु की दास्यता स्वीकार करना ही परमभक्ति है, उसी का आश्रय लेकर नित्यकर्म-नैमेत्तिक-काम्यादि सभी कर्म श्रीहरि की प्रीति सम्पादन करने के लिए ही सदैव करने चाहिए ।।५४१–५४२।।

पद्मपुराणे श्री लक्ष्मण वाक्यम—

विहर त्वं सुखं राम ! जानकी सहितोऽनघ !
अहं सेवां करिष्यामि जाग्रतः स्वपनश्चते ।।५४३।।

हे परमपावन राम ! आप तो श्री जानकी जी के सहित सुखपूर्वक वन में विहार करें। मैं आपको आप जगते रहें अथवा सोते रहें सभी प्रकार की सुयोग्य सेवाओं का परम लाभ प्राप्त करता रहूँगा ।।५४३।।

अगस्त्य संहितायाम्—

दीर्घाकार युतो रेफो रामश्चिद् ब्रह्मकारणम् ।
मस्तु चिज्जीव शक्तीनां कारणं जानकी स्वयम् ।।५४४।।
रकारो रामचन्द्रश्च चिन्मयानन्द विग्रहः ।
अकारो जानकी चैव मकारो लक्ष्मणः स्वराट् ।।५४५।।

श्रीराम नाम का 'रा' अक्षर सच्चिदानन्द ब्रह्म का कारणभूत श्रीराम है तथा मकार चैतन्य जीव शक्तियों की कारणभूता श्री जानकी जी हैं। अथवा रकार श्री रामचन्द्र जी हैं, मध्य का अकार श्री सीताजी हैं तथा मकार श्री लक्ष्मणलाल जी का स्वरूप है ।।५४४–५४५।।

श्रीमन्महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक ६७–६८ ।

वेदे व्याकरणे चैव ये च वर्णाः स्वराः स्मृताः ।
रामनाम्नैव ते जाता सर्वे वै नात्र संशयः ।।५४६।।
रकारो मूर्धिन संचार स्त्रिकूटयाकार उच्यये ।
मकारोऽधरयोर्मध्ये लोमे लोमे प्रतिष्ठितः ।।५४७।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है।

श्रुतौ—

आजामेकां लोहित शुक्ल कृष्णां बह्वीं प्रजां जनयति स्वरूपां अजो ह्यको जुषमाणोऽनुशेते जसात्येनां भुक्तभोगामजोन्य प्रकृति पुरुषं चैव विध्यानादीन् भावयेति ।।५४८।।

प्रभु की एक माया शक्ति है जो शुक्ल-लाल तथा काले वर्ण की सत्व-रज-तमोमयी है बहुत सी प्रजा को जन्म देती है। प्रभु अजन्मा है वैसे उनकी वह माया भी अजन्मा है। प्रभु उसमें सुख पूर्वक शयन करते हैं, इस प्रकार यह प्रकृति पुरुष तथा उसके भोग करने वाला आत्मा तीनों तत्व अनादि हैं, ऐसी भावना करो ॥५४८॥

श्रीमद्भगवद्गीतायाम्—

भूमिरापोनलो वायुः खं मनोबुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥५४९॥
अपरा हि मितस्त्वयां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥५५०॥

गीता में भी भगवान इसी विशिष्टाद्वैत की पुष्टि करते हैं। भूमि-जल-अग्नि-पवन-आकाश-मन-बुद्धि तथा अहंकार ये आठ प्रकार की अपरा प्रकृति मेरी पृथक सत्ता स्वरूप है तथा इससे विलक्षण मेरी एक परा प्रकृति है, जो जीवस्वरूप हैं, जिसके द्वारा ये जगत् प्रतिष्ठित है ॥५४९–५५०॥ इस वाक्य से भी जीव-जगत् तथा जगदीश्वर तीनों का स्पष्ट बोध होता है।

अथर्वशाखायां श्रीरामोत्तरतापिन्यां कंडिका १ मन्त्र १–४।

ॐ बृहस्पतिरुवाच याज्ञवल्क्यं यदनु कुरुक्षेत्रं, देवानां देवयजनम्, सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम् ॥१॥ अविमुक्तं वै कुरुक्षेत्रं, देवानां देव यजनम्, सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम् ॥२॥ तस्माद्यत्र क्वचन गच्छति तदेव मन्येत इदं वै कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनम् सर्वेषां भूतानां ब्रह्म सदनम् ॥३॥ अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्मव्याचष्टे, येनासौ अमृती भूत्वा मोक्षी भवति। तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत, अविमुक्तञ्चेदिति एवमेवैतद् भगवन्निति याज्ञवल्क्यः ॥५५१॥

वृहस्पति ने याज्ञवल्क्य से पूछा–ब्रह्मन्! जिस तीर्थ के सामने कुरु क्षेत्र भी लघु-साधारण लगे, जो देवताओं के लिए भी देवपूजन का अपने

पूज्य देव का आराधना स्थान हो तथा जो समस्त प्राणियों के लिए प्रभु प्राप्ति का दिव्य निकेतन हो वह कौनसा स्थान है ? ऐसा प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य जी ने प्रसन्न होकर उत्तर दिया । निश्चय अविमुक्त तीर्थ ही प्रधान कुरुक्षेत्र है (दिव्य तीर्थ स्थान है) वही देवताओं के लिए भी देव पूजन का पावन स्थान है, वही समस्त प्राणियों के लिये भी ब्रह्म सदन है । परमात्मा प्राप्ति का दिव्य धाम है । अतः जहां कहीं भी जाओ, जहां कहीं भी रहो उसी अविमुक्त तीर्थ को ही प्रधान कुरुक्षेत्र मानो । वही देवताओं के लिए भी देवाराधन का पवित्र स्थान है तथा वही सम्पूर्ण प्राणी मात्र से लिये भी परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति का दिव्य धाम है । यहीं काशी में जन्तुओं के प्राण निकलते समय भगवान शंकर तारक ब्रह्म श्रीराम मन्त्र का उपदेश करते हैं जिसके प्रभाव से प्राणी अमृतमय होकर मोक्षप्रद प्राप्त कर लेता है । इसलिये अविमुक्त धाम जहां श्रीराममन्त्र का आराधन होता है वही काशी है, मन्त्रदाता सद् गुरु शंकर स्वरूप है । इस अविमुक्त धाम का कभी भी परित्याग न करें । नित्य निरन्तर श्रीराम मन्त्र का आराधन करें । ठीक यही बात सदैव स्मरणीय है । इस प्रकार याज्ञवल्क्य जी ने बृहस्पति जी को समझाया ।।५५१।।

कुरुक्षेत्र शब्दस्य व्याख्या—

कुत्सितं रौति इति कुरुः । पापकर्मः संसारहेतुभूतं तस्य क्षेपणात् निरसनात् त्रायतीति कुरुक्षेत्रम् ।।अथवा–

कुः पृथिवी पृथिवीदेहाद्याकार परिणता तस्यां रौति एवं करोति इति कुरुःप्राणः, तस्य क्षेत्रम् एवं कर्तुः प्राणस्य निवास स्थानं तत् कुरुक्षेत्रम्–प्राणाधिष्ठानम् ।।५५२।।

कुत्सित कर्म-पाप कर्म जहां किये जाते हैं, जो संसार के कारणभूत हैं उनको फेंक कर दूर हटाकर जो आत्मा का रक्षण करे वह कुरुक्षेत्र है । अथवा 'कु' माने पृथ्वी जो देहादि आकार में परिणत होकर अनेक कर्म करती है वह कुरु है, प्राण है । प्राण को निवास करने का जो क्षेत्र स्थान है वह कुरुक्षेत्र है, अर्थात प्राण का अधिष्ठान 'आत्मा' ही कुरुक्षेत्र है । आत्मा श्रीराम का चिन्तन करता है यही कुरुक्षेत्र का निवास है, तीर्थ-यात्रा है ।।५५२।।

देवानां देवयजनम्

तत्र देवानां इन्द्रियाणां तदधिष्ठातृणां वा देवस्य स्वयं श्रीरामचन्द्रस्य परमात्मनः निजाङ्गेषु प्रकाशकस्य आत्मनः द्योतमानात्मकस्य तस्य अन्तर्यामिनः नियन्तृत्वं प्रयोगः श्रीरामे योजयन्तस्ययजनं पूजोपकरणम् । श्रीरामस्यपूजनम् ।। अर्थात्- श्रीरामस्य पूजन स्मरणमेव विशिष्टतम प्रधान कुरुक्षेत्र-मित्याशयः ।।५५३।।

देवताओं का देव-पूजन स्थान का तात्पर्य यह है कि जो इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवता हैं वे जिनकी पूजा करके धन्य हो जाय वही देव यजन का पावनतम सर्वश्रेष्ठ स्थान है। अथवा परात्पर देव श्री रामचन्द्र परमात्मा जो अपने अङ्गों में अन्तर्यामी बनकर विराजमान हैं, उन सर्व प्रकाशक का ही प्रकाश अपने आत्मा में भी है ऐसा भाव रख कर सभी इन्द्रियों सहित तन-मन को श्रीराम को सेवा में प्रयुक्त करना ही देवों द्वारा देव-यजन है। "हृषीकेण हृषीकेश पूजनं भक्तिरुच्यते।" इन्द्रियों द्वारा इन्द्रियों के स्वामी प्रभु श्रीराम को सम्पूर्ण सेवा आराधना करना ही देव यजन है। अर्थात् श्रीराम का पूजन यजन भजन स्मरण ही अविमुक्त धाम काशी प्रधान कुरुक्षेत्र है, यही भाव प्रधान रहस्य है ।।५५३।। उसी का स्पष्टीकरण आगे स्वयं श्रुति ही करती है—

श्रीरामोत्तरतापनीये, कंडिका ४ मंत्र १–४ ।

अथ हैनं अत्रिप्रपच्छ याज्ञवल्क्यं य एषोऽनन्तोऽव्यक्त आत्मा तं कथमह विजानीयामिति । सहोवाच याज्ञवल्क्यः सोऽविमुक्ते उपास्यः य एषोऽनन्तन्तोऽव्यक्त आत्मा सोऽविमुक्ते प्रतिष्ठतः ।।५५४।।

तत्पश्चात् श्री अत्रिमुनि ने श्री याज्ञवल्क्य जी से प्रश्न किया कि- उस अनन्त एवं अव्यक्त परमात्मा को मैं कैसे जान सकूँ कृपा करके समझाइये। तब श्री याज्ञवल्क्य जी बोले-उस अनन्त तथा अव्यक्त परमात्मा की अविमुक्त क्षेत्र में उपासना करने से वह जाना जा सकता है। वह अनन्त एवं अव्यक्त परमात्मा अविमुक्त क्षेत्र में प्रतिष्ठित है ।।५५४।।

सोऽविमुक्तः कस्मिन् प्रतिष्ठित इति ।

वरणायांनाश्यां च मध्ये प्रतिष्ठित इति ।।५५५।।

प्रश्न—उस अविमुक्त क्षेत्र की स्थिति कहां पर है ?

उत्तर—वह अविमुक्त क्षेत्र वरणा और नाशी के मध्य में प्रतिष्ठित है ।।५५५।।

का वै वरणा का च नाशीति ।

सर्वानिन्द्रिय कृतान् दोषान् वारयतीति तेन वरणा भवतीति ।

सर्वानिन्द्रयकृतान् पापान्नाशयतीति तेन नाशी भवतीति ।।५५६।।

प्रश्न—'वरना' नाम से क्या प्रसिद्ध है तथा 'नाशी' किसका नाम है ?

उत्तर—जो सम्पूर्ण इन्द्रियों के द्वारा किये गये दोषों का निवारण करे वह वरणा है तथा जो समस्त इन्द्रिय जनित पापों का नाश करे वह 'नाशी' कहलाती है ।।५५६।।

कतमं चास्य स्थानमिति । भ्रुवो घ्राणस्य च यः सन्धिः स एष द्यौर्लोकस्य च सन्धिर्भवतीति । एतद्वै सन्धि संध्यां ब्रह्मविद् उपासते इति । सोऽविमुक्त उपास्य इति । सोऽविमुक्तं ज्ञानमाचेष्टे यो वै एतदेवं वेदेति । (स एव षडक्षरोऽनन्तोऽव्यक्तः घोरपूर्णानन्दैक चिदात्मकः योऽविमुक्तेः प्रतिष्ठितः) ।।५५७।।

प्रश्न—उस अविमुक्त क्षेत्र का आध्यात्मिक स्थान कौनसा है ?

उत्तर—भौहों तथा नासिका को जो सन्धि है जहां इड़ा पिंगला नामकी दोनों नाड़ियों का संगम है वह द्युलोक तथा उससे भी श्रेष्ठ परमोत्कृष्ट ज्योतिर्मय परमात्मा को सन्धि का दिव्य स्थान है । निश्चय ही ब्रह्मवेत्ता पुरुष इस सन्धि में हो 'संध्या' के रूप में परम पुरुष की उपासना ध्यान करते हैं । अतः उस अव्यक्त अनन्त परमात्मा श्रीराम की इस अविमुक्त क्षेत्र में रहकर (भौहों तथा नासिका की सन्धि में) उपासना करनी चाहिए । जो ऊपर बताये प्रकार से यह भली-भांति जानता है कि—उस अव्यक्त अनन्त परमात्मा की उपासना का आधिभौतिक स्थान अविमुक्त क्षेत्र 'काशी' और उसका आध्यातिक स्थान भौहों तथा नासिका के मध्य का भाग है वहीं ध्यान द्वारा उस अनन्त अव्मक्त

परम तत्व श्रीराम का चिन्तन करना चाहिए। वही परमात्मा से नित्य सम्बद्ध (अविमुक्त) ज्ञान का उपदेश कर सकता है। यह षडक्षर श्रीराम तारकब्रह्म अविनाशी अव्यक्त परिपूर्ण आनन्दैकस्वरूप सच्चिन्मय विग्रह श्रीराम परब्रह्म इसी अविमुक्त क्षेत्र मन्त्रराज में प्रतिष्ठित है ।।५५७।।

अथर्वशाखाया श्रीरामपूर्वतापनीये प्रथमोपनिषद् मंत्र ११–१३–

ब्रह्मादीनां वाचकोऽयं मन्त्रोन्वर्थादि संज्ञकः ।
जप्तव्यो मन्त्रिणानैनं विना देवः प्रसीदति ।।५५८।।
क्रियाकर्मेज्यकर्तॄणामर्थं मन्त्रोवदत्यथ ।
मननात् त्राणनान्मन्त्रः सर्ववाच्यस्य वाचकः ।।५५९।।
सोभयस्यास्य देवस्य विग्रहो यन्त्र कल्पना ।
विनायन्त्रेण चेत्पूजा देवता न प्रसीदतीति ।।५६०।।

ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त समाज जड़-चेतन का वाचक जो यह राममन्त्र है वह अर्थ के अनुरूप ही है। अर्थात् जैसा इस नाम का अर्थ है वैसा ही यह प्रभावशाली भी है। अतः इस राममन्त्र की दीक्षा लेकर सदा इसका जप करना चाहिए। इसके बिना भगवान की प्रसन्नता नहीं होती है। क्रिया-कर्म इत्यादि का अनुष्ठान करने वाले जो साधक हैं उसके अभीष्ट की सिद्धि का प्रयोजन मन्त्र बता देता है। अर्थात् अभीष्ट सिद्धि का निश्चय करा देता है। अतः मनन करने से जो त्राणन रक्षा करता है, इस प्रकार वह मन्त्र कहाता है, यह सभी अभिधेयों का वाचक होता है। युगल स्वरूप श्री सीता तथा श्रीराम के रूप में उभयात्मक विराजमान जो भगवान हैं उनका प्रतीक स्वरूप विग्रह यन्त्र-राज का निर्माण किया जाता है। बिना यन्त्र के पूजा करने पर देवता की प्रसन्नता नहीं होती है ।।५५८ ५६०।।

पुनस्तत्रैव -श्रीरामोत्तरतापिन्यां चतुर्थ कंडिका मंत्र ५ से १३ ।

श्रीरामस्यमनुकाश्यां जजाप वृषभध्वजः ।
मन्वन्तर सहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः ।।५६१।।
ततः प्रसन्नो भगवान् श्रीरामः प्राह शंकरम् ।
वृणीस्वयदभीष्टं तद् दास्यामि परमेश्वरेति ।।
ततः सत्यानन्दश्चिदात्मा भगवान् श्रीरामं प्राह ।।५६२।।

श्री याज्ञवल्क्य मुनि ने अत्रिमुनि को मन्त्र निष्ठा के लिए यह प्राचीन कथा सुनाई—एक बार भगवान् शंकर जी ने काशी में निवास कर एक हजार मन्वन्तर पर्यन्त जप-होम-पूजन परायण होकर श्रीराम की आराधना करते हुए श्रीराममन्त्र का जप किया। इससे प्रसन्न होकर भगवान् श्रीराम ने शंकर जी से कहा—हे परमेश्वर महादेव! आपको अभीष्ट हो वह वरदान मांगों, मैं पूर्ण करुंगा। तब सत्यानन्द चिदात्मा भगवान श्री शंकर ने श्रीराम से कहा—॥५६१—५६२॥

मणिकर्ण्यां वा मत्क्षेत्रे गंगायां वा तटे पुनः।
म्रियते देहि त्यजन्त्यन्ते मुक्तिं नातोवरान्तरमिति ॥५६३॥

हे भगवन्! मणिकर्णिका तीर्थ में, मेरे काशीक्षेत्र में, गंगाजी में अथवा गंगाजी के तट पर जो अन्त समय में प्राण त्याग करे उस आत्मा को आप कृपा कर मुक्ति प्रदान करें। इसके बिना अन्य कोई वरदान मांगना मुझे अभीष्ट नहीं है ॥५६३॥

अथ रुद्रोवाच श्रीरामः—

क्षेत्रेऽस्मिन् तव देवेश यत्रकुत्राऽपि वा मृताः।
कृमिकीटादयोऽप्याशु मुक्ता सन्तु न चान्यथा ॥५६४॥
अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्ति सिद्धये।
अहं सन्निहितस्तत्र पाषाण प्रतिमादिषु ॥५६५॥
क्षेत्रेऽस्मिन् योऽर्चयेद्भक्त्या मन्त्राणानेन मां शिव।
ब्रह्महत्यादि पापेभ्यो मोक्षयिस्यामि मा शुचः ॥५६६॥
त्वत्तो वा ब्रह्मणो वाऽपि ये लभन्ते षडक्षरम्।
जीवन्तो मन्त्रासिद्धाः स्युरन्ते मां प्राप्नुवन्ति ते ॥५६७॥
मुमूर्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्यकस्यापि वा स्वयम्।
उपदेक्षसि मन्मन्त्रं स मुक्तो भविता शिव ॥५६८॥

श्रीरामचन्द्रेणोक्तं योऽविमुक्तं पश्यति। सजन्मान्तरितान्-दोषान् वारयति तान् पापान् नाशयतीति ॥५६९॥

श्री शंकर जी का वचन सुनकर प्रभु श्रीराम ने कहा—हे देवेश्वर ! आपके इस पावन क्षेत्र में जहां कहीं भी प्राण त्याग करने वाले कीड़े-मकाड़ आदि भी तत्काल मुक्तिप्रद पा जायेंगे, इसमें कोई संशय नहीं है। तुम्हारे इस अविमुक्त क्षत्र में सब लोगों की मुक्ति की सिद्धि के लिये मैं यहां पाषाण की प्रतिमा आदि में सदैव निवास करूंगा। शिवजी ! इस काशीपुरी में मेरे इस षडक्षर "रां रामाय नमः" तारकमन्त्र द्वारा जो भक्ति भावना से मेरा पूजन आराधन करेगा मैं उसको ब्रह्महत्यादिक महान पापों से भी मुक्त कर दूंगा। तुम कुछ भी चिन्ता न करो। तुम्हारे द्वारा अथवा ब्रह्मा जी की परात्परा द्वारा जो यहां षडक्षर मन्त्रराज की दीक्षा प्राप्त करते हैं वे जीते जी तो मन्त्रसिद्ध महात्मा होते हैं तथा मृत्यु पश्चात जन्म मरण-बन्धन से मुक्त होकर मुझे प्राप्त कर लेते हैं। हे शंकर जी ! जिस किसी भी मरणासन्न प्राणी के दाहिने कान में तुम इस मेरे महामन्त्र राज का उपदेश करोगे, वह निश्चय ही मुक्त हो जायगा।"

इस प्रकार श्री रामचन्द्र जी के द्वारा वरदान से अनुगृहीत अविमुक्त क्षेत्र का जो दर्शन करता है वह जन्म-जन्मान्तर के दोषों को दूर कर देता है। वह षडक्षर श्रीराम मन्त्र का जापक अपने जन्म जन्मातर के दोषों का विनाश कर देता है ॥५६४–५६६॥

॥ इति चतुर्थ कंडिका ॥

अथ हैनं भरद्वाजो याज्ञवल्क्यमुपासयेत्योवाच—श्रीरामन्त्र राजस्य माहात्म्यमनुब्रूहीति। रुद्रोवाच याज्ञवल्क्यः—

स्वप्रकाशः परंज्योतिः स्वानुभूत्यैक चिन्मयः।
तदेवरामचन्द्रस्य मनोराद्याक्षरः स्मृतः ॥५७०॥
अखण्डैकरसानन्दस्तारक ब्रह्मवाचकः।
रामायेति सुविज्ञेयः सत्यानन्द चिदात्मकः ॥५७१॥
नमः पदं सुविज्ञेयं पूर्णानन्दैक कारणम्।
सदा नमन्ति हृदये सर्वेदेवा मुमुक्षवः ॥५७२॥

तथा च श्रुतिः—

य इमं मन्त्रराजं श्रीरामचन्द्रस्य नित्यमधीते सोऽग्निना पूतोभवति। सवायुना समः। आदित्येन समः। सोमेन समः।

ब्रह्मणासमः । विष्णुना समः । रुद्रेणपूतो भवति । स सर्ववेदेषु ज्ञातो भवति । इतिहास पुराण रुद्री सहस्र कृतवानभवति ।।५६३।।

तब भरद्वाज मुनि ने श्री याज्ञवल्क्य जी की अर्चना उपासना करके कहा-भगवन् ! आप मुझे श्रीराम मन्त्रराज का महात्म्य श्रवण कराइये । तब प्रसन्न होकर श्री याज्ञवल्क्य जी बोले–श्रीराम मन्त्र में जो प्रथम आदि अक्षर "रां" है वह स्वयं प्रकाश परम ज्योति स्वरूप अपने ही आत्मा की आनन्दानुभूति का चिन्मय श्रीरामचन्द्र जी का ही दिव्य स्यरूप है । तथा बीचका "रामाय" शब्द अखण्ड एक रस आनन्दमय तारक ब्रह्म वाचक सत्-चित् आनन्दमय है ऐसा जानो । अन्तिम जो 'नमः' पद है वह सम्पूर्ण दिव्य आनन्द का एक मात्र कारण है, इस 'नमः' शब्द का उच्चारण करते हुए सभी देवता तथा मुमुक्षुजन सदैव श्रद्धा भक्ति से प्रभु के पावन चरणों में नमस्कार करते हैं ।इसी प्रकार अन्य श्रुतियां भी वर्णन करती हैं–जो इस श्री रामचन्द्र जी के मन्त्रराज का नित्य जप करता है वह अग्नि से पवित्र होता है । वह वायु-सूर्य-चन्द्र-ब्रह्मा-विष्णु तथा रुद्र के समान पावन हो जाता है । वह सदैव वेदों का सारतत्वज्ञ हो जाता है । वह इतिहास, पुराण तथा रुद्री के हजारों बार पाठ करने का फल प्राप्त करता है । ।।५७०–५७३।।

श्रीरामोत्तरतापिनी, उपनिषद निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, पृष्ठ ११७, मंत्र संख्या २६ तथा ३० देखिये—

श्रीरामचन्द्रमनुस्मरणेन गायत्र्याः शतसहस्राणि जप्तानि फलानि भवन्ति । प्रणवानामयुतकोटि जपाः भवन्ति । दशपूर्वान् दशोत्तरान्पुनाति । स पंक्ति पावनो भवति । स महान् भवति । सोऽमृतत्त्वं च गच्छति ।।५७४।।

श्री रामचन्द्र जी के मन्त्र का एक ही बार स्मरण करने से एक लाख गायत्री जप करने का फल होता है, ॐकार का दश हजार कोटि जप करने का फल श्रीराम मन्त्र का एक ही बार जप करने से प्राप्त होता है । वह अपनी दश पीढ़ी पहले की तथा दश पीछे की पीढ़ी को पवित्र

बनाता है अर्थात् एक्कीस पीढ़ी तारता हैं। वह जिस पंगत में बैठता है उसके साथ भोजन करने वाले सभी को पावन करता है। वह महान् बन जाता है, महात्मा हो जाता है। वह अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है ।५७४।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक ४३–४५ ।

तेजो रूपमयो रेफः श्रीरामाम्बक कञ्जयोः ।
कोटि सूर्यप्रकाशश्च परब्रह्म स उच्यते ।।५७५।।
सोऽपि सर्वेषु भूतेषु सहस्रारे प्रतिष्ठितः ।
सर्वसाक्षी जगद्व्यापी नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।।५७६।।
रामस्य मण्डलस्यैव तेजोरूपं वरानने ।
कोटि कन्दर्प शोभाढयो रेफाकारो हि विद्धि च ।।५७७।।
ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः लोचनाभा भाति स एव ब्रह्मेति स एव चेति केवलं निर्गुणात्मकः ।।५७८।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है।

वशिष्ठ संहितायाम् –

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामो दाशरथिः स्वराट् ।।५७९।।
यस्यानन्तावताराश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशा विष्णु ब्रह्मेशाः परब्रह्म स्वरूपभाः ।।५८०।।
स एव सच्चिदानन्दो विभूतिद्वय नायकः ।
वात्सल्याद्यद्भुतानन्त कल्याणगुणवारिधिः ।।५८१।।

अगस्त्य संहितायाम् अ० ७ श्लोक ३ से –

अस्ति वाराणसी नाम पुरी शिव मनोहरा ।
सर्वदासौ शिवस्तत्र पार्वत्या सह तिष्ठति ।।५८२।।
तस्याप्युपासकाः सर्वे भक्त्या तं प्रतिपेदिरे ।
मुमुक्षवः परित्यज्य सर्वं तत्रैव संस्थिताः ।।५८३।।

सदाशिव शिवत्येवं वन्दतः शिवतत्पराः ।
शिवार्पित मनः कायवाचः शिवपरायणः ।।५८४।।
शिवोऽपि तान्मुहुःपश्यन्नास्ते चिन्ता समाकुलः ।
कथमेभ्यः प्रदास्यामि मुक्तिमित्यति दुःखतः ।।५८५।।
तत्रैवास्ते गणैः सार्धमृषिभिश्च सुरासुरैः ।
एवं वसति भूर्लोकमाजगाम चतुर्मुखः ।।५८६।।
तमीश्वरो निरीक्ष्यैव संभ्रमेणा करोत्प्रियम् ।
बहुसंभावयामास यद्धितं तन्निवेदयेत् ।।५८७।।
ततः संप्राह भगवानीश्वरस्तं चतुर्मुखम् ।
कुशलं ननु ते ब्रह्मन् चिरायत्वमिहागतः ।।५८८।।
श्रीमदागमने नाहं लोकपूज्योप्युपासकः ।
समाराध्यहे मां भक्त्या प्रार्थयन्ति मुमुक्षवः ।।५८९।।
केनोपायेन तेषां तत् फलं दास्यामि तद्वद ।
ईश्वरेणैवमुक्तः सन् द्रुहिणोऽपि बभाष ह ।।५९०।।
अस्त्युपायो गोपनीयः प्रापादाद्यन्मे रघूद्वहः ।
तपः कृत्वा चिरायाहं तं परं लब्धवान् वरम् ।।५९१।।
ततोऽन्यो मदभिज्ञातो नास्त्युपायो महेश्वर ।
मह्यमन्वग्रहीद्रामो न सन्देहोऽस्तितत्र वै ।।५९२।।

श्री शंकर जी की मनोहर नगरी काशीपुरी है, जहां पर श्री पार्वती जी के सहित भगवान सदाशिव सदैव निवास करते हैं। उस काशीपुरी में उनके उपासक सभी का परित्याग कर अत्यन्त भक्ति भावना से एक बार उनके पास आये। वे सभी सदैव शिव-शिव-शिव नाम का रटण करते थे। तथा सभी तन-मन-वचन से श्री शिवजी के चरणों में अपने मन को अर्पण कर उनकी ही आराधना में परायण थे। वे अपने इष्ट देव की कृपा से मोक्षपद की कामना करते थे। इनको देखकर श्री शिवजी अत्यन्त चिन्तातुर हो गये थे कि अब इनको मोक्ष किस प्रकार दिया जाय? मोक्ष देने वाले तो एक करुणानिधान श्रीहरि ही हैं। इन हमारे भक्तों को तो

मोक्ष प्रदान कराना हमारा कर्तव्य है। अब हम क्या करें ? ऐसी चिन्ता में आकुल व्याकुल शंकर जी के पास अचानक चतुर्मुखी ब्रह्मा जी पधारे। इनके अकस्मात आगम से शंकर जी अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा उनका भली-भांति सत्कार किया। अपने गणों तथा महर्षियों के सहित अपने भक्तों को भुक्ति-मुक्ति प्रदान करने वाली कामना से शिवजी ने श्री ब्रह्मा जी से कुशल मंगल पूछा। तथा आपने बहुत दिनों पर कृपा की, बहुत आनन्द हुआ भगवन्! आप कृपा कर बतावें कि इन भक्तों को जो हमारी उपासना करके मोक्ष चाहते हैं उनको मैं मोक्ष कैसे प्रदान कर सकूंगा ? वह उपाय आप हमको बतावें। श्री शंकर जी की वाणी सुनकर श्री ब्रह्मा जी ने कहा कि—इसका उपाय तो अत्यन्त गूढ है। श्री राघवेन्द्र प्रभु ने जो मुझको कृपा कर दिया है वही आपको बतलाता हूँ। मैंने महान तपस्या करने के पश्चात् जिसे प्राप्त किया है, आप भी वही उपाय करें। जि า उपाय से मुझ पर श्रीराम प्रभु ने अनुग्रह किया है। वह आपकी अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करने में समर्थ है, इससे श्रेष्ठ कोई दूसरा मार्ग मैं जानता ह नहीं हूँ। इस प्रकार कह कर श्री शंकर जी को श्री रामतारक षडक्ष मन्त्र का अनुष्ठान करने की विधि श्री ब्रह्मा जी ने बतलाई और अपने ब्रह्मलोक में चले गये। तभी से श्री शंकर जी ने हजारों मन्वन्तर पर्यन्त आराधना करके श्रीराम की कृपा वरदान प्राप्त कर काशीवासियों को वही श्रीराम मन्त्र मरते समय प्रदान करके मोक्षधाम देने का कार्य आरंभ किया जो अभी तक कर रहे हैं। यह कथा श्री अगस्त्य संहिता के सातवें अध्याय में श्री सुतीक्ष्ण जी के पूछने पर उनके गुरुदेव श्री अगस्त्य जी ने सुनायी है। श्री रामोत्तर तापनी उपनिषद् में भी यह कथा है जो पीछे आ चुकी है ।।५८२–५९२।।

पुलह संहितायाम्—

> रामित्येकाक्षरं बीजं कारणं प्रणवस्य च।
> तस्माद् ब्रह्मा हरिः शम्भुः योगिनः समुपारगो ।।५९३।।
> एकः प्रणवः श्रीराम शब्दान्तर प्रयोगः।

"रां" यह श्रीरामन्त्र का बीजाक्षर प्रणव कारण है। इसीलिये ब्रह्मा–विष्णु–महेश्वर सभी देवों के साथ योगी जन इसी 'राम' की

उपासना करते हैं । एक प्रणवमन्त्र हरी श्रीराम नाम से उत्पन्न होने से श्रीरामनाम के स्थान पर प्रयोग करके लोग धन्य हो रहे है ।।५६३।।

महारामायणे सर्ग ५२ श्लोक ५-६

कोटि कन्दर्प शोभाढ्यं सर्वाभरण भूषिते ।
रम्यरूपार्णवे रामे रमन्ते सनकादयः ।।५६४।।
अतएव रमुक्रीडा रामनाम्नः प्रवर्तते ।
रमन्ते मुनयोसर्वे नित्यं यस्यांघ्रिपंकजे ।।५६५।।

इनकी टीका पहले हो चुकी है ।

अगस्त्यसंहितायाम् अध्याय १६ श्लोक १ से ६ पर्यन्त–

सुतीक्ष्ण मन्त्रवर्येषु श्रेष्ठो वैष्णव उच्यते ।
गाणपत्येषु शैवेषु शाक्त सौरेष्यभीष्ट दः ।।५६६।।
वैष्णवेस्वपि मन्त्रेषु राममन्त्राः फलाधिकाः ।
गाणपत्यादि मन्त्रेषु कोटि कोटि गुणाधिकाः ।।५६७।।
मन्त्रास्तेष्वप्यनायास फलदोऽयं षडक्षरः ।
षडक्षरोऽयं मन्त्रस्तु सर्वाधौध निवारणः ।।५६८।।
मन्त्रराज इति प्रोक्तः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ।
दनंदिनं च दुरितं पक्षमासर्तुवर्षजम् ।।५६६।।
सर्वंदहति निश्शेषं ऊर्णाजालमिवानलः ।
ब्रह्महत्या सहस्त्राणि ज्ञानाज्ञान कृतानि च ।।६००।।
स्वर्णस्तेय सुरापान गुरुतल्पायुतानि च ।
कोटि कोटि सहस्राणि स्युपपातकजान्यपि ।।६०१।।
सर्वाण्यपि समं यान्ति राममन्त्रानुकीर्तनात् ।
भूतप्रेतपिशाचाद्याः कुष्माण्डाग्रह राक्षसाः ।।
दूरादेव प्रधावन्ति रामनामप्रभावतः ।।६०२।।

श्रीअगस्त्यजी अपने प्रिय शिष्य सुतीक्ष्ण जी को समझाते हैं कि-हे प्रिय शिष्य सुतीक्ष्ण ! गणपति-शिव-शक्ति-सूर्यादिक देवताओं के मन्त्रों से श्री वैष्णवमन्त्र सर्वश्रेष्ठ हैं । उन श्री वैष्णव मन्त्रों में भी श्रीराम के मन्त्र श्रेष्ठ माने जाते हैं । जो गणपति आदि देवमन्त्रों से कोटि-कोटि गुणा अधिक फल प्रदान करने वाले है । उन श्रीराममन्त्रों में भी षडक्षर श्रीरामसर्वोत्तम फलदायक है । यह षडक्षर "रां रामायनमः" मन्त्र सभी प्रकार के पाप के समूहों का विनाश करने वाला है । इसीलिये यह सभी श्रेष्ठ मन्त्रों से भी परमश्रेष्ठ है । दिन-दिन के किये हुए पाप, सप्ताह-मास ऋतु-उत्तरायन-दक्षिणायन अथवा वर्ष पर्यन्त किये हुए पापों को जैसे ऊनके कपड़ों को अग्नि जला देता है वैसे ही सभी पापों को जलाकर निःशेष कर देता है । हजारों ब्रह्महत्यादिक पाप, जानकर अथवा अनजान में किये पाप, सोना को चुराने का पाप, मदिरापान करने का पाप, गुरुपत्नी से भोग करने का पाप, इन महापातकों को तथा करोडों-करोडों छोटे-बड़े पाप-उप पातक जो भी हो गये हों श्रीराममन्त्र का कीर्तन करने से तुरन्त ही जलकर भस्म हो जाते हैं । भूत-प्रेत-पिशाच-कुष्माण्ड ग्रह-ब्रह्म-राक्षसादिक श्रीरामनाम के प्रभाव से दूर से ही भाग जाते हैं । इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।५९६ से ६०२।।

पिप्पलाद संहितायाम्—

निःशेषं नाशयत्येव रामात्माद्याक्षरो मनुः ।
मनोवाक्काय जनितं संचितं दुरितञ्च यत् ।।६०३।।

ग्रामारण्यं च दग्धैव संचितं दुरितं च यत् ।
मद्यपानेन यत्पापं सर्वं सद्यः विनाशयेत् ।।६०४।।

अभक्ष्यभक्षणोत्पन्नं मिथ्याज्ञान समुद्भवम् ।
सर्वंविलीयते राम मन्त्रराजस्य कीर्तनात् ।।६०५।।

श्रोत्रियस्वर्णहरणंमुत्थितं पाप संचयम् ।
अग्नेर्देषापहरणात् तदप्येतद् विनाशयेत् ।।६०६।।

ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं चापि सकल्मषम् ।
संचिनोति न रामेति तदप्याशु विनाशयेत् ।।६०७।।

गत्वाऽपि मातरं मोहाद् अगम्याश्चैव योषितः ।
उपासनेन मन्त्रेण रामस्तदपि नाशयेत् ।।६०८।।
महापातक पापिष्ठ संगत्या संचितं च यत् ।
नाशयेत् कथनालाप शयनासन भोजनैः ।।६०९।।
पितृ मातृवधोत्पन्नं बुद्धि पूर्वमघंकृतम् ।
निःशेषं नाशयत्येव राममन्त्रानुकीर्तनात् ।।६१०।।
भ्रातृ मित्रवधोत्पन्नं यद्वा विश्वासघातकम् ।
यद्वा बालवधोत्पन्नं कृत्वाशस्त्रास्त्रमारकम् ।।६११।।
गुरुपुत्रकलत्रादि वधोत्पन्नमघं च यत् ।
तदनुष्ठान मन्त्रेण सर्वमेतत् प्रलीयते ।।६१२।।
यत्प्रयागादितीर्थार्थं प्रायश्चितशतेन यत् ।
नैवापनुद्यते पापं तदप्याशु विनाशयेत् ।।६१३।।
ये देशेऽवदेशे वै रामभद्रमुपासते ।
दुर्भिक्षादिभयं तेषां न भवन्ति कदाचन ।।६१४।।
शान्तः प्रसन्नो वरदः अक्रोधो भक्तवत्सलः ।
अनेन सदृशो मन्त्रो जगत्स्वपि न विद्यते ।।६१५।।
सम्यगाराधितो रामः प्रसीदत्येव सत्वरम् ।
ददात्यामुष्यमैश्वर्यमन्ते रामपदं च यत् ।।६१६।।

श्लोक सरल हैं, इनमें वर्णित सभी पातक महापातक-उप पातक सब श्रीराममन्त्र का जप करने से तुरन्त नष्ट हो जाते हैं। प्रयागादिक महान् तीर्थ भी जिन पापों को प्रायश्चित करने पर भी पावन नहीं कर सकते हैं, ऐसे घोरातिघोर पाप भी श्रीराममंत्र का जप करने से नष्ट हों जाते हैं। पवित्र देश में अथवा अपवित्र प्रदेश में कहीं भी निवास करके श्रीराममंत्र का आराधन करने से दुर्भिक्ष आदि भय शान्त कर देता है। यह मन्त्र अतिशान्त स्वभाववाला, सदैव प्रसन्न, वरदायक, क्रोध रहित भक्तवत्सल अति कृपालु हैं। इसके सरीखा मंत्र संसार में कोई है ही नहीं। इसकी भली-भांति आराधना करने से श्रीराम प्रसन्न होते हैं। यह इसलोक

में समस्त ऐश्वर्य तथा अन्त में श्रीराम-धाम साकेत पद की प्राप्ति कराता है ॥६०४ से ६१६॥

वृद्धहारीतस्मृतौ—अध्याय ६ श्लोक २४०—२५०—

षडक्षरं दाशरथेस्तारकं ब्रह्म गद्यते ।
सर्वैश्वर्यप्रदं नृणां सर्वकामफलप्रदम् ॥६१७॥
एतदेव परं मंत्रं ब्रह्मरुद्रादिदेवला ।
ऋषयश्च महात्मानो मुक्ता जप्त्वा भवाम्बुधौ ॥६१८॥
एतन्मन्त्रमगस्त्यो वै जप्त्वा रुद्रत्वमाप्नुयात् ।
ब्रह्मत्वं काश्यपश्चैव कौशिकस्त्वमरेशताम् ॥६१९॥
कार्तिकेयो मनुश्चैव रुद्रार्कगिरिनारदौ ।
वालखिल्यादि मुनयो देवतात्वं प्रपेदिरे ॥६२०॥
इममेव जपन्मन्त्र रुद्रस्त्रिपुर घातकः ।
ब्रह्महत्याविनिर्मुक्तो पूज्यमानो सुरासुरैः ॥६२१॥
अद्यापिरुद्रः काश्यां तु सर्वेषां त्यक्त जीविनाम् ।
दिशत्येतन्महामत्रं तारकं ब्रह्म नामकम् ॥६२२॥
तस्य श्रवणमात्रेण सर्व एव दिवं गताः ।
श्रीरामायनमो ह्येष तारकब्रह्म संज्ञकः ॥६२३॥
नाम्नां विष्णोः सहस्राणां तुल्य एषः महामनुः ।
अनन्ता भगवन्मन्या नानेन तु समाकृताः ॥६२४॥
श्रियो रमण सामर्थ्यात् सौन्दर्य गुणसागरात् ।
श्रीराम इति नामेदं तस्य विष्णोः प्रकीर्तितम् ॥६२५॥
रमयानित्य युक्तत्वात् राम इत्याभिधीयते ।
तारकैश्वर्य बीजं तु मकारस्तेन संयुतम् ॥
अवधारण योगेन रामस्तस्य मनुः स्मृतः ॥६२६॥

इनकी टीका पूर्व में हो चुकी है।

सुन्दरी तन्त्रे—

षड्वर्णः सुमहान्मन्यः स एव कल्पभूरुहः ।
ब्रह्मागस्त्य ऋषी प्रोक्तौ विश्वामित्र वशिष्ठकौ ॥६२७॥
नारदो वामदेवश्च भरद्वाज पराशरौ ।
वाल्मीकिर्ऋषयः प्रोक्ताः देवस्तेषां रघूद्वहः ॥६२८॥

शंकर वाक्यम्—

नारायणादीनि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
सम्यग् भगवतस्तेषां राम नाम प्रकाशकः ॥६२९॥
तारकैश्वर्यबीजं तु मकारस्तेन संयुतः ।
अवधारणयोगेन रामस्तस्य मनुःस्मृतः ।
तस्माद् 'राम' वैबीजं आधात्तस्य मनोः स्मृतम् ॥६३०॥
(इनकी टीका हो चुकी है)

अस्य तात्पर्यार्थः—

पूर्वंरकारात्मकत्वेन षडक्षरतारकंब्रह्म प्राधान्येनोपासितः। स एव तारक यो अप्राकृत बहुकोटि ऐश्वर्य प्रयोग रकारात्मकस्य तारक ब्रह्मणो अर्थ इत्युप संगतौ इति 'रा' शब्दः ॥६३१॥

ननु मकार स्वरूपं बीजं यत् आदिर्यस्य, आदि शब्दस्य श्रीराम शब्दानन्तर प्रयोगस्तस्मात् । पूर्वं तु रां बीजं प्रतिपाद्यम् । तस्य लक्ष्यं स्वप्रकाश चैतन्यम् । श्रीरामं असंख्य बीजमैश्वर्य प्रेरकत्वात् । यस्मिन् संख्यार्हं नाम रूपभेदादिर्नविधते सोऽसंख्येयः ॥६३२॥

इसका तात्पर्य यह है कि—पूर्व में रकारात्मक हर षडक्षर तारक ब्रह्म का प्राधान्यतः उपासना करने का वर्णन आता है। अतएव वही तारक जो अनन्त कोटि अप्राकृत ऐश्वर्य का निधान है, अतः इसका प्रयोग रकारात्मक तारक ब्रह्म के अर्थ में ही सङ्गत होता है। यह 'रा' शब्द का वैभव वर्णन है ॥६३१॥

तब मकार स्वरूप बीज जो आदि शब्द से राम शब्द के अनन्तर प्रयोग होता है, अतः पूर्व में 'रां' बीज का प्रतिपादन है। उसका लक्ष्य चैतन्य के स्वप्रकाश का प्रत्यक्ष दर्शन कराना है। श्रीराम को ही असंख्य ऐश्वर्य के बीज स्वरूप प्रेरक होने से, जिसमें इतने नाम, इतने रूप, इतना ऐश्वर्य, इतना प्रभाव ऐसी निश्चित कोई संख्या न होने से 'रां' को असंख्येय अपरम्पार कहा गया है ।।६३२।।

किन्तु श्रीराम शब्दानन्तर प्रणवः प्रयोगः स्तौति इति प्रणवः तस्मात् ओमिति प्रणौति इत्यादि श्रुतेः। प्रणम्यते इति प्रणवः प्रणमन्ति यं वेदास्तस्मात् प्रणव उच्यते, इति वचनात्। प्रणवशब्दः श्रीरामेतिपर्यवसाने नित्यानन्दे प्रतिपाद्यते ।।६३३।।

प्रथम श्रीराम शब्द ही नित्य सनातन है, तत्पश्चात् प्रणव का ॐकार का प्रयोग हुआ। अतः प्रकर्ष भाव से स्तुति किया जाय उसको प्रणव कहते हैं। अथवा जिसके द्वारा प्रणाम किया जाय वह प्रणव है। अथवा जिसको सभी वेद प्रणाम करते हैं वह प्रणव है। इस प्रकार प्रणव शब्द का श्रीराम में ही पर्यावसान होता है, जो नित्य आनन्द स्वरूप का प्रतिपादन करता है ।।६३३।।

परा मा शोभा अस्येति परमः। सर्वोत्कृष्टो वा। अनन्याधीनः सिद्धित्वात्। सचिदात्मतया परमरूप परमानन्दैक रूपत्त्वात्। सर्वदा सम्पूर्णत्वात् पुष्टः। अप्राकृतशरीरं रमणीयं रामं। दाशरथिप्रयोगः ईक्षमं दर्शनं शुभाकरं मुमुक्षूणां मोक्षदम्। भोगार्थिनां भोगदं। पापिनां पावनं करोति। सर्वसन्देह विच्छेदकरणं हृदयग्रन्धि विच्छेद करं स्वकर्मणां क्षपणं अविद्यायाश्च निवर्तकम्। भिद्यते हृदयग्रन्थिः ।।६३४।।

'परा' सर्वश्रेष्ठ 'मा' शोभा जिसकी है वह परम कहाता है। अथवा सर्वोत्कृष्ट कहाता है। इससे अन्य किसी के आधीन होने वाला सर्वतन्त्र स्वतन्त्र स्वयं प्रारूप श्रीराम रूप का वर्णन है। सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा का परमानन्दस्वरूप है यह सिद्ध होता है। सदा सर्वदा सम्पूर्ण परिपूर्ण होने से ही वे पुष्ट हैं। उनका अप्राकृत दिव्य मंगलमय विग्रह

है, वे रमणीय श्रीराम दाशरथि हैं। अर्थात जिनका दर्शन परमशुभकर है, मुमुक्षुओं को मोक्ष देने वाला है। भोगार्थियों को संसार के सुख भोग प्रदान करने वाला है। पापियों को पावन करने वाला है। सभी प्रकार के सम्पूर्ण सन्देहों को विच्छेद करने वाला है। हृदय की गांठों को भेदन करने वाला है, अपने कर्मों का निर्मूलन क्षय करने वाला है। अविद्या का निवारण करने वाला है ।।६३४।।

विष्णु पुराणे—

गन्धर्वाप्सरसः सिद्धाः किन्नरोरग चारणाः ।
नान्तं गुणानां गच्छन्ति तेनाऽनन्तोऽमव्ययः ।।६३५।।

गंधर्व-अप्सरायें-सिद्ध-किन्नर-नाग-चारणादि कोई भी जिसके गुणों का अन्त नहीं पा सकते हैं। अतः उसका नाम अनन्त है। वही अव्यय पुरुष परमात्मा श्रीराम है ।।६३५।।

हारीतस्मृतौ श्रीराममन्त्रन्यास प्रभावश्च

ॐ अस्य श्रीराममन्त्र राजस्य जानकी ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीरामो देवता। रां बीजं। नमः शक्तिः। रामाय कीलकम्। श्रीसीता रामकृपा प्राप्त्यर्थे वा-इष्टार्थे जपे विनियोगः। इति संकल्पः।

श्रीजानकीऋषये नमः। गायत्री छंदसे नमः मुखे। श्रीरामदेवताये नमः हृदि। रां बीजाय नमः गुह्ये। नमःशक्तये नमः पादयोः। रामायकीलकाय नमः सर्वाङ्गे। इति ऋष्यादिन्यासः।

रां रीं रूं रैं रौं रः। ॐ रां अंगुष्ठाभ्यांनमः। ॐ रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ रः करतलपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः।

ॐ रां हृदयायनमः । ॐ रीं शिरसेस्वाहा । ॐ रुं शिखायै-वषट् । ॐ रैं कवचाय हुँ । ॐ रौं नेत्राभ्यां हूँ वौषट् । ॐ रः अस्त्राय फट् । इति हृदयादि न्यासः ।

ॐ रां नमो मूर्ध्नि । ॐ रा नमः भुवोर्मध्ये । ॐ मा नमः हृदि । ॐ य नमो नाभौ । ॐ न नमो गुह्ये । ॐ मः नमः पादयोः । इति वर्णन्यासः ।

ॐ रां नमो मूर्ध्नि । ॐ रामाय नमः नाभौ । ॐ नतोनमः पादयोः । इति शब्द न्यासः ।।६३६।।

अथ पञ्च संस्कारः

तापं पुण्ड्रं तथा नाम मन्त्र माला तथैव च ।
अमी हि पञ्च संस्काराः पारमैकान्त्य हेतवः ।।
इति पञ्चसंस्कार संस्कृतो यः स वैष्णवः नान्यथेति भावः ।।६३७।।

तप्त धनुर्बाण की छाप, उर्ध्वपुण्ड्र तिलक, भगवत्संबन्धी दास्य भावान्त नाम, श्रीराम षडक्षर मन्त्र तथा श्री तुलसी की माला ये पांच संस्कार श्री आचार्य की कृपा से प्राप्त करने से परम एकान्तिक प्रभु धाम की प्राप्ति होती है । इन पञ्च संस्कारों से संस्कृत अलंकृत ही श्री वैष्णव प्रभु का प्यारा होता है । अन्यथा नहीं होता ।।६३७।।

"धनुर्बाण धरो विद्वान् माला तुलसीजां धृतः ।
सजीवन्मुक्तः" ।।६३८।।

जो धनुर्बाण की मुद्रा धारण करता है तथा श्री तुलसी की माला कण्ठी धारण करता है वह विद्वान जीवन्मुक्त हो जाता है ।।६३८।।

यजुर्वेदं हिरण्यकेशी शाखायाम्—

उध्र्वपुण्ड्रं हरि पादाकृति आत्मनो निर्धाराय यो धारयति स परस्य प्रियो भवति। मध्ये छिद्रं ऊर्ध्वपुण्ड्रं यो धारयति स परः पुण्यवान् भवति। स मुक्ति भाग्भवति। इति प्रथम संस्कारः ।।६३९।।

श्रीराम प्रभु के चरणों की आकृति वाला उध्र्वपुण्ड्र जो अपने आत्मा के उद्धार के लिए धारण करता है वह परमात्मा का प्यारा बनता है। मध्य में श्री धारण के लिए खाली स्थान रख कर जो उध्र्व पुण्ड्र धारण करता है वह पुण्यवान बनता है। वह मुक्ति का भागीदार बनता है। यह प्रथम संस्कार 'श्रीराम पटल' में है ।।६३९।।

द्वितीय संस्कारः—

धृतोध्र्व पुण्ड्रो धृतः मुद्रा परं रामं ध्यायति यो महात्मा स्वरेण सद् हृदय स्थितं परात्परं ज्योतिः महतो महीयान्। अङ्क येद्यं धनुर्बाणभ्यां सविधि। इति तृतीय संस्कारः। षडक्षरोऽयं मन्त्रस्तु सर्वाधौधनिवारकः। इति चतुर्थं संस्कारः। धनुर्बाण धरो विद्वान् मालां तुलसीजां धृतः सजीवन्मुक्तः। इति पञ्चम संस्कारः ।।६४०।।

ये सब मन्त्र 'श्रीराम पटल' ग्रन्थ में हैं। पहले के संत सभी इसको कंठस्थ रखते थे, तथा धाम क्षेत्र के साथ पूछे भी जाते थे। जो नहीं जानता था वह साधु नहीं समझा जाता है। अब तो यह टकसाल रीति-रिवाज उठ गया है ।।६४०।।

अथ ऋग्वेदीय आश्वालायिनी शाखायाम्—

ब्रह्मनाड्या समारभ्य केशाधिमृदान्वितः। छिद्रं ऊर्ध्वशुक्लं हरिद्रासार संयुतम्। पुण्ड्रं धारयेधस्तु मुक्तिभागी भवेन्नरः। इति श्रुतिः। ।।६४१।।

ऋग्वेद की आश्वालायिनी शाखा का वचन है कि—ब्रह्म नाड़ी सुषुम्ना के स्थान से आरम्भ कर केश तक ललाट में जो श्वेत मृत्तिका से मध्य में छिद्र जो रहता है उसमें हरिद्रा से बनी श्री लगा कर जो कोई ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण करता है, वह मुक्ति का भागीदार होता है ।।६४१।।

यजुर्वेदे कठवल्ली शाखायाम्—

नासिका केश पर्यन्तं ऊर्ध्वपुण्ड्रं सुशोभितम् । मध्ये श्रीचूर्णं समायुक्तं धारयेत् नरःस परस्यप्रियो भवति। सभ्रूणहत्यांतरति। स ब्रह्महत्यां तरति । स मुक्तिभागी भवति । इति श्रुतिः ।।६४२।।

नासिका से केश पर्यन्त सुन्दर शोभा सम्पन्न जो ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करता है, मध्य में श्रीपूर्ण धारण करता है, वह परमात्मा का प्यारा बनता है । वह भ्रूण हत्या ब्रह्महत्यादिक पापों से तर जाता है । वह मुक्ति का हिस्सेदार बनता है ऐसा श्रुति कहती है ।।६४२।।

सामवेदे नैगमशाखायाम्—

। विशालं शुक्लं शुभ्रं ललाटे शुभ कर्माणि । स छिद्रं ऊर्ध्वं पुण्ड्रं चूर्णं हरिद्रायुक्तं मध्ये धारयति स एव मुक्तो भवति ।।६४३।।

विशाल श्वेत सुन्दर मध्य छिद्र में हरिद्रा चूर्ण से बनी श्री से सुशोभित उर्ध्वपुण्ड्र जो धारण करता है वह मुक्त हो जाता है ।।६४३।।

एकान्तिनो महाभागाः सर्वभूतहितेरताः ।
सान्तरालं प्रकुर्वन्ति पुण्ड्रं हरिपदा कृतिम् ।।६४४।।
ऊर्ध्वपुण्ड्रं मृर्जुं सौम्यं ललाटे यस्य दृश्यते ।
स चाण्डालोऽपि शुद्धात्मा पूज्य एव न संशयः ।।६४५।।

स्कंद पुराण वैष्णव खण्ड मार्गशीर्ष महात्म्ये अध्याय २ श्लोक ३१ तथा अध्याय ३ श्लोक श्लोक १२ में लिखा है कि जो सभी प्राणियों का हित करने वाले हैं ऐसे एकान्तिक अनन्य प्रभु के भक्त श्री हरि के चरणों

की आकृति का बीच में अन्तराल रख कर ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करते हैं। जिसके ललाट में सुन्दर ऊर्ध्वपुण्ड्र शोभा देता है वह चाण्डाल भी विशुद्धात्मा है तथा पूज्य है। इसमें कोई संशय नहीं है ॥६४४॥

यच्छरीरं मनुष्याणांभूर्ध्वपुण्ड्रं विनाकृतम्।
तन्मुखं नैव द्रष्टव्यं श्मशान सदृशं हि तत् ॥६४६॥

स्कंदपुराण मार्गशीर्ष महात्म्य श्री वैष्णव खण्ड अ. ३ श्लोक २२ में कहा है कि जिसका शरीर ऊर्ध्वपुण्ड्र बिना है, उन मनुष्यों का मुख भी नहीं देखना चाहिए, वह तो श्मसान के समान अपवित्र है ॥६४६॥

सान्तरालोर्ध्वपुण्ड्रं तु मध्ये च श्रेष्ठधामनि।
हरिद्रासार सम्भूतं रजसा धारयेत् श्रयम् ॥६४७॥

उर्ध्वपुण्ड्र मध्य में खाली जगह रखकर उसमें हरिद्रा से बनी हुई श्री का चूर्ण धारण करना चाहिए ॥६४७॥

बृहद् वशिष्ठ संहितायाम्—

चित्रकूटे सु गंगायाः मृत्तिकामङ्गलायिनीम्।
तिलके तु सदा ग्राह्या श्रीरामस्य पदाङ्किता ॥६४८॥
तत्रोद्भवायां मृत्तिकां च रम्यं तिलकं विधायैव लालटपट्टे।
कुर्वन्ति शुभ्रं पुरुषाग्रणी स प्रयाति रामस्य पदं महामुने ॥६४९॥

श्री चित्रकूट तथा श्री गंगाजी की मंगलमयी मृत्तिका जो श्री सीताराम जी के श्रीचरणों के अङ्कित भूमि के द्वारा प्राप्त की गई हो वही तिलक करने के लिए सदैव ग्रहण करनी चाहिए। वहां की रमणीय मृतिका लाकर जो ललाट प्रदेश में सुन्दर तिलक धारण करते हैं वे मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ हैं। हे महामुने ! ऐसे भाग्यशाली जीव श्रीराम के दिव्यधाम साकेत में निवास करते हैं ॥६४८-६४९॥

श्रीरामरहस्योपनिषद् अध्याय १ मंत्र ७ श्रीरामं प्रति श्रीहनुमद्वाक्यम्—

सीतापते ! याजमानः सोहं स विप्रः प्रणवाधिकारः कथं स्यात् सहोवाच श्रीराम एवोवाचेति। एतेषामेव षडक्षराधिकारो वर्तते तेषां प्रणवाधिकारः स्यान्नान्येषाम्। केवलमकारो

कारमकारार्धमात्रा सहितं प्रणवमुह्य यो राममन्त्र जपति तस्य शुभकरोऽहं स्याम् ।।६५०।।

हे सीतापते ! प्रणव का अधिकार कैसे प्राप्त हो सकता है ? प्रसन्न होकर श्रीराम जी बोले कि जिसको षडक्षर राम मन्त्र जपने का अधिकार है उसको प्रणव ॐकार जपने का अधिकार है अन्यों को नहीं है। केवल मकार उकार अकार अर्धमात्रा चारों मिलकर ॐकार बनता है, इस ॐकार के सहित जो राममंत्र का जप करता है उसका हम कल्याण करते हैं ।।६५०।। यहां षडक्षर कहने से 'रां' बीज रहित राममंत्र में ॐकार लगाने का विधान है। 'रां' बीज वाले मंत्र में प्रणव नहीं लगता है। षडक्षर राममंत्र कई प्रकार के हैं। जैसे—

पद्मपुराण क्रियायोगसार खण्ड में अध्याय १५ श्लोक ९७—

नमो रामायेति विप्रेन्द्र मन्त्रमोंकार पूर्वकम् ।
षडक्षरं जपेधस्तु सायुज्यं प्राथते हरेः ।।६५१।।

इसमें ॐ रामायनमः है, कहीं श्रीरामाय नमः है, परन्तु "रां रामायनमः" इस राम मन्त्र में ॐ नहीं लगता है। सो स्मरण रखना चाहिये ।।६५१।।

पद्मपुराणे —

तुलसी काष्ठ मालां तु प्रेतराजस्य दूतकाः ।
दृष्टवा नश्यन्ति दूरेण वातोद्धूतं यथा दलम् ।।६५२।।
अन्तकालेऽपि यस्यांगे तुलसी मालिकां स्पृशेत् ।
तस्यदेहोद्भवं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ।।६५३।।
कण्ठे शिरसि बाहुभ्यां कर्णयोः करयोस्थता ।
विभृयस्तुलसीं यस्तु स ज्ञेयो श्रीहरेः समः ।।६५४।।
यज्ञसूत्रं बिना विप्राः वेद हीना क्रिया यथा ।
सत्य हीना यथा वाणी माला हीनो तथा नरः ।।६५५।।

पद्मपुराण ब्रह्मखंड अध्याय २२ श्लोक १८ में लिखा है कि— तुलसी के काष्ठ की माला धारण किये हुए को देख कर यमराज के दूत

ऐसे भागते हैं जैसे पवन के झकोरे से सूखा पत्ता। अन्त समय में भी जिसके गले में तुलसी की कंठी पड़ जाती है उसके शरीर से हुए सब पाप तुरन्त नष्ट हो जाते हैं। कण्ठ में-शिर में-भुजाओं में-कान में-हाथ में कहीं भी तुलसी धारण करता है अथवा इन सभी अङ्गों में जो तुलसी धारण करता है वह साक्षात् श्रीहरि के समान ही समझना चाहिए। बिना यज्ञोपवीत के ब्राह्मण, बिना वेदमन्त्रों के जैसे क्रिया-कर्म तथा सत्य के बिना जैसे वाणी व्यर्थ है वैसे ही तुलसी माला के बिना मनुष्य समझना चाहिए ।।६५२ से ६५५।। नारदपञ्चरात्रे—

अङ्कयेच्चापबाणाभ्यां नाम कुर्य्याच्च वैष्णवम् ।।६५६।।

श्रीमन्महारामायणे सर्ग ४९ श्लोक ११—

रामस्य चैय हृदये शुचिराजमन्त्रः श्रीरामनामसहितो निज सत्सङ्ग नित्यनिरतः श्रुतितत्त्ववेत्ता ज्ञाता महान् रघुपते समुपासकः सः नामयुक्तः ।।६५७।।

धनुष बाण की छाप मुद्रा से शिष्य को अङ्कित करे तथा वैष्णव सम्बन्धी नाम रखे। श्री शंकर जी पार्वती जी से कहते हैं—जिसके हृदय में पवित्रों को भी पावन करने वाला श्रीराम मन्त्रराज विराजमान है, श्रीरामजी के दास्य सम्बन्धी नाम से जो युक्त है, जो सदा निरन्तर सन्तों का सत्संग करता है, श्रुति शास्त्र के सिद्धान्त को जो जानता है, श्री रघुनाथ जी के महान् तत्त्व का ज्ञाता है, वही श्रीराम का श्रेष्ठ उपासक है ।।६५६—६५७।।

अथ धनुर्बाण मुद्राप्रभावः

ॐ यो वै नित्य धनुर्बाणांकितो भवति स पाप्मानं तरति। स संसारं तरति स भगवदाश्रितो भवति स भगद्रूपो भवतीति श्रुतिः ।।६५८।।

जो नित्य धनुर्वाण से अङ्कित होता है, वह सब पापों से तर जाता है। वह संसार से तर जाता है। वह भगवान का आश्रित हो जाता है। वह भगवान् का रूप ही जाता है। ऐसा श्रुति कहती है ।।६५८।।

एवं शाखा प्रतिशाखा न्यानेन धनुर्बाण तप्त मुद्रा अति प्रभावपूर्ण श्रीरामभक्त रसिकाः धारयन्ति ।।६५९।।

इस प्रकार शाखा प्रतिशाखा न्याय से अर्थात् एक-एक शाखा पकड कर जैसे ऊँचे चढ़ जाता है वैसे एक-एक संस्कार के पश्चात् दूसरा संस्कार ग्रहण करके अतिप्रभाव सम्पन्न तप्त धनुर्वाण मुद्रा को श्रीराम जी के रसिक भक्त धारण करते हैं ।।६५९।।

अगस्त्य संहितायाम्—

वामे करे धनुः कुर्य्यात् दक्षिणे बाणमेव च ।
स बिन्दुं तिलकं कुर्य्यात् मुक्ति भागी भवेन्नरः ।।६६०।।
उभाभ्यामपिरेखाभ्यां तिलकः परिकथ्यते ।
रामपादास्थितं बिन्दुं पीतं च परिधार्य्यते ।।६६१।।
तिलकं रामरूपेण बिन्दुरूपेण भूमिजाम् ।
धृत्वा च रामभक्तानां अग्रगण्यो गुणाग्रणीः ।।६६२।।
भ्रुवोन्तादपि चारभ्य ललाटान्ते च धारयेत् ।
मनोहरं तथा मध्ये अन्तरं युग्ममंगुलम् ।।६६३।।

श्री अगस्त्य संहिता में श्री अगस्त्य जी का वचन श्री सुतीक्षण जी के प्रति है कि—बांये हाथ में धनुष तथा दाहिने हाथ में बाण के चिन्ह को धारण करता है तथा जो बिन्दु के सहित तिलक धारण करता है वह मुक्ति का भागी होता है । दोनों रेखाओं के सहित तिलक कहाता है । श्रीहरि के चरण में स्थित जो बिन्दु है वह पोत रङ्ग से तिलक के बीच में धारण करे । तिलक की रेखायें श्रीरामजी का स्वरूप समझे और बिन्दु को श्री भूमि-नन्दिनी श्री जानकी जो का स्वरूप माने । इस प्रकार का तिलक धारण करने से श्रीराम भक्तों में अग्रगण्य होकर सभी गुणों वालों का भी अग्रगण्य हो जाता है । भौहों के अन्त से लेकर ललाट के अन्त तक मनोहर सुन्दर दोनों रेखाओं के बीच में दो अंगुल का अन्तर रहना चाहिए, यह तिलक का रूप बतलाया है । जो बिन्दु वाले सन्तों का प्रिय तिलक है ।।६६०–६६३।।

रामायुधाङ्कितं दृष्टवा शिरसा प्रणमेतु यः ।
षष्टिवर्ष सहस्राणि ब्रह्मलोके महीयते ।।६६४।।
या गतिर्योग युक्तानां मुनीनां वीतरागिणाम् ।
धनुर्वाणाङ्किते नैव सा लतिर्लभ्यते क्षणात् ।।६६५।।
बहुमूले धनुर्बाणेनाङ्कितो राम किंकरः ।
शीतले नाथ तप्तेन तस्य मुक्तिर्न संशयः ।।६६६।।
शीतलाच्छतगुणं प्रोक्तं तप्तस्य परिधारणे ।
अंकितास्सर्वकालेस्युश्चतुवर्णाश्रमादयः ।।६६७।।
चक्राच्छतगुणं प्रोक्तं फलं बाणादि धारणे ।
सर्वेषां रामभक्तानां राममुद्राभिधारणे ।।६६८।।
नांकितो चापबाणाभ्यां न मन्त्रोऽस्ति षडक्षरः ।
न नामराम सम्बन्धि न रामोपासको भवेत् ।।६६९।।
मया वै प्रोच्यते पुत्र मुद्रा माहात्म्यमेव च ।
स्वगात्रे धारयेद्योऽपि स रामोपासको महान् ।।६७०।।

श्रीरामायुध धनुष बाण से अंकित पुरुष को देखकर जो शिर से प्रणाम करता है, वह साठ हजार वर्ष ब्रह्मलोक में पूजित होकर वास करता है। योग सम्पन्न, वैराग्यवान् मुनियों को जो गति प्राप्त होती है, वह धनुर्वाण से अंकित होने से तत्काल क्षण मात्र में प्राप्त हो जाती है। बाहुमूल में शीतल अथवा तप्त धनुर्बाण से जो श्रीराम भक्त अंकित होता है उसको निःसंदेह मुक्ति प्राप्त होती है। शीतल छाप चन्दन से लगाने की अपेक्षा जो तप्त छाप हवन करके ली जाती है उसका सौ गुना अधिक फल प्राप्त होता है। इसलिये चारों वर्ण तथा चारों आश्रमों वालों को तप्त धनुष बाण से अंकित हो जाना चाहिए। शंख-चक्र की छाप लेने से सौ गुणा अधिक फल धनुष बाण के धारण से होता है। अतः सभी श्रीराम भक्तों को श्रीराम मुद्रा ही धारण करना चाहिए। जो धनुष बाण से अंकित नहीं है, जिसको षडक्षर श्रीराम मन्त्र प्राप्त नहीं हुआ है तथा जिसका नाम श्री राम सम्बन्धी नहीं है वह श्रीराम का उपासक ही नहीं है। हे पुत्र ! यह श्री राममुद्रा धारण करने का महात्म्य मैंने तुमसे कहा

है, जो इस मुद्रा की अपने शरीर पर धारण करता है वही श्रीराम का भक्त श्रीराम उपासक हो सकता है ।।६६४–६७०।।

महाशिव संहितायाम् अगस्त्य वाक्यं सुतीक्षणं प्रति—

रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां सीतायाः मुद्रया सह ।
अंकित ये महाप्राज्ञा नित्यमुक्ताश्च मुक्तिदाः ।।६७१।।
मुनेऽस्मिन भारतवर्षे चाप बाणांकिता नराः ।
स्वपरं कुल साहस्रं तारयन्ति सुखेन वै ।।६७२।।
येषां कुले तु एकोऽपि रामायुध युतः सुधीः ।
तेऽपि यान्ति परलोकं यत्र योग मखादिभिः ।।६७३।।
चिरं गता हि नरके पूर्वजा यस्य कस्य वै ।
रामायुधांकिते वंशे तेऽपि यान्ति परां गतिम् ।।६७४।।
या गतिर्योगयुक्तानां नैष्ठिकानां च न्यासिनाम् ।
दुर्लभां तां गतिं चेव प्राप्नोति धनुषांकितः ।।६७५।।
धनुषांकित बाहुभ्यामर्चनं देव पितृणाम् ।
तस्य ते पितृदेवाश्च गच्छन्ति परमं पदम् ।।६७६।।
धनुःशरङ्कितो मर्त्यो यद्यत्कुर्याच्छुभं मुने ।
तत्तच्छत गुणं याति विपरीते तु निष्फलम् ।।६७७।।
यस्य श्राद्धे च होमे च होतारो धनुषांकिताः ।
तस्य ते पितृदेवाश्च सुधां प्राश्नन्ति मोदिताः ।।६७८।।
येषु श्राद्धेषु होमेषु न कोऽपि धनुषांकितः ।
तत्र पिण्डाहुतिर्याति निष्फलैव न संशयः ।।६७९।।
सीतायाः तप्तमुद्राञ्च श्रीरामास्यायुधे उभे ।
धारयन् भुवनं सद्यः पुनात्येव सुनिश्चितम् ।।६८०।।

श्री अगस्त्य जी ने अपनी संहिता में तो श्री रामायुध की महिमा अपरंपार वर्णन की है । आप महाशिव संहिता में भी अपने प्रिय शिष्य सुतीक्षण जी से कहते हैं कि–तपाये हुए श्री रामायुध धनुष बाण से तथा

श्री सीताजी की मुद्रिका से जो महान बुद्धिमान अंकित होते हैं वे स्वयं नित्य मुक्त होकर दूसरों को भी मुक्ति प्रदान करने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेते हैं। हे मुने! इस भारतवर्ष में जो धनुर्बाण से अङ्कित होते हैं वे सुखपूर्वक अपने तथा दूसरे अपने सत्संगियों के भी हजारों पीढ़ी तक कुल को तार देते हैं। जिनके कुल में एक भी सुन्दर बुद्धि वाला कोई मनुष्य श्री रामायुध से अङ्कित हो जाता है तो उसके कुल के सभी पूर्वज उस गति को प्राप्त करते हैं जो योग-यज्ञ द्वारा कठिनता से प्राप्त होती है। किसी के पुरुषा-पितर बहुत लम्बे समय से नरक में पड़े हुए हों तो भी उनके वंश में कोई धनुषबाण की तप्त छाप मुद्रा लेता है तो उन सब को भी परम गति प्राप्त हो जाती है जो गति नैष्ठिक ब्रह्मचारियों को तथा विशुद्ध सन्यासियों को प्राप्त होती है वह परम दुर्लभ गति धनुषबाण की तप्त छाप से अङ्कित होने वालों को सहज में ही प्राप्त हो जाती है। धनुष बाण से अङ्कित बाहु वाले देवताओं का पितरों का पूजन करते हैं तो उतने ही से उनके देव तथा पितर परम पद प्राप्त करते हैं। धनुष-बाण के अङ्कित भुजाओं वाला जो भी धर्म-कर्म करता है, हे मुने! वह सौ-सौ गुना अधिक फल प्रदायक हो जाता है, विपरीत अर्थात् धनुर्बाण की छाप लिये बिना जो कुछ करता है वह सब निश्फल हो जाता है। जिसके श्राद्ध में तथा होम में हवन करने वाले धनुषाङ्कित होते हैं उनके पितर तथा देवगण मुदित होकर सुधा का प्राशन करते हैं। जिनके श्राद्ध में तथा हवन में कोई एक भी धनुषाङ्कित नहीं रहता है उसका किया कर्म सब निश्फल व्यर्थ हो जाता है। श्री सीताजी की मुद्रिका तथा श्रीराम के धनुष बाण दोनों आयुधों की छाप धारण करने वाला सम्पूर्ण भुवन को पवित्र बना देता है, यह सुनिश्चित सिद्धान्त है ।।६७१–६८०।।

ब्रह्माण्ड़पुराणे–कौशलखण्डे श्रीरामगीतायाम् प्रथमेऽध्याये—

धनुर्बाणादि चिन्हानां धारणं तिलकान्वितम् ।
तुलसी काष्टमालाढयं तं जानीत सुवैष्णवम् ।।६८१।।

श्रीरामजी महाराज वशिष्ठ जी से कहते हैं कि तिलक के सहित जो धनुष बाणादि चिन्हों को धारण करता है तथा तुलसी के काष्ट की बनी माला धारण करता है उसको सुन्दर श्री वैष्णव जानना चाहिए ।।६८०।।

सदाचार संग्रह पद्मपुराणे वचनम्—

तस्माद् वै ब्राह्मणो नित्यं विधिवत् पूजयेत् हरिम् ।
तच्चिन्हैरङ्कितः श्रीशपदं प्राप्नोत्य संशयम् ।।६८२।।
चक्र वा शंखचक्रं वा शार्ङ्गं वापि शरं तथा ।
हुताग्निनेनैव सन्तप्तं सर्वपाप विमुक्तये ।।६८३।।

अतएव ब्राह्मण को नित्य ही विधिवत् श्रीहरि के चिन्हों से अंकित होकर प्रभू का पूजन करना चाहिए । ऐसा करने से श्री हरि का पद प्राप्त होता है इसमें कुछ भी शंसय नहीं है । चक्र अथवा शंख, चक्र, धनुष अथवा धनुष बाण को अग्नि में होम करके उस अग्नि में तपा कर सभी पापों से विमुक्त होने के लिए छाप लेकर अङ्कित होना ही चाहिए ।६८२-६८३।।

श्री हनुमत्संसितायां श्रीरामवचनं जानकीं प्रति—

रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां अंकिता भुजयोर्वहन् ।
येषां ते पुरुषश्रेष्ठा सिद्ध देवैश्च वन्दिताः ।।६८४।।
शूद्रो वा श्वपचो वापि चापवाणाङ्कितोनरः ।
ब्राह्मणेषु च देवेषु पूज्यस्ते श्रुतिसम्मतः ।।६८५।।
मुद्रामग्नि सुसंतप्तां शीतलां धनुषाङ्किताम् ।
धारयन्ति भुजामूले मनुजाः मनुजेश्वराः ।।६८६।।
रामायाः मुद्रिकां वापि मण्डिता भुजमूलयोः ।
मम ये च धनुर्बाणौ प्राप्नोति परमं पदम् ।।६८७।।
तापं पुण्ड्रं तथा नाम मन्त्र माला समाकुलम् ।
स नरः परमश्रेष्ठः रसिको रामवल्लभः ।।६८८।।
रामायुधांकितो मर्त्यो चिन्हमेकं च मुद्रिकाम् ।
भुजयोः मस्तके चाप्यमद्वितीय तिलकंशुभम् ।।६८९।।

श्रीराम के आयुध तप्त धनुषबाण से जिनकी भुजायें अकित हैं वसे पुरुषों में श्रेष्ठ मनुष्य सिद्धों तथा देवताओं के भी वन्दनीय हैं । शूद्र हो अथवा श्वपच हो जो मनुष्य धनुष बाण की मुद्रा से अंकित हैं वह ब्राह्मणों तथा देवताओं के भी वन्दनीय हैं यह श्रुति सम्मति सिद्धान्त है ।

शीतल अथवा तप्त धनुषबाण तथा मुद्रिका से अङ्कित हैं वे मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ मनुष्य हैं। श्री सीताजी की मुद्रिका तथा हमारे धनुष बाण से जिनके भुजमूल अंकित हैं वे मेरे परम पद को प्राप्त करते हैं। तप्त मुद्रा की छाप- तिलक-प्रभु सम्बन्धी नाम-श्रीराम मन्त्र-श्री तुलसी की माला ये पञ्च संस्कारों से सम्पन्न मनुष्य परम श्रेष्ठ श्रीराम का प्यारा उपासक है। भुजाओं पर धनुषबाण तथा मस्तक पर तिलक के साथ मुद्रिका की छाप लगाता है वह अद्वितीय प्रभु को प्यारा होता है ।।६८४-६८९।।

बृहद् वशिष्ठ संहितायाम्—

> तापं पुण्ड्रं तथा नाम मन्त्र यागश्च पञ्चमम् ।
> अमी हि पञ्च संस्कारा परमैकान्तिहेतवः ।।६९०।।
> रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां वह्निना धारणाधः च ।
> तिलकं भूषणं भाले इन्दुबिन्दु समन्वितम् ।।६९१।।
> रामायुधाङ्कितो विप्रो रामतुल्यो हि विद्यते ।
> ब्राह्मणो नांकितो वापि विद्यते शुद्रवन्सदा ।।६९२।।
> जन्मना-कर्मणा-जात्या स्वतश्च परतोऽपि वा ।
> भ्रष्टात्मा शोच्यतां याति रामबाणाङ्कितं विना ।।६९३।।
> रामायुधेन तप्तेन सीतायाः मुद्रिका शुभा ।
> परात्परतरा सिद्धि प्राप्नोति परमं पदम् ।।६९४।।

तप्तमुद्रा की छाप १ उर्ध्वपुण्ड्र तिलक २, श्री राम सम्बन्धी नाम ३ श्री षडक्षर मन्त्रराज ४ तथा याग माने पूजन जो तुलसी माला धारण करके ही किया जाता है। अतः 'माला' ऐसा पाठ भेद अधिक प्रसिद्ध है ५-ये पांच संस्कार परम ऐकान्तिक दिव्य सुख प्रदान करने वाले हैं। अग्नि में हवन विधि से तपाये हुए श्रीराम के आयुधों की छाप धारण करना तथा भाल में तिलक श्रीजी के भूषण चन्द्रिका मुद्रिका के साथ लगाना यह श्रीराम के रसिक भक्तों का श्रृंगार है। श्रीरामायुध से अंकित ब्राह्मण श्रीराम के तुल्य होता है, परन्तु जो ब्राह्मण धनुष बाण से अङ्कित नहीं है, वह श्रीराम पूजा में शूद्र के समान वर्जित माना जाता है। जो श्रीराम के धनुर्बाण से अङ्कित नहीं है वह जन्म से-कर्म से-जाति से अपने से पराये से सर्वप्रकार से भ्रष्टात्मा है, शोचनीय है। श्रीरामजी

के तप्त आयुध तथा श्री जानकी जी की मुद्रिका परम शुभ है इसको धारण करने वाला परात्परा सिद्धि को प्राप्त करता है ।।६९०–६९४।।

महाशम्भु संहितायाम्—

ज्ञान वैराग्य सन्तोषः क्षमाशीलादिकानि वै ।
रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां सीतायाः मुद्रिका सह ।।६९५।।
धृत्वा हि भुवनं सद्यः पुनात्येव सुनिश्चितम् ।
तुलसीकाष्ट संयुक्त विरेजूः राम भावुकाः ।।६९६।।
यज्ञोपवीतं च धौतं च कौपीनाच्छादनं परम् ।
गृहणाति धातु पात्रं वा भावुका रामसेवकाः ।।६९७।।
तुलसी मालिकां पुण्ड्रं धनुर्वाणाङ्कितौ भुजौ ।
राममन्त्राभिरामाढयं संस्काराः रामसेवके ।।६९८।।
रामायुधौ च तप्तौ च जानकीमुद्रिकां विना ।
परमेष्टयं न प्राप्नोति ज्ञानादि साधनैरपि ।।६९९।।
रामायुधाङ्कितश्चैव तनुं त्यजति यः पुमान् ।
याम्याश्च पार्षदास्तत्र नमन्ति शिरसा हि तम् ।।७००।।
युग्ममन्त्रत्रयं नित्यं धनुर्बाणौ विधारयेत् ।
स जानकीवल्लभस्य सामीप्यं सुखमृच्छति ।।७०१।।
युग्ममन्त्रं विना नास्ति मन्त्रः कोऽपि सुखप्रदः ।
जानकीवल्लभस्यैव विनोपासन दुर्लभाम् ।।७०२।।
हनुमत् परमाचार्यो विनाचार्योनकोऽपि च ।
इति पद्धति निर्णीतं पूर्वोक्तं च मयोदितम् ।।७०३।।
कृपा च साधनं सिद्धिर्भक्तिः श्रीजानकीपतेः ।
अन्यत्तु श्रममात्रैव साधितं मतवादिभिः ।।७०४।।
शुद्धं द्वैतमतं विद्धि सेवकः सेव्यभावदम् ।
सामीप्यैव सुमुक्तिश्च नित्यं गोलोक धामकम् ।।७०५।।
श्रृंगारः मैथिलीकृत्यः श्रियं बिन्दुं च चन्द्रिकाम् ।
करोति रसिकाः नित्यं तिलकं तं तु मन्त्रते ।।७०६।।

शीलसन्तोषसत्यादि निष्कामार्जव लक्षणम् ।
भैक्ष्यं महाप्रसादस्य पानं पादोदकस्य हि ।।७०७।।

दण्डवत् प्रोक्तमुभयौ वन्दनं स्वामि दक्षिणे ।
गुरुं रामसमं मन्येत् सव्यं चैव परिक्रमम् ।।७०८।।

अब महाशम्भु संहिता का सिद्धान्त वर्णन करते हैं । श्री शंकर जी कहते हैं कि—जो ज्ञान-वैराग्य-सन्तोष-शील-क्षमा आदि सात्विक सद्गुणों से अलंकृत हैं, श्रीराम के धनुषबाण आयुध श्री सीता जी की मुद्रिका सहित धारण करता है तथा जो तुलसी की माला धारण कर विचरता है वह निश्चय ही भुवन को पावन करता है । यज्ञोपवीत-स्वेत वस्त्र-कौपीन धारण करने वाले विरक्त श्रीराम के प्यारे सेवक धातुपात्र भी धारण करते हैं, (क्योंकि उनकी भावना में तुम्बी का जल प्रभु की सेवा के काम में नहीं आता । अपने से श्रेष्ठ गुरुजनों को भी कमण्डलु का जल नहीं दिया जाता ।) अतः श्रीरामभक्त धातुपात्र भी रखते हैं । तुलसी की माला, उर्ध्वपुण्ड्र तिलक, धनुष बाण की मुद्राओं से अङ्कित दोनों भुजाएँ तथा श्री राममन्त्र से सम्पन्न इन संस्कारों से संस्कृत भाग्यशाली श्रीराम के सेवक होते हैं । श्रीराम के आयुधों की तप्त छाप तथा श्री जानकी जी की मुद्रिका के बिना ज्ञानादि साधन सम्पन्न भी परमेश्वर के पद को प्राप्त नहीं कर सकते हैं । श्री रामायुधों से अंकित जब शरीर त्याग करता है तब यम के दूत तथा प्रभु के पार्षद उसको शिर नवा कर प्रणाम करते हैं । युगल मूल षडक्षर मन्त्र, युगल द्वय मन्त्र तथा युगल चरम मन्त्र । इन तीनों मन्त्रों का जो नित्य ही जप करता है तथा जो धनुर्बाण नित्य धारण करता है वह श्री जानकीवल्लभजू के सामीप्य का परम दिव्य सुख प्राप्त करता है । श्री सीताराम के युगल मन्त्र के बिना अन्य कोई मन्त्र परमसुख प्रदायक नहीं है तथा श्री जानकी वल्लभ जू की उपासना के बिना अन्य कोई उपासना दिव्य सुख प्रदायक नहीं है । श्री हनुमान जी ही परम आचार्य हैं, इनसे श्रेष्ठ कोई आचार्य नहीं है । यह प्रेम भक्ति की पद्धति का निर्णय हे पार्वती ! हमने प्रथम ही सुनाया है । श्री युगल प्रभु की कृपा ही उनकी प्राप्ति का परम श्रेष्ठ साधन है तथा श्री जानकी-पति की प्रेमापरा भक्ति ही परम सिद्ध है, अन्य-अन्य मतवादियों के साधन केवल परिश्रममात्र ही करना है । सेवक-सेव्य भाव ही द्वैत मत का सुदृढ

सिद्धान्त है। (अब हम दास भये हैं खासे, सियवर रूप पियासे। आई दीनता बात बनी सब सियजू की करुणा से। अहंकार का कूड़ा पटका वेदान्तिन के वासे। द्वैत सदा अद्वैत कबहु नहिं चौड़े कहों खुलासे॥ सेवक हम स्वामी सियनाहू। होहु नाथ यही ओर निवाहू) प्रभु के समीप रहकर सेवा-सुख प्राप्त करना, यह सामीप्य मुक्ति ही श्रेष्ठ मुक्ति है। नित्य गोलोक के मध्य श्री साकेत धाम ही हमारा नित्य धाम है। श्री मिथिलेश नन्दिनी जू के शृंगार का तिलक श्री सहित बिन्दु तथा चन्द्रिका मुद्रिका से सुशोभित तिलक श्रीराम के रसिक सन्त नित्य धारण करते हैं। शील-सन्तोष-सत्य आदि निष्काम भावना से अलंकृत रहना रसिकों का सहज स्वभाव होता है। श्री प्रभु का महाप्रसाद ही भोजन करते हैं। श्री युगल सरकार का चरणोदक ही सदैव पीते हैं। दो बार दण्डवत् प्रणाम करते हैं, प्रभु की दाहिनी ओर रहकर वन्दना प्रणाम करते हैं, प्रभु को दाहिनी ओर रख करके परिक्रमा करते हैं, श्री गुरुदेव को प्रभु के समान मानते हैं ॥६९५–७०८॥

अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रियत्वम् क्षमा दया सर्वजन प्रियत्वम्।
निर्लोभदाता भय शोकहर्त्ता भक्तस्य चिन्हिानिदशैवतानि ॥७०९॥

किसी पर क्रोध नहीं करना १ वैराग्य धारण करना२ इन्द्रियों को अपने वश में रखना ३ अपराधी को क्षमा प्रदान करना ४, प्राणी मात्र पर दया रखना ५ समस्त प्राणी मात्र की प्रियता प्राप्त करना ६, लोभ का परित्याग करना ७, अपने पास जो कुछ हो दान देते रहना ८, भयभीत न होकर प्रभु के भरोसे निर्भर रहना ९, शरणागत के शोक एवं भय का हरण करना ये दश लक्षण श्री हरि के प्यारे भक्तों के आन्तरिक लक्षण हैं ॥७०९॥ पुनश्च महाशंभु संहितायाम्—

श्रीमन्नारायणस्यैव शिष्या ये कथिताः शुभाः।
पूर्वोक्ताः राममन्त्रस्य येऽभुवंस्ते तथा भवन् ॥७१०॥
भविष्यति कलौ धन्ये प्राकृतमतवादिनः।
मन्त्रनामानि चिन्हानि कल्पयिष्यन्ति मानिनः ॥७११॥
यथा रात्रौ नार्कभासं दीपतेजः प्रकाशते।
आदिमूलाद् गतं भ्रष्टाः अधोमूलं समाश्रिताः ॥७१२॥

स्पर्धयिष्यन्ति चान्योन्यं यथामोहंगता बुधाः ।
यथामतिस्तथा गम्यं गमिष्यन्ति विधार्मिकाः ॥७१३॥
श्रीराममन्त्रस्यांशानि मन्त्राणि यानि विद्धित्वम् ।
हनूमताचार्य संप्रोक्त रामधाम सतां पदम् ॥७१४॥
श्रीजानक्याःपतिं सर्वे भजध्वं मङ्गलायनम् ।
राममन्त्रेणायुधाभ्यां मुक्ताः सुशुभिरे भुवि ॥७१५॥
सुरगुर्वादिगुरवो राममन्त्रस्य सेवकाः ।
श्रीगुरोर्मारुतः शिष्यो सुग्रीवः कपिनां पतिः ॥७१६॥
श्रीरामस्यायुधौ तप्तौ राममन्त्रं व्यधारयन् ।
पद्माष्टादश संख्याता स्वसेनाश्च हनूमतः ॥७१७॥
दीक्षितास्तेन मन्त्रेण धनुर्वाणेन चाङ्किता ।
श्रीहनुमच्छिस्योऽभूत् महाराजा विभीषणः ॥७१८॥
रामायुधाभ्यां तप्ताभ्यां अङ्कितश्चैव मुद्रया ।
तथातस्य प्रजाः सर्वाः चिन्हिता रामलाच्छनैः ॥७१९॥
राजमार्गमिमं विद्धि रामोक्तं जानकीकृतम् ।
यद्दते चान्यमार्गास्तु चौराणां वीथिका यथा ॥७२०॥
आद्याचार्यं हनूमन्तं त्यकत्वा ह्यन्यमुपासते ।
क्लिशयन्ति चैव ते मुग्धाः मूलहा पल्लवाश्रिताः ॥७२१॥
श्रीमैथिल्याश्च मन्त्र हि श्रीगुरुर्मारुर्ति महत् ।
सखीभावं दम्पतीष्टं भुक्ति मुक्तिप्रदं सदा ॥७२२॥
श्रीजानकी सम्प्रदायं रामरास समन्वितम् ।
ऋते केऽपि न यास्यन्ति वाञ्छितं फलमेव च ॥७२३॥

श्रीमन्नारायण के शिष्यों के शुभनाम जो श्रीराममन्त्र प्राप्त किये हैं, हमने प्रथम कहे हैं। वे उनके बिना अन्य जो हो गये हैं, तथा हैं अथवा कलिकाल में आगे होंगे वे सब प्राकृत मतवादी होंगे। वे लोग काल्पनिक मन्त्र, चिन्ह, चक्र आदि की कल्पना करने वाले बड़े घमण्डी अहंकारी होंगे।

जैसे रात्रि में सूर्य का प्रकाश न होने से दीपक अथवा जुगनू के प्रकाश की भी प्रशंसा होती है उसी प्रकार आदि मूल का परित्याग कर अधोमार्ग मूल को ही पकड़ कर चलने वाले परस्पर प्रतिस्पर्धा, ईर्षा, द्वेष रखकर, महामोहमाया में फंसे हुए अज्ञानी जीव जैसी उनकी भ्रष्ट बुद्धि है उसी प्रकार सबको बनाना चाहते हैं, ऐसे विधर्मी पुरुषों से सावधान रहना चाहिए। श्रीराम मन्त्र के अंश के भी अंशांश उन मन्त्रों को जानना चाहिए। आचार्य श्री हनुमान जी के द्वारा प्रवर्तित मूलतारक षडक्षर मन्त्र प्राप्त करने वाले सन्तों के महापुरुषों के द्वारा प्रसंशनीय श्रीराम-धाम को प्राप्त कर सकते हैं। अतएव आप सब अपना परम कल्याण करने के लिए श्री जानकी पति का मंगलमय भजन करें। जो श्रीराममन्त्र तथा श्री रामायुध से सुशोभित हैं वही धरणी की शोभा बढ़ाते हुए स्वयं सुशोभित होते हैं। देवताओं के आचार्य श्री वृहस्पति जी आदि गुरुजन सभी श्रीराम मन्त्र की सेवा करने वाले सेवक हैं। आदि गुरु श्री हनुमान जी के शिष्य सर्वप्रथम वानरराज सुग्रीब हुए हैं। उन्होंने तप्त श्री रामायुध से अङ्कित होकर श्रीराम मन्त्र को धारण किया है, (जिसके प्रताप से उनको श्रीराम कृपा प्राप्त हुई है) तत्पश्चात् श्री हनुमान जी ने अपनी कपि सेना के अठारह पद्म सेना पतियों को श्रीराम मन्त्र से दीक्षित किये हैं तथा धनुष-बाण से अङ्कित बनाये हैं। श्री हनुमान जी के दूसरे सुप्रसिद्ध शिष्य श्री विभीषण जी हैं (तुम्हरो मन्त्र विभीषण माना। लंकेश्वर भये सब जग जाना)। उनको भी श्री हनुमान जी ने धनुष-बाण की तप्त छाप लगाकर श्री जानकी जी की मुद्रिका से अंकित किया है। श्री विभीषण जी की सभी प्रजा को भी श्रीरामायुध से अंकित किया तथा श्रीराममन्त्र प्रदान किया। यह श्री जानकी जी की कृपा से निर्मित श्री रामचन्द्र जी द्वारा प्रवर्तित श्रीराममन्त्र की प्राप्ति का राजमार्ग है। दूसरे सभी मार्ग चोरों की अंधेरी गलियां हैं। श्रीराम मन्त्र राज की परम्परा के आदि आचार्य श्री हनुमान जी द्वारा उपदिष्ट मार्ग का परित्याग कर जो अन्य परम्परा में फंसते हैं, अन्य मन्त्रों की उपासना करते हैं वे मूढ़ मनुष्य वृक्ष की जड़ काट कर पत्तों को सींचकर फल चाहने वाले मनुष्य की भांति मूर्खता का प्रदर्शन करते हैं। श्रीमिथिलेश राज किशोरी जू द्वारा प्राप्त मन्त्र श्री हनुमान जी मारुति वीर ही इस सम्प्रदाय के प्रधान प्रवर्तक आचार्य हैं, जिसमें युगल प्रभु दिव्यदम्पति श्री सीताराम ही इष्टदेव हैं, तथा भुक्ति-मुक्ति प्रदायक शृंगार-रस सखी-

भावना का प्राधान्य है। यह श्री जानकी सम्प्रदाय श्रीरामरास रहस्य की अनन्यता का उपासक है। इसके बिना मनोवांछित फल देने वाला अन्य कोई मार्ग नहीं है ।।७१०-७२३।।

धनुर्बाण परम्परा:—

श्री सदाशिव संहितायाम्—

रामशिष्याऽभवत्सीता तच्छिस्यो शम्भुरेव च ।
स एव हनुमदाख्यो जानकी शिष्य विश्रुतः ।।७२४।।
सोताङ्कितो धनुर्बाणात् प्रथमं च सदाशिवः ।
सीतया ह्यङ्कितः पश्चात् हनूमान् राघवप्रियः ।।७२५।।
महाशम्भुः शिवं प्राह स शिवो नारदं तथा ।
नारदश्चाह वाल्मीकीं वाल्मीकिश्च लवं कुशम् ।।७२६।।
चन्द्रसूर्यादिवंश्याश्च नृपास्तेन सुदीक्षिताः ।
श्रीराममन्त्रायुधाभ्यां च अङ्किताश्च शुभे भवे ।।७२७।।
हनूमांस्तु अगस्त्याय अगस्त्यश्च सुतीक्षणम् ।
सुतीक्ष्णेन महाभागाँश्चांकिता बहवः मुनीन् ।।७२८।।
भविष्यति कलौ घोरे जीवाः हरि बहिर्मुखाः ।
तेषामुद्धरणार्थाय स्वरूप ज्ञान हेतवे ।।७२९।।
रामाज्ञया हनूमान् वै माध्वाचार्य प्रभाकरः ।
रामानन्दः स्वयंरामः प्रादुर्भुतो महीतल ।।७३०।।
बिना चिन्हं धनुर्बाणं विना मन्त्र षडक्षरम् ।
पूजां ये च प्रकुर्वन्ति राघवो न प्रसीदति ।।७३१।।
धर्मं दधात् धनं दद्यात् प्राणान् दधात् यशस्तथा ।
ध्यान मन्त्रं न दातव्यं ऋते रामस्य संस्कृतिम् ।।७३२।।
कल्पकोटि सहस्राणि कल्पकोटि शतानि च ।
पञ्चाङ्गोपासनेनैव रामे भक्तिः प्रजायते ।।७३३।।

इत्यादि शास्त्रप्रमाणात् श्रीरामधनुर्बाणपरम्परायाः अति प्राचीन परत्त्वम् सुविदितम् ।।

सर्वप्रथम श्रीरामजी ने श्री सीताजी को षडक्षर तारक मन्त्रराज का उपदेश दिया (परधाम्नि स्थितौ रामः पुण्डरीकायतेक्षणः। कृपया परयाविष्टो जानक्यै तारकं ददौ। यह श्री अग्रस्वामी प्रणीत मन्त्र परम्परा को सुपुष्ट करता है)। उनके शिष्य महाशंभु हुए (महाशम्भु रीति ख्यातः हनुमान् राम तत्परः) वही श्री हनुमान जी के नाम से (सीता शिष्यः गुरोर्गुरु) प्रख्यात हुए। (श्रियः श्रीरपि लोकानां दुःखोद्धरण हेतवे। हनुमते ददौ मन्त्रं सदा रामाध्रि सेविने) यही परम्परा प्राचीन तथा सुप्रसिद्ध है। श्री सीताजी ने ही महाशम्भु को श्रीराम की धनुर्बाण मुद्रा से अङ्कित किया। तत्पश्चात् श्री सीताजी ने उन्हीं महाशम्भु श्री हनुमान जी को श्री रामायुध से अंकित किया। महाशम्भु ने अपने अंश कलावतार शिवजी को, शिव जी ने नारद जी को, नारद जी ने वाल्मीकि को, वाल्मीकि ने लवकुश को, लवकुश ने सूर्य चन्द्रबंश के अनेक राजाओं को, श्रीरामायुध से अंकित करके श्रीराम मन्त्र का उपदेश दिया। श्री हनुमान जी ने अगस्त्य जी को, अगस्त्य जी ने सुतीक्ष्ण जी को तथा सुतीक्ष्ण जी ने बहुत से ऋषि मुनियों को महान् भाग्यशालियों को, श्री वैष्णव संस्कारों के सहित श्री रामायुधों से अङ्कित करके श्रीराम तारक षडक्षर मन्त्र प्रदान किया। पश्चात् कलियुग कराल काल में जब परम जीव घोर पाप पारायण हो जायेंगे, श्री हरिभक्ति से विमुख हो जायेंगे तब श्रीराम जी की आज्ञा से श्री हनुमान जी स्वयं संसार का अन्धकार नाश करने वाले दिव्य प्रभाकर रूप श्री माधवाचार्य का अवतार लेकर प्रकट होंगे। तथा स्वयं श्रीराम प्रभु ही श्रीरामानन्दाचार्य का स्वरूप धारण कर श्री राम मन्त्र का प्रचार करेंगे। बिना धनुर्बाण चिह्न के बिना तिलक मालादि संस्कारों के तथा बिना षडक्षर श्रीराम मन्त्र को प्राप्त किये जो पूजा करते हैं उस पर श्रीराम प्रसन्न नहीं होते हैं, यह सिद्धान्त स्थिर किया गया है। धर्म भले दे देवे, धन दे देवे' प्राणों को दे देवे, यश कीर्ति का नाश हो तो हो जाने दे परन्तु बिना पञ्च संस्कार से संस्कृत किये पूजा ध्यान की सिद्धि प्रदान करने वाला मन्त्रराज नहीं देना चाहिए। करोडों हजार तथा सैकड़ों करोड़ कल्प पञ्च संस्कार से संस्कृत होकर पूजन करने पर श्रीराम के चरणों में प्रीति उत्पन्न होती है ॥७२४-७३३॥

इत्यादि शास्त्रों की सैकड़ों प्रमाणों द्वारा धनुर्बाण धारण करने की दिव्य परम्परा अति प्राचीन श्रुतिसम्मत है, यह सुप्रसिद्ध होता है।

।। धनुर्बाण महात्म्य तथा धारण-विधान ।।

श्री महारामायणे सर्ग ४९ श्लोक १२-१३

ये जापका भगवतश्च तपस्विनो ये पूजारताः सुचरिताश्च विरागयुक्ताः ज्ञानार्णवास्तिलकदाश धरा यशस्विनस्तीर्शाटकाः शुभगुणास्शुभकर्मयुक्ताः ।।७३४।।

सर्वैर्गुणैर्नियम संयमधर्मयुक्तैः निष्कलमषः सकलसिद्धि-करश्च नित्यम् यो नाङ्कितो धनुशरैर्न च मन्त्रराजश्चोपासको न स जनो रघुनन्दनस्य ।।७३४।ः

अब जो षडक्षर मन्त्र तथा धनुषबाण के संस्कारों से हीन है उस पुरुष को सर्वगुण सम्पन्न होने पर भी शंकर जी निकृष्ट मानते हैं। यह पार्वती को समझाते हैं कि—जो श्रीराम मन्त्र को छोड़कर अन्य मन्त्र का जापक है, भगवान का भजन भी करता है, तपस्या भी करता है, पूजा अर्चना भी करता है, सच्चरित्रवान है, वैराग्य सम्पन्न है, ज्ञान का तो समुद्र ही है, श्री वैष्णव तिलक तथा तुलसी माला के बिना अन्य प्रकार के तिलक तथा अन्य प्रकार की मालायें भी धारण करता है, यशस्वी भी हैं, तीर्थाटन भी करता है, सभी प्रकार के शुभगुणों से सम्पन्न है, सभी सद्गुणों से युक्त, संयम, नियम, धर्म परायण भी है, पाप-रहित एवं सभी लौकिक ऋद्धि-सिद्धि से भरपूर है, परन्तु यदि वह श्रीराम के धनुषबाण की तप्त मुद्रा से अंकित नहीं है तथा श्रीराम षडक्षर तारक मन्त्र राज प्राप्त नहीं है तो श्री रघुनाथ जी का उपासक ही नहीं माना जाता है ।।७३४-७३५।।

श्रीराम संस्कार विर्वजिता ये निपुच्छश्रृंगा पशवोनरास्ते ।
शक्ता न वेदा अभिवर्णितुं यं त्वत्तो मयाख्यातमविस्तरेण ।।७३६।।

अहं विधाता गरुडध्वजश्च रामस्य बाले समुपासकानाम् ।
गुणाननन्तान् कथितं न शक्ताः सर्वेषुभूतेस्वपि पावनास्ते ।।७३७।।

भाले च रम्यं तिलकं विवरेचदीप्तं रामांघ्रि बिन्दुसहितं स च पीत मध्ये । कण्ठे तथा तुलसीदाम लसद्भुजे वै तप्तेनबाण-धनुषाङ्कित रामभक्तः ।।७३८।।

श्रीराम जी के संस्कारों से विहीन मनुष्य तो बिना पूंछ-सींग के पशु के समान है। जिसकी महिमा वेद भी वर्णन करने में असमर्थ हैं, उस महनीय महत्व सम्पन्न प्रभु के प्रञ्च संस्कारों का मैंने तो अति संक्षेप में तुमसे वर्णन किया है। हम ब्रह्माजी तथा गरुडध्वज भगवान भी श्रीराम के उपासकों के अनन्त गुणों का वर्णन नहीं कर सकते हैं। हे प्रिये ! वे श्री रामभक्त समस्त प्राणी मात्र को पावन करने वाले हैं। जिसके ललाट में सुन्दर श्रीरामचरणाकृति उर्ध्वपुण्ड्र तिलक है, बीच में हरिद्रा के चूर्ण स बनी श्री तथा बिन्दु सुशोभित है। कण्ठ में श्री तुलसी की सुहावनी माला है तथा भुजाओं पर तप्त धनुष बाण की छाप अङ्कित है। वही श्रीराम भक्त है ।।७३६-७३८।।

श्री पार्वती उवाच—

सर्व संस्कार मध्ये तु धनुर्वाणो महावरः ।

स्वामिन्नादौत्वया प्रोक्तः कथमित्यभिधीयते ।।७३९।।

हे स्वामिन् ! आपने पहले सभी संस्कारों के मध्य तप्त धनुष बाण की महिमा को सर्वश्रेष्ठ वर्णन किया है उसका क्या कारण है ? कृपा कर सुनाइये। श्री शंकर उवाच—

नित्यं प्रियः प्रियतरो रघुनन्दनस्य-

बाणो धनुर्विमलमन्त्र षडक्षरश्च ।

बाले तदेव सकलेषु च चिन्हमध्ये-

श्रेष्ठं महद् धनुश्शरं समुपासकेषु ।।७४०।।

ध्याने जपे विविध पाठरताश्च नित्यं-

पूजारताः षड्धिकैर्दशभिः प्रकारैः ।

एतद् धनुश्शर विवर्जिताश्चकुर्य्युः रामः

प्रसीदति कदापि न चैव तेषाम् ।।७४१।।

यज्ञं च तीर्थगमनं पितृदेवपूजां-
कुर्वन्ति कर्मशुभकं श्रुतयो वदन्ति ।
ये नाङ्किता धनुश्शरैर्विफलं च सर्वं-
ये चङ्किताधनुश्शरैश्च फलं सहस्रम् ॥७४२॥

चक्रात्फलं शतगुणं धनुषःशरस्य-
यश्चाङ्कितोऽपि स च रामजनाग्रगण्यः ।
सारुप्यमेव लभते खलु तत्क्षणं वै-
रामप्रियः प्रियतरोऽनुदिनं च मह्यम् ॥७४३॥

हे बाले ! धनुष बाण तथा निर्मल षडक्षर मन्त्रराज श्री रघुनन्दन जू को अत्यन्त प्रिय है । इसीलिये सभी संस्कारों में धनुष बाण की छाप सर्वश्रेष्ठ है । श्रीराम के उपासक इसको सबसे अधिक चाहते हैं । भले कोई ध्यान परायण हो, जप-तप-विविध प्रकार की पाठ पूजा एवं षोडषोपचार विधि पूजन करता हो, परन्तु यदि धनुष बाण की छाप नहीं लिया है तो उन पर श्रीराम कभी प्रसन्न नहीं होते हैं । यज्ञ करे, तीर्थाटन करे, देवता-पितरों का पूजन करे, वेद-शास्त्रोक्त सभी प्रकार के शुभ कर्म करे, परन्तु यदि धनुष बाण से अङ्कित न हुआ है तो उसके किये हुए सभी सत्कर्म निश्फल हो जाते हैं और धनुर्बाण धारण करके जो-जो शुभ कर्म करता है तो वह सहस्रों गुना फल प्रदान करने वाले हो जाते हैं । चक्र की छाप लगाने की अपेक्षा धनुष बाण की छाप मुद्रा सैकड़ों गुना अधिक फल प्रदान करती है । जो इसको धारण करता है वह श्रीराम भक्तों में अग्रगण्य होकर तत्काल प्रभु की सारूप्य मुक्ति प्राप्त करके धन्य हो जाता है । वह दिनानुदिन श्रीराम का अत्यन्त प्यारा बनता जाता है ॥७३९–७४३॥

श्री पार्वती उवाच–महारामायणे श्लोक १९ सर्ग ४९ ।

श्रुत्वा महाद्‌भुतमिदं धनुषः शरस्य-
माहात्म्यमेव विमलं सुजन प्रियञ्च ।
धन्या वयं धन्यतरस्श्च नित्यं-
कस्मात् करोति ग्रहणं विधिना च केन ॥७४४॥

श्री पार्वती जी ने पुनः प्रार्थना करते हुए कहा कि हे प्रभो ! आपके मुखारविन्द से धनुष बाण धारण करने की महिमा सुन कर मैं तो धन्य-धन्य हो गई तथा हमारे साथ सभी सम्बन्धी, जिन्होंने यह महिमा सुनी वे भी धन्य-धन्य हो गये। हे नाथ ! अब आप कृपा कर यह भी समझाइये कि ये संस्कार किससे ग्रहण करना चाहिए ? तथा कैसे किस विधि से ग्रहण करना चाहिए ।।७४४।।

श्री शिव उवाच–महारामायण सर्ग ४६ श्लोक २०–२२ ।

यः सद्गुरुर्यस्य गुरु प्रभावो रामस्य चैव सततं समुपासको यः सुविधिना रघुनाथवत् सः वध्वाकराञ्जलिमथा प्रणतिं प्रवुर्याति ।।७४५।।

तेन प्रसन्न मनसा समुदारबुद्ध्या तप्तं
धनुः शरमिदं भुजयोः प्रकुर्यात् ।
पूजां पुनः प्रकुरुते विविधैश्चरत्नैस्तस्मिन्
क्षणेभवति जीवन एवमुक्तः ।।७४६।।

वामे करे च धनुषा च शरेण सव्ये
यश्चाङ्कितो हि मनुजा नरलोकधन्यः ।
तस्मै नमन्ति शिरसा द्रुहिणादि
देवास्तद्दर्शनेन मनुजा कलिकल्मषघ्नाः ।।७४६।।

श्री शंकर जी कहते हैं कि हे पार्वती ! जगत में जिनका सम्मानीय सुन्दर प्रभाव हो, ऐसे सद्गुरु जो स्वयं श्रीरामजी की निरन्तर उपासना में परायण हों, जिनके प्रति अपनी श्रद्धा भक्ति सदैव बनी रहे ऐसे आचार्य चरणों का विधिपूर्वक पूजन करके उनको श्री रघुनाथ जी समान मानकर हाथ जोड़ कर साष्टांङ्ग प्रणाम करके पंच संस्कार ग्रहण करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। तब वे उदार बुद्धि वाले सदगुरु विधि-विधान पूर्वक तप्त धनुष बाण की छाप लगावेंगे। तत्पश्चात् भेंट-पूजा-रत्न-द्रव्य वस्त्र-पुष्पादि समर्पण करके पुनः उनका पूजन कर प्रणाम कर आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार संस्कार प्राप्त करते ही उसी क्षण में मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है। बांयी भुजा में धनुष तथा दाहिनी भुजा में बाण की मुद्रा से जो अङ्कित हो जाता है वह मनुष्य इस लोक में धन्य

हो जाता है। उसकी ब्रह्मादिक देवता भी नमस्कार करते हैं, उसके दर्शन मात्र से ही मनुष्य कलिकाल के पापों का विनाश करने वाले हो जाते हैं ।।७४५-७४७।। अब शंकर जी पुनः धनुष बाण धारण करने की विधि बताते हैं -

महारामायण सर्ग ४६ श्लोक २३-२५

त्वत्तो विधिं शृणु शिवे कथयामि सर्वं
बाणंधनुश्च वसुधातुमयं प्रकुर्यात् ।
कृत्वा यथोक्त विधिनासकलां प्रतिष्ठां
संस्थापयेत् हनुमतञ्च गणेश गोर्यौ ।।७४८।।
अग्नौ विशुद्धहविषा विवधैस्सुगन्धै र्होमं
सुवेद विधिनाशरशार्ङ्ग मन्त्रैः ।
अष्टोत्तरं शतमधो जुहुयात् सुभक्त्यारामं
स्मरेद् हृदि तदा जनकात्मादयम् ।।७४९।।
तप्तंधनुः शरमथो खलु तत्र होमे
प्रेम्णाङ्कितं सुमनसा च गुरुः प्रकुर्यात् ।
देशेषु चैव सकलोस्वपि सर्वकाले
वर्णाश्रमाश्च सकलाङ्कित पुण्यपुञ्जाः ।।७५०।।

श्री शंकर जी कहते हैं हे पार्वती ! अब मैं तुमसे धनुषबाण धारण करने की विधि समझाता हूँ। पहले तो अष्ट धातु से पवित्रता पूर्वक सुन्दर श्रीराम नामाङ्कित धनुषबाण की मुद्रायें निर्माण करावे। तब वेदोक्त विधान से उसकी प्राण प्रतिष्ठा करावे। फिर श्री हनुमान जी का तथा गणेश-गौरी का आह्वान कर पूजन करे। तब विशुद्ध अग्नि में सुगन्धित धूप आदि मिलाई हुई हवन सामग्री से धनुषबाण के मन्त्रों से १०८ बार आहुति दे। (ॐ शार्ङ्गाय नमः ॐ बाणाय नमः) इन मन्त्रों से श्री जानकी जी के सहित श्रीराम जी का स्मरण करते हुए हवन करे। तब उस होमाग्नि में तपे हुए धनुष बाण से श्री गुरुदेव प्रेमपूर्वक प्रसन्न मन से छाप लगाये। इस प्रकार धनुषबाण की छाप से जो अङ्कित हैं वे पुण्य के भण्डार सन्तजन सभी देश, सभी काल तथा सभी वर्ण आश्रम में सदैव पावन रहते हैं ।।७४८-७५०।।

श्री धनुर्बाण प्रताप महिमा

वृहद् हनुमन्नाटके—

बहुचक्र समं विष्णोः बहुशूल समं हरः ।

बहु वज्र समश्वासोः रामबाण प्रतापवान् ।।७५१।।

तूणेतैकशरं करेण दशधा सन्धानकालेशतं-

चापेऽभूत् सहस्त्र लक्षगमने कोटिश्च कोटिर्वधे ।

अन्तेखर्वनिखर्व बाण विवधैः सीतापतेः शोभितः-

एतद्बाण पराक्रमस्य महिमा सत्पात्रदानं यथा ।।७५२।।

श्री विष्णु भगवान के चक्र से अनन्त शक्तिमान, भगवान् शंकर के त्रिशूल से अनेक पराक्रमी, देवेन्द्र पुरन्दर के वज्र से अनन्त कठोर श्रीराम का प्रतापी बाण है । वह प्रभु श्रीराम का बाण तूणीर में (भाथा में) एक रहता है परन्तु हाथ में लेते लेते दश प्रकार का हो जाता है । उसीको जब प्रत्यञ्चा पर चढ़ाते हैं तब सौ रूप धारण कर लेता है तथा धनुष पर चढते-चढते तो हजारों हो जाता है । धनुष से छूटकर शत्रु के संहार करने जाते समय लाखों लाख हो जाता है । तथा शत्रु का वध करते समय करोड़ों करोड़ बन जाता है । अन्त में यदि आवश्यकता पड़े तो अरब-खरब निखर्व बाणों की महान शक्ति से वह भरपूर हो जाता है । यह श्रीराम के बाण के पराक्रम की महिमा है । जैसे सत्पात्र में दिया गया दान बढता ही रहता है वैसे ही इसकी भी विचित्र पराक्रमी लीला है ।।७५१–७५२।।

नागानामयुतं तुरङ्गनियुतं सार्धरथीनां शतम्-

पत्तीनां दशकोटि सन्निपतने नृत्यत् कबन्धोरणे ।

एवं कोटि कबंध नर्त्तनविधौ नृत्येत्तथा खेचरः-

तेषां कोटिक नर्त्तने रघुपतेः कोदण्डघण्टारवः ।।७५३।।

दश हजार हाथी, दश लाख घोड़े, पचास लाख रथ, तथा दश करोड़ सेनापतियों के मरने पर कबन्ध नृत्य करता है, ऐसे करोड़ों कबन्धों के नाचने पर खेचर नृत्य करते हैं । ऐसे करोड़ों खेचरों को नचाने में श्री रघुनाथ जी के केवल धनुष की टंकार ही समर्थ है ।।७५३।।

एकेनैवशरेण चापकदलीकाण्डप्रभंगः क्रमात्-
कृत्तेषु प्रथमेषु दाशरथिना तालेषु सप्तस्वयम् ।
अश्वाः सप्त जिघन्ति सप्तमुनयः सप्ताह्वयः सागराः
सोऽयं सप्त च मातरोत्रयभृतः संख्यान साम्यादिह ।।७५४।।

श्रीदशरथराजनन्दन राम ने एक ही बाण से सातों तालों को गिरा दिया इसमें क्या आश्चर्य है ? इसका तो अनन्त प्रताप वर्णन ही कौन कर सकता है ? ये तो केवल सात ऋषि, सूर्य के रथ के सात घोड़े, सात द्वीप, सात समुद्र, सात मातृका इत्यादि त्रिभुवन में सात की संख्या प्रसिद्ध है, अतः इन नामों की मान्यता से ही सात तार गिराने की भी बात कही गयी है ।।७५४।।

बाण प्रमाणमधिगम्य वसुन्धरायाः
सम्बोधयन्निव भुजंगमभंग भीत्या ।
ब्रह्माण्डसचराचर विधुनातिपक्षान्
पुंखावशेष इति रामकराद्वियुक्तः ।।७५५।।

श्रीराम के बाण के पराक्रम की अप्रतिम महिमा का ज्ञान प्राप्त करके वसुन्धरा कहीं उसके प्रहार से टूक-टूक न हो जाय इसलिये शेष-नारायण निरन्तर प्रभु का स्मरण करते रहते हैं । मानों पृथ्वी को संबोधन करते हैं कि सावधान रहो, कहीं प्रभु के बाण का लक्ष्य न होना पड़े (पृथु अवतार में इसीलिये पृथ्वी सावधान होकर शरणागत हो गई है) । क्योंकि श्रीराम के हाथ से छूटा हुआ बाण के पुंख का एक छोटा-सा टुकड़ा भी सचराचर अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड को भी नष्ट करने में समर्थ है ।।७५५।।

संग्रामाङ्गणमागतेन भवता चापे समारोपिते-
रामाकर्णपथेन येन सहिता यदि सा समासादिता ।
कोदण्डेन शराशरैररि शिरस्त्तेनापि भूमण्डला-
तेनात्तं भवता च कीर्तिरमला कीर्त्या च लोकत्रयम् ।।७५६।।

संग्रामे रिपु भूभुजां मुखरूचिर्जीवा च देवाङ्गना-
चक्षुः प्रोल्लसदस्रमांस निवहैस्तन् मेदिनी मण्डलम् ।
तच्चायोद्भूत बाणसंहतिरभूत् श्रीरामभूमिपते-
जम्बुवज्जलबिन्दुवज्जलजवं जम्बालवत् जालवत् ।।७५७।।

हे राम ! आप जब समराङ्गण युद्ध भूमि में आये तथा धनुष चढ़ाया, कान तक उसकी प्रत्यञ्चा खींची, तब उस बाण के सहित आपके कोदण्ड ने उन बाणों के द्वारा शत्रुओं के शिरों से भूमण्डल को आच्छादित कर दिया, उससे आपकी निर्मल कीर्ति उत्पन्न हुई जिससे तीनों लोक भर गये ।

हे भूपाल चूड़ामणे ! हे श्रीराम ! संग्रामभूमि में शत्रु–पक्ष के भूपालों के निधन से उन मरने वाले राजाओं की मुख-कान्ति को देखकर (प्रभु के कर कमल के स्पर्श द्वारा परम पावन बाणों के लगने से सद्यः मोक्ष प्राप्त करने के आनन्द से जिनके मुख की शोभा चमक रही है) देवाङ्गनाओं के भी नेत्र कमल खिल उठे हैं (शत्रु पक्ष का विनाश होने से उनको भी आनन्द हुआ है, इसलिए उनके भी नेत्र कमल खिल गये हैं) । उनके शिरों से मेदिनी मण्डल आच्छादित हो गया है । आपके बाण तथा धनुष के संयोग ने एक ही समय में जामुन के समान, जल बिन्दु के समान, कमल के समान, तथा जम्बाल जाल के समान अद्भुत चमत्कार उत्पन्न कर दिया है । अर्थात् मरण के समय मुखवर्ण जामुन के समान काला हो जाने का दृश्य, जल बिन्दु के समान जीवन की क्षणभंगुरता का दृश्य, शत्रुओं के मरण से देवाङ्गनाओं के नेत्र कमल प्रफुल्लित हो जाने का दृश्य, तथा सम्पूर्ण पृथ्वी शत्रुओं के शिरों से मकड़े के जाल के समान आच्छादित हो जाने का दृश्य उपस्थित कर देने वाला आपके धनुष बाण का संयोग अनोखा आश्चर्यजनक चमत्कार दिखाने वाला हो गया है ।।७५६–७५७।।

।। इति श्रीरामपरत्वग्रन्थस्य तृतीयो भाग ।।

।। अथ श्रीराम मन्त्र जप प्रभावः पुरश्चरणविधिश्च ।।

अगस्त्य संहितायाम् अध्याय १६ श्लोक १ से

अथास्य मन्त्रराजस्य पुरश्चरणमुच्यते ।
विना येन न सिद्धिः स्यात् मन्त्रवर्षशतैरपि ।।७५८।।
भक्तिश्रद्धेष्टदानादि चिरोपास्ति प्रसादितात् ।
गुरोर्मन्त्रवरं लब्ध्वा सर्वाभीष्ट प्रदं बुधः ७५६।।
पूर्ववत् पूजयेन्नित्यं जपेत नित्यत व्रतः ।
षट् सहस्रं सहस्रं त्रिशतं वाष्टोत्तरं शुचिः ।।७६०।।
एवमाराधितो रामो यदाभक्तिं प्रबोधयेत् ।
पुरश्चरणकृत्याय पूर्वसेवा विधीयते ।।७६१।।
यथाशक्ति नियम्यान्ते बहिरात्मानमात्मवित् ।
पुरश्चरणवत्सर्वं कुर्याद्धोमं विधानतः ।।७६२।।
ततः सकल्पं कुर्वीत पुरश्चरणमादरात् ।
चिरं निरन्तरणैव नियतात्मा दृढव्रतः ।।७६३।।

अब इस श्री राममन्त्र के पुरश्चरण का विधान वर्णन करता हूँ, जिसके बिना सैकड़ों वर्ष मन्त्र जप करने पर भी अभीष्ट सिद्धि प्राप्त नहीं होती है । भक्ति-श्रद्धा-इष्ट पूजन दान दक्षिणादि द्वारा दीर्घकाल पर्यन्त श्री सद्गुरु को उपासना द्वारा प्रसन्न करके, उनकी कृपा से सभी प्रकार के मङ्गल मनोरथों को पूर्ण करने वाला श्रीराम षढक्षर मन्त्र प्राप्त करे । तत्पश्चात् पूर्वोक्त विधान से पूजा करके श्री मन्त्रराज का प्रतिदिन छः हजार-एक हजार तीन सौ अथवा अष्टोत्तर शत मन्त्र जप प्रतिदिन अवश्य करे । इस प्रकार आराधना करने पर श्रीराम प्रसन्न होकर कृपापूर्वक जब भक्त के अन्तःकरण में प्रेम भक्ति को जगावे तब पुरश्चरण करने के लिए प्रथम भगवान् की पूजा करे । तब प्रतिदिन यथा शक्ति मन्त्र जप का नियम ले । भीतर-बाहर से शुद्ध होकर पवित्र भावना से पुरश्चरण जैसे सब मन्त्रों के होते हैं वैसे सभी नियम पालन करे तथा विधान पूर्वक हवन करे । तब पुरश्चरण का आदर पूर्वक

संकल्प करे और चिरकाल तक दृढव्रत धारण कर आत्मा को संयम में रखे ।।७५८–७६३।। इति पूर्वोक्तम्–ततः—

सुतीक्ष्णं प्राह चागस्त्य प्रकारः सोऽभिधीयते ।
क्रमेण योजयेत् सम्यक् नियमो यो व्रतार्थिनाम् ।।७६४।।
षडक्षरादिकैः राम मन्त्रैः स्यात् पूजनं यथा ।
सर्वेषां राममन्त्राणांः मन्त्रराज षडक्षरः ।।
तारकं ब्रह्मचेत्युक्तं तेन पूजा प्रसाध्यते ।।७६५।।

श्री सुतीक्षण जी से श्री अगस्त्य मुनि ने कहा है–जिस प्रकार ऊपर वर्णन किया गया है, जो संयम-नियम धार्मिक व्रतानुष्ठान करने के लिए शास्त्रों में वर्णन किये गये हैं वही नियम संयम श्रीराम मन्त्रराज के पुरश्चरण में भी अगस्त्य संहिता में बताये हैं । इसलिये ग्रन्थविस्तार के भय से यहां नहीं लिखे गये हैं । पूजन के लिए भी षडक्षर श्रीराम मन्त्र द्वारा ही पूजन करने की महिमा विशेष मानी गयी है । क्योंकि सभी मन्त्रों का राजा श्रीराम षडक्षर मन्त्रराज है इसीलिये इसका तारकब्रह्म नाम है, उसी से पूजन करना सर्वोत्तम है ।।७६४–७६५।।

।। मंत्राधिकार निर्णय ।।

अगस्त्य संहितायाम् अ० ८ श्लोक १४–१५ ।

स्व वर्णाश्रम धर्मोक्त कर्मनिष्ठः सदाशुचिः ।
शुचि व्रततमाशूद्राः धार्मिका द्विज सेवकाः ।।७६६।।
स्त्रियः पतिव्रताश्चान्ये प्रतिलोमानुलोमजाः ।
लोकाश्चाण्डल पर्यन्ताः सर्वेंप्यत्राधिकारिणः ।।७६७।।

अपने वर्णाश्रम के धर्म को पालन करने वाले पवित्र सत्कर्म परायण सदैव पवित्र अन्तःकरण वाले ऐसे सभी वर्ण के मनुष्य तथा ब्राह्मणों की सेवा में श्रद्धा भावना निष्ठा रखने वाले, पवित्र आचार व्यवहार रखने वाले, अत्यन्त शुद्ध शूद्र तथा पतिव्रता स्त्रियां तथा अन्य भी प्रतिलोम अनुलोम श्रीराम भक्त सभी । यहां तक कि चाण्डाल भी भक्ति प्रेम सम्पन्न पवित्र जीवन बिताने वाले हैं तो वे भी इस मन्त्रराज को प्राप्त करने के अधिकारी हैं ।।७६६–७६७।।

श्रुति ब्रह्माण्ड षड्वर्ण स्मृतिवर्णद्वयात्मकम् ।
द्वयोर्विवादे सम्प्राप्ते नश्यते तद्व्यवस्थया ।।७६८।।
श्रुति स्मृति विरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी ।
व्यवस्था भावमाश्रित्य वाक्यमेतद् द्वयात्मकम् ।।७६९।।
षड्वर्ण ब्राह्मणादीनां त्रयाणां बुद्धि वर्धकम् ।
अन्येषां देशिकेन्द्रेण देयं मन्त्रं श्रुति विना ।।७७०।।
विना प्रणव मन्त्रांश्च गायत्री श्रुति वारणात् ।
सावित्री लक्ष्मी यज्ञं च प्रणवं नानीयाद्यपि ।।७७१।।
इति तन्न्यूनं द्वयक्षरं न च पूर्वं षडक्षरम् ।
ॐ तत् दधात् हानिस्यात् श्रुतिरित्याह निर्भ्रमः ।।७७२।।
रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनात्रौ परं ब्रह्माभिधीयते ।।७७३।।

।। इत्यधिकार निर्णयः ।।

समस्त ब्रह्माण्ड की श्रुतियां षडक्षर मन्त्रराज में हैं तथा सभी स्मृतियां द्वयाक्षर राम-नाम में हैं। दोनों में विवाद होने से धर्म की व्यवस्था का विनाश हो जायगा। श्रुति स्मृति का विरोध होने पर श्रुति बलवान होती है। व्यवस्था का भाव सम्पन्न करने के लिए ये दो प्रकार के वाक्य हैं, इसमें कोई शंका नहीं करनी चाहिए। षडक्षर तारक मन्त्र द्विजाती—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनों के लिये हैं, अन्य वर्णों के लिए श्रेष्ठ बुद्धि वाले आचार्य विचार कर श्रुति के बिना राममन्त्र देवे। बिना ॐकार के बिना गायत्री के जो हैं उनके लिये ऐसे ही नियम शास्त्र-कारों ने बनाये हैं। गायत्री-सावित्री-लक्ष्मी आदि यज्ञ प्रणव ॐकार के अधिकारी के लिये हैं सबके लिये नहीं हैं। इसीलिए अन्यों को द्वयाक्षर मन्त्र देवे षडक्षर न देवे। ॐ आदि मन्त्र देने से उसकी हानि ही होती है इसलिये यह छोटा मन्त्र है ऐसा भ्रम कदापि न करे। जो योगियों के हृदय में रमण करता है, जो सच्चिद् आनन्द स्वरूप आत्मा में रमण करता है वही 'राम' इस दो अक्षर से परब्रह्म श्रीराम का वाचक है। इसका भी प्रभाव षडक्षर जैसा ही है। बल्कि यह षडक्षर का भी बीजमन्त्र है।।७६८—७७३।।

(ऊपर वर्णन आ चुका है कि चाण्डाल पर्यन्त भी यदि सदाचारी भक्तिनिष्ठ हैं तो उनको भी षडक्षर तारक मन्त्र का अधिकार है। यह वर्णन उनके लिये है जो सर्वसाधारण श्रेणी के हैं। विशेष उत्कृष्ट भक्ति वालों के लिये नहीं है)

अगस्त्य वचनम्—

रामं नित्यं परं ज्योतिः रामं नित्यं परात्परम्।
रामं नित्यं परं ज्ञानं रामं नित्यं परंतपः ।।७७४।।
एतदेव परं ध्यानं एतदेव परंतपः।
एतदेव परं रामपूजनं भवकृन्तनम् ।।७७५।।
अश्वमेघ सहस्राणि वाजपेय शतानि च।
एकस्य ध्यान योगस्य कलां नर्हन्ति षोडशीम् ।।७७६।।
सरयूतीर मन्दार वेदिका पङ्कजासने।
श्यामं वीरासनासीनं ज्ञानमुद्रोपशोभितम् ।।७७७।।
वामोरु न्यस्त तद् हस्तं सीतालक्ष्मण सेवितम्।
अवेक्षमाणमात्मानं आत्मन्यमित तेजसम् ।।७७८।।
शुद्ध स्फटिक संकाश केवलं मोक्षकांक्षया।
चिन्तयेत् परमात्मानं भानुलक्षं जपेत् मनुम् ।।७७९।।
तत्र श्रीरामचन्द्राख्यः ध्यायेत् तेजः परात्परम्।
प्रकृत्या सीतयाश्यामं स्थित्युत्पत्तिलयात्मकम् ।।७८०।।
पुरश्चरण कल्पेन परतत्त्वमथात्मवित्।
शाश्वतं श्रीराममन्त्रं तारकं ब्रह्म उच्यते ।।७८१।।

श्री अगस्त्य मुनेः मतानुसारेण तु-अ० २५ श्लोक ९-१०।

राममन्त्रास्तु विप्रेन्द्र शीघ्रं मुक्तिप्रदा शृणु।
विनैव दीक्षां विप्रेन्द्र पुरश्चर्यां विनैव हि ।।७८२।।
विनैव न्यास विधिना जपमात्रेण सिद्धयाः।
सामान्ये तु सर्वेषां मनूनां राघवस्य तु ।।७८३।।

श्रीराम ही शाश्वत परम ज्योति है, श्रीराम ही नित्य परात्पर तत्व है, श्रीराम ही परम ज्ञान है। राम ही नित्य परम तप है। यही परम ध्यान हैं। यही परम जप हैं, ऐसा दृढ़ भाव रखना ही संसार बन्धन को काटने वाली श्रेष्ठ पूजना है। हजारों अश्वमेध यज्ञ करे, सैकड़ों वाजपेय यज्ञ करे परन्तु वह सब मिलकर भी इस परम श्रेष्ठ श्रीराम स्वरूप के ध्यान की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं हो सकते हैं। श्री सरयू के तट पर, मन्दार वन में वेदिका पर, कमल के आसन पर विराजमान, सुन्दर श्याम वीरासन से ज्ञान मुद्रा धारण कर विराजे हुए हैं। बांई जंघा पर बांये हाथ को ज्ञानमुद्रा रूप में रखे हुए हैं। श्री सीताजी तथा लक्ष्मण जी सेवा कर रहे हैं। प्रभु अपने आत्मा के स्वरूप का अपने ही आत्मा में दर्शन कर रहे हैं। शुद्ध स्फटिक मणि के समान स्वच्छ निर्मल स्वरूप हैं। इस प्रकार केवल मोक्ष को चाहने वाले अपने अन्तःकरण में केवल परमात्मा श्रीराम का ही चिन्तन करते हुए बारह लाख मन्त्र का जप करे तथा वहां (अपने हृदय में) श्रीरामचन्द्र जी के परात्पर तेज का ध्यान करे। अपनी मूल प्रकृति श्री सीताजी सहित संसार की उत्पत्ति-पालन-प्रलय करने वाले, परात्परतम तत्व प्रभु श्रीराम को ध्यान करते हुए मन्त्रराज का पुरश्चरण विधि से अनुष्ठान करे। क्योंकि यह मन्त्र-राज शाश्वत परब्रह्म श्रीराम तारक ब्रह्म कहा जाता है। श्री अगस्त्य मुनि के मतानुसार तो—यह मन्त्र हे विप्रेन्द्र ! शीघ्र ही परम मोक्ष प्रदायक है। बिना दीक्षा के, बिना पुरश्चरण के, बिना अङ्गन्यास करन्यासादिक के भी केवल जप करने मात्र से ही सभी को परम सिद्धि प्रदान करने वाला है। सामान्यतः सभी राममन्त्रों का ऐसा ही महत्व है।" ऐसा समझ कर फिर अनुष्ठान प्रेमियों के लिये पुरश्चरण का पूरा विधान आपने समझाया है ।।७७४-७८३।।

वक्ष्यमाणे महाचक्रे कर्णिकायां निरञ्जनम् ।
सर्वं संव्याप्य सकलं सच्चिदानन्द विग्रहम् ।।७८४।।
चतुस्पाद ब्रह्मरूपं रामस्याद्भुतकर्मणः ।
सेवन्ते योगिनो नित्यं परमं भावसंयुतम् ।।७८५।।

अष्टदल की मध्य कर्णिका में उस महाचक्र में वर्णित निरञ्जन परब्रह्म परमात्मा जिनके द्वारा सम्पूर्ण विश्व व्याप्त है, उस सच्चिदानन्द विग्रह, त्रिपाद विभूति परमधाम तथा एक पाद विभूति यह लीलामय

संसार दोनों विभूति चतुष्पाद विभूति नायक परम ब्रह्म श्रीराम के अद्भुत कर्मों का, गुणों का योगीजन परम भावपूर्वक परात्पर स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर नित्य निरन्तर सेवन करते हैं ।।७८४–७८५।।

अथोच्यते पुरश्चरण विधि

विधि सनत्कुमार संहितायाम्—

अब श्री सनत्कुमार संहिता में वर्णित श्रीराम मन्त्र के पुरश्चरण की विधि का वर्णन करते हैं ।

अथ रामस्य मनवो वक्ष्यन्ते सिद्धिदायकाः ।
येषामाराधनान्मर्त्याः तरन्ति भवसागरम् ।।७८६।।
सर्वेषु राममन्त्रेषु ह्यतिश्रेष्ठः षडक्षरः ।
ब्रह्महत्या सहस्राणि ज्ञानाज्ञान कृतानि च ।।७८७।।
स्वर्णस्तेय सुरापानं गुरुतल्पायुतानि च ।
कोटि कोटि सहस्राणि ह्युपपायानि यानि वै ।।७८८।।
मन्त्रस्योच्चारणात् सद्यः विलयं यान्ति न संशयः ।

अब श्रीराम जी के तुरन्त सिद्धि प्रदान करने वाले मन्त्रों का वर्णन किया जाता है । जिनके आराधन करने मात्र से ही मनुष्य भवसागर तर जाते हैं । सभी श्रीराम मन्त्रों में षडक्षर मन्त्रराज अत्यन्त श्रेष्ठ है । हजारों ब्रह्म-हत्या तथा जानबूझ कर अथवा अनजाने में किये गये सभी पाप, सोना की चोरी, मदिरा-पान, गुरुपत्नी-गमन आदि करोडों-करोड़ों छोटे-बडे पातक केवल मन्त्र के उच्चारण मात्र से ही तुरन्त नष्ट हो जाते हैं, इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।७८६–७८९।।

ब्रह्मा ऋषिः स्यात् गायत्री छन्दो श्रीरामदेवता ।।७८९।।
आद्यं बीजं नमः शक्तिः विनियोगो किलाप्तये ।
षड्दीर्घ भाजा बीजेन न्यासादींश्च समाचरेत् ।।७९०।।

श्रीराम मन्त्र के ऋषि ब्रह्माजी हैं, गायत्री छंद है, श्रीराम देवता हैं ।रां बीज है, नमः शक्ति है, रामाय कीलक है तथा श्री सीताराम जी के

श्री चरणों की भक्ति प्राप्ति का विनियोग है। बीज को दीर्घ स्वर लगाकर अर्थात् रां-रीं-रूं-रैं-रौ-रः इस प्रकार बनाकर अङ्गन्यास, करन्यास आदि किये जाते हैं ।।७८६-७६०।।

अथ ध्यानम्—

कालाम्भोधर कान्तं च वीरासन समन्वितम् ।
ज्ञानमुद्रां दक्षहस्ते दधतं जानुनीतरम् ।।७६१।।
सरोरुहकरां सीतां विद्युद्वर्णाभ पार्श्वगाम् ।
पश्यन्तीं राम वक्त्राब्जं विवधा कल्पभूषिताम् ।।७६२।।
ध्यात्वेवं प्रजपेत् वर्ण लक्षं मन्त्रं दशांशतः ।
कमलैर्जुहुयात् वहनौ ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः ।।७६३।।

नील मेघ के समान जो परम सुन्दर स्वरूप है, वीरासन से विराजमान है, दाहिना हाथ ज्ञानमुद्रा से सुशोभित है, दूसरा बांया हाथ घुटने पर रचे हुए हैं, कमल पुष्प लिये हुए बिजली के समान गौर वर्ण वाली श्री सीताजी पास में विराजी हुई हैं, अनेकों प्रकार के विभूषण धारण किये हुए श्री जानकी जी श्रीराम के मुखारविन्द का प्रेम से अवलोकन कर रही हैं। इस प्रकार ध्यान करते हुए छः लाख मन्त्र का जप करें। पश्चात् कमल के पुष्पों को गोघृत में भिगो कर दशांश हवन करे। पुनः उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन तथा उसका दशांश ब्राह्मण भोजन करावे ।।७६१-७६३।।

अथ पूजन प्रकारः

मूर्तिं मूलेन संकल्प्य तस्यामावाह्य साधकः ।
सीतां वामे समासीनां तन्मन्त्रेण प्रपूजयेत् ॥७६४॥
अग्रे शाङ्गं सम्पूज्य शरान् पार्श्वद्वयेऽर्चयेत् ।
केशरेषु षडङ्गानि यत्र ह्येतान् समर्चयेत् ॥७६५॥
हनुमन्तं च सुग्रीवं भरतं सविभीषणम् ।
लक्ष्मणाङ्गदशत्रुघ्नान् जाम्बवन्तं क्रमात्पुनः ॥७६६॥
वाचयन्तं हनूमन्तं अग्रतोधृत पुस्तकम् ।
यजेत् भरत शत्रुघ्नौ पार्श्वयोर्धृत चामरौ ॥७६७॥
धृतछत्रञ्च हस्ताभ्यां लक्ष्मणं पृष्ठतोऽर्चयेत् ।
ततोऽष्ट पत्रे धृष्टिं च जयन्तं विजयं तथा ॥७६८॥
सुराष्ट्रं राष्ट्रपालं च अक्रोधं धर्मपालकम् ।
सुमन्त्रं चेति सम्पूज्य लोकेशानायुधैर्युतान् ॥७६९॥
एवं रामं समाराध्यः जीवन्मुक्तो प्रजायते ।

प्रभु की मूर्ति की मूल मन्त्र से प्रतिष्ठा करके, संकल्प के द्वारा श्रीराम का उसमें आवाहन करे। वाम भाग में श्री सीताजी का श्री जानकी जी के मन्त्र द्वारा पूजन करे। आगे में शाङ्ग धनुष का पूजन करे। बाणों की पूजा दोनों ओर उनके मन्त्रों द्वारा करे। केशर के चारों तरफ हनुमानजी-सुग्रीवजी-भरतजी-विभीक्षणजी–लक्ष्मणजी अंगदजी-षत्रुघ्नजी तथा जाम्बवन्त जी का क्रमशः पूजन करे। आगे श्री हनुमानजी रामायण का पाठ करते हैं तथा उनके हाथ में पुस्तक है, ऐसा ध्यान धरें। श्री भरतजी तथा शत्रुघ्नजी दोनों ओर चँवर कर रहे हैं, ऐसा ध्यान करें। पीछे में लक्ष्मण जी दोनों हाथों से विशाल रत्नदण्ड से सुशोभित श्वेत छत्र लिये हुए हैं, ऐसा ध्यान करे। कमल के आठ पत्रों पर धृष्टी, जयन्त, विजय-सुराष्ट्र-राष्ट्रपाल-अक्रोध-धर्मपाल तथा सुमन्त्र इन अष्ट मुनियों का पूजन करे। जो अपने-अपने नाना प्रकार के आयुधों से विभूषित हैं ऐसे लोकपालों–इन्द्र का वज्र, अग्नि का शक्ति, यम का दण्ड,

निऋृति का खड्ग, वरुण का पाश, वायु का अंकुश, चन्द्रमा का गदा, ईशान का शूल, ब्रह्मा का पद्म तथा अनन्त का चक्र–का उनके साथ पूजन करे। इस प्रकार से श्रीराम का पूजन आराधन करने वाला जीवनमुक्त हो जाता है ।।७९४–८००।।

चन्दनाक्तैः प्रजुहुयात् जाति पुष्पैः समाहितः ।।८००।।
राजवश्याय कमलैर्धनधान्यादि सिद्धये।
लक्ष्मीकामः प्रजुहुयात् प्रसूनैः बिल्व सम्भवैः ।।८०१।।
आज्याक्तैर्नीलकमलै वशयश्चे दखिलं जगत्।
उत्पलानाञ्च होमेन धनं प्राप्नोति वाञ्छितम् ।।८०२।।
पलाशकुसुमैर्हुत्वा मेधावी जायते नरः।
तज्जप्ताम्भः पिवेत् जातुवत्सरात् कविराट्भवेत् ।।८०३।।
तन्मन्त्रितान्नं भुञ्जीत महारोग प्रशान्तकः।
रोगोक्तौषध होमेन तद्रोगात् मुच्यतेक्षणात् ।।८०४।।
नदीतीरे च गोष्टे च जपन् भक्षपयोवृतः।
पायसेनाज्य प्रक्तेन हुत्वा बिद्यानिधिर्भवेत् ।।८०५।।
परिक्षीणाधिपत्यो यः शाकाहारो जलान्तरे।
जपेल्लक्षं च जुहुयात् बिल्वपुष्पैर्दशांशतः ।।८०६।।
तदेव पुनराप्नोति स्वाधिपत्यं न संशयः।
उपोष्य गंगातीरान्ते स्थितो लक्षं जपेन्नरः ।।८०७।।
दशांशं कमलैर्हुत्वा बिल्वोत्थैर्वा प्रसूनकैः।
मधुरत्रयसंयुक्तैः राज्यश्रियमवाप्नुयात् ।।८०८।।
माघमासे जले स्थित्वा कन्दमूलफलाशनः।
लक्षं जप्त्वा दशांशेन कमलैर्हुत्वा प्रसूनकैः ।।८०९।।
पायसैर्जुहुयात् वाऽसौ विल्बोत्थैश्च प्रसूनकैः।
श्रीरामचन्द्र सदृशः पुत्रः पौत्रोऽपिजायते ।।८१०।।

चन्दनचर्चित जूही के फूलों से शान्तचित्त होकर जो श्रीराम षडक्षर मन्त्रराज से अग्नि में होम करता है, वह राजा को भी अपने वशीभूत बना लेता है। कमल पुष्पों से हवन करे तो धन-धान्य से सम्पन्न होता है। लक्ष्मी-सम्पन्न होना चाहे तो बेल के फूलों से हवन करे। गोघृत में डुबो कर नील कमल के पुष्पों से हवन करे तो समस्त जगत् को वशीभूत कर सकता है। कमल के पुष्पों का हवन करने वाला मनुष्य मेधावी होता है। श्रीराम मन्त्र से अभिमन्त्रित जल पीने वाला एक वर्ष में कवि सम्राट-बन जाता है। श्रीराम मन्त्र से मन्त्रित अन्न का भोजन करने वाला सभी असाध्य रोगों से मुक्त हो जाता है। रोग प्रकरण में रोग निवारण करने वाले औषध जो कहे गये हैं उसमें से किसी एक औषध का जो अपने रोग के निवारण के लिए मन्त्रित करके हवन करे तो उसका असाध्य रोग भी नष्ट हो जाता है। किसी पवित्र नदी के तट पर अथवा गौशाला में केवल दुग्धाहार करके मन्त्र का जप करे तथा घी एवं क्षीर का हवन करे तो विद्या का भण्डार बन जाता है। जो अपने अधिकार से च्युत हो गया है, राज्यादिक से पदभ्रष्ट हो गया हैं, वह शाकाहार करता हुआ, जल में खड़ा होकर एक लाख श्रीराम मन्त्रराज का जप करके, बेल पुष्पों से दशांश हवन करे तो पुनः अपने आधिपत्य को प्राप्त कर लेता है। इसमें कुछ भी शंसय नहीं है। जो गंगातट पर निवास कर उपवास करता हुआ एक लाख मन्त्रराज का जप करे तथा कमल के पुष्पों का दशांश हवन करे अथवा बेल के पुष्पों का हवन करे, उसमें मधु-शक्कर तथा द्राक्षा तीनों मधुर मिलाकर हवन करे वह मनुष्य राज्यलक्ष्मी प्राप्त करता है। जो माघ महिने में कन्दमूल फलाहार करता हुआ जल में खड़ा होकर एक लाख श्रीराम मन्त्र का जाप करे तथा कमल तथा बेल के पुष्पों से अथवा पायस का हवन करे, वह श्रीरामचन्द्र जी के समान आज्ञाकारी सुपुत्र अथवा पौत्र प्राप्त करता है ॥८०१–८१०॥

अन्येऽपि बहवः सन्ति प्रयोगाः मन्त्रराजके ।
किन्तु प्रयोग कर्तॄणां वरलोको न विद्यते ॥८११॥

अन्य भी श्रीराम मन्त्रराज के तान्त्रिक अनेकों प्रकार के मारण-मोहन-उच्चाटन-आकर्षणादि प्रयोग हैं, परन्तु इनका प्रयोग लौकिक कार्यों में करने वाले मनुष्य को दिव्यलोक की प्राप्ति नहीं होती है। अतः इनका प्रयोग करना ही उत्तम है ॥८११॥

अथ मन्त्राराधन प्रकारः

षट्कोणं वसु पञ्चञ्च तथा बाह्येऽर्क दलं लिखेत् ।
षट्कोणेषु षड्वर्णानि मन्त्रस्य विलिखेद् बुधः ।।८१२।।
अष्टपत्रे तथाष्टवर्णान् लिखेत् प्रणव गर्भितान् ।
कामबीजं रविदले मध्ये मन्त्रावृताभिधाम् ।।८१३।।
सुदर्शनावृतं बाह्ये दिक्षुयुग्माकृतं तथा ।
वज्रोह्याय सद्रुभिगेहं कन्दर्पाङ्कुश पाशकैः ।।८१४।।
भूम्यां च विलिखेत् कोणं यन्त्रराजमिदं स्मृतम् ।
भूर्जेष्ट गन्धैः संलिख्य पूजयेदुक्त वर्त्मना ।।८१५।।
षट्कोणाष्टदलार्कोज्वान्यावेष्टय वृत्त युग्मतः ।
केशरेष्वष्टपत्रस्य स्वरद्वन्दं लिखेद् बुधः ।।८१६।।
बहिस्तु मातृकां चैव मन्त्रप्राणनिधायनम् ।
यन्त्रमेतच्छुभे हस्ते धारये द्दक्षिणे भुजे ।।८१७।।
मूर्ध्नि वा धारयेन्मन्त्री सर्व पापैः प्रमुच्यते ।
सुदिने शुभनक्षत्रे सुदेशे शल्यवर्जिते ।।८१८।।

षट्कोण लिखकर, उसके बाद अष्टदल बनावे, उसके बाद द्वादश दल कमल बनावे। षट्कोण में मन्त्र के छः अक्षर "रां रामाय नमः" लिखे, अष्टदलों में "श्रीरामः शरणं मम"। आठ अक्षर लिखे। जो प्रणव सहित रहे। ॐ श्री। ॐ रा। ॐ मः। ॐ श। ॐ र। ॐ णं। ॐ म। ॐ म। इस प्रकार लिखे। उसके बाद बारह दलों में काम बीज "क्लीं" लिखें। उसके मध्य में मन्त्र राज लिखें। बाहर में सुदर्शन मन्त्र दो बार गोलाकार हो जाय इस प्रकार लिखे। फिर वज्र-कन्दर्प-अंकुश पाश आदि लोकपालों के आयुधों को लिखें। पुनः भूपुर में कोण बनाकर लिखें—भूमेश्चतुरसं सवज्रकं पीतं च" अर्थात् चौकोर रेखा—वज्र चिन्ह के साथ पीले रंग की हो। यह यन्त्र राज का स्वरूप है। अष्टगंध से भोजपत्र पर लिखें तब उसकी उक्त प्रकार से पूजा करे। पुनः समझाते हैं कि—षट्कोण-अष्टदल-द्वादश दल, दो बार गोलाकार, इस प्रकार यन्त्र बनावे।

केशर में तथा अष्टदल में दो-दो अक्षर लिखे। बाहर में मातृका लिखकर यन्त्र की प्राण प्रतिष्ठा करके जो अपने दाहिने हाथ में धारण करे अथवा मस्तक पर धारण करे तो मन्त्र जापक सभी पापों से विमुक्त हो जाता है। यह मन्त्र शुभ दिन में, शुभ क्षेत्र में, शुभ स्थान में, धारण करे। शल्यादिक दोष-रहित स्थान में धारण करे। इस प्रकार यन्त्र धारण करने से मानव सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर प्रभु की कृपा प्राप्त कर धन्य हो जाता है ।।८१२-८१८।। *

प्रथम ही प्रमाण देकर समझाया गया है कि इस पावन मन्त्रराज का प्रयोग सांसारिक क्षुद्र मारण-उच्चाटनादिक में नहीं करना चाहिए। यह तो केवल प्रभु कृपा प्राप्त करने में ही करना चाहिए परन्तु फिर भी कोई अल्पज्ञानी ऐसा करना चाहे तो इसके लिए मूल श्लोक दिये जाते हैं—

वश्याकर्षण विधेः यद्वा मारणोच्चाटनादिकम् ।
पुष्पद्वयं तथादित्यारभिधासु यथाक्रमम् ।।८१९।।

दूर्वोत्था लेखनी वश्ये, तथाऽकृष्टौ करञ्जजा ।
नरास्थिजा मारणे तु स्थंभने राजलक्ष्मीजा ।।८२०।।

शान्ति पुष्टयायुषां सिद्धयै सर्वापद्शमनाय च ।
विभ्रमोत्पादने चैव शिलायां विलिखेद् बुधः ।।८२१।।

खरचर्मणि विद्वेषे यजेदुच्चाटनाय च ।
शत्रूणां ज्वर सन्तापशोकमारणकर्मणि ।।८२२।।

पीतवस्त्रे लिखित्वा तु साधयेत् साधकोत्तमः ।
वश्याकृष्टौ चाष्टगन्धैः सम्पूज्य च यथाविधिः ।।८२३।।

चिन्ता रागादिना चैव ताडनोच्चाटनादिकम् ।
विषार्कक्षीर योगेन मारणं भवति ध्रुवम् ।।८२४।।

---

* मातृका स्वरूप—

अं कं खं गं घं ङं आं नमः ।।	हृदयाय नमः ।।
इं चं छं जं झं ञं ईं ।।	शिर से स्वाहा ।।
उं टं ठं डं ढं णं ऊं ।।	शिखायैवषट् ।।
एं तं थं दं धं नं ऐं ।।	कवचाय हुं ।।
ओं पं फं बं भं मं औं ।।	नेत्रत्रयाय वौषट् ।।
अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः ।।	अस्त्राय फट् ।।

लिखित्त्वैव मन्त्रराजं गन्धपुष्पादिभिर्यजेत् ।
त्रिलोह वेष्टितं कृत्वा धारयेत् साधकोत्तमः ।।८२५।।
बीजं रामाय बद्धं मन्त्रोऽयं रस वर्णकः ।।८२६।

अथ सुदर्शन मन्त्रम्

महासुदर्शनश्चात्र कथ्यते सिद्धिदायकः ।
सुदर्शन महास्त्रष्टा चक्रराजेश्वरेति च ।।८२७।।
दुष्टान्तक तद्दुष्ट भयानक दुष्ट भयंकरम् ।
छिन्धि द्वयं भिंदि युग्मं विदारय युगं ततः ।।८२८।।
परमन्त्रान् ग्रसद् बद्धं भक्षय द्वितीयं ततः ।
त्राणापद् द्वितयं वर्मास्त्राग्नि जापान्तिमो मनुः ।।८२९।।
अष्ट षष्टयक्षरः प्रोक्तो यन्त्र संवेष्टने त्वयम् ।।

यन्त्रराज को गोलाकार में दो बार लपेटने में इस श्री सुदर्शन मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए। यह मन्त्र ६८ अड़सठ अक्षर का है—"ॐ सुदर्शन महास्त्रष्टा चक्रराजेश्वर दुष्टान्तक दुष्ट भयानक दुष्ट भयङ्कर छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि विदारय विदारय परमन्त्रान् ग्रस ग्रस भक्षय-भक्षय त्राणापद् वर्मास्त्राग्निजान्" ।।८२७–८२९।।

तारोहृद् भगवन हेतो हेतो हि रघुनन्दनः ।।८३०।।
रक्षोघ्न विशदायान्ते मधुरादि प्रसन्न च ।
वदनायामितान्ते च तेजसे पदमीरयेत् ।।८३१।।
बलायान्ते तु रामाय विष्णवे हृदयान्तिमः ।
सप्त चत्वारिंशत् वर्णो माला मन्त्रोऽयमीरितः ।।८३२।।

पहले "ॐ" बोले, तब भगवन् शब्द में चतुर्थी लगाकर "भगवते" बोले, तब रघुनन्दन में चतुर्थी लगाकर "रघुनन्दनाय" बोले, तब "रक्षोघ्न विशदाय" बोले, तब "मधुर प्रसन्न" बोले, तब "वदनाय अमित तेजसे" बोले, तब "वलाय" बोलकर "रामाय" बोले, तब अन्त में "विष्णवे नमः"

बोले। यह ४७ सैंतालीस अक्षर का मालामन्त्र है। यह राज्यादि स्थानों में सदैव सुरक्षा करने वाला महामन्त्र है ।।८३०–८३२।।

विश्वामित्रो मुनिश्चास्य गायत्री छन्दईरितः ।
श्रीरामो देवता बीजं ध्रुवशक्तिश्च कीर्तिता ।।८३३।।
षड दीर्घस्वर युग्मे न बीजेनाङ्गानि कल्पयेत् ।
ध्यान पूजादिकं सर्वं अस्यपूर्ववदाचरेत् ।।८३४।।
अयमाराधितो मन्त्रः सर्वान् कामान् प्रयच्छति ।
स्व काम शक्ति वागलक्ष्मी ताराधः संप्रकीर्तितः ।।८३५।।
पञ्चवर्ण षडक्षरस्याच्यतुवर्ग फलप्रदः ।
ब्रह्मा सम्मोहनशक्तिर्दक्षिणामूर्ति संज्ञकः ।।८३६।।
अगस्त्यः श्री शिवः प्रोक्तास्त्वेतेषां मुनयः क्रमात् ।।८३७।।

(ॐ नमो भगवते रघुनन्दनाय रक्षोघ्न विशदाय मधुर प्रसन्न-वदनाय अमिततेजसे बलाय रामाय विष्णवे नमः।) यह ४७ अक्षर का श्रीराम का मालामन्त्र है। इसके विश्वामित्र ऋषि हैं। यायत्री छन्द है। श्रीराम देवता हैं। "राम" बीज है। ध्रुवा शक्ति हैं। "रां रीं रूं रैं रौं रः" इन छः दीर्घ स्वरों के द्वारा अङ्गन्यास करन्यास श्रीराम मन्त्र के न्यास की भांति किये जाते हैं। ध्यान, पूजा आदि पूर्व प्रसंग में वर्णन आया है उसी प्रकार करना चाहिए। इसका श्रद्धा-विश्वास पूर्वक आराधन करने से सभी मंगल मनोरथ पूर्ण होते हैं। रां-क्लीं-ह्रीं-ऐं-श्रीं-ॐ इन बीजों के साथ प्रयोग करने पर अत्यन्त फल प्रदान करता है। ये बीज क्रमशः राम-काम-माया-शक्ति-सरस्वती-श्रीलक्ष्मी तथा ब्रह्म के वाचक हैं। "रामाय नमः" तथा "रां रामाय नमः" ये पञ्चाक्षर तथा षडक्षर मन्त्र अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष चारों प्रकार के फल प्रदान करते हैं। इनके ब्रह्मा, सम्मोहन शक्ति, दक्षिणा मूर्ति, अगस्त्य, श्री देवी तथा शिव ये क्रमशः प्रत्येक अक्षरों के ऋषि माने गये हैं ।।८३३–८३७।।

।। इति श्रीराम परत्वम् ग्रन्थस्य चतुर्थो भागः ।।

पञ्चमो भागः
श्रीरामधाम परत्व वर्णनम्

॥ अथ मङ्गलाचरणम् ॥

नित्यं नौमि परेश राम रमणं माधुर्य लीला परं-
रूपं राशि गुणाकरं सुखकरं लावण्य शोभाकरम् ।
सौन्दर्यं वरवेश सततं विहरन्त सरयूतटे-
सीतासङ्ग रसादिमोद जनकं श्रीमाँस्तु सर्वेश्वरम् ॥८३८॥

श्री वशिष्ठ संहिता में महर्षि भरद्वाज मुनि श्री वशिष्ठ जी से श्री रामधाम साकेत का रहस्य जानने के लिये नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ कर प्रश्न करते हैं—

वेद वेदान्त सारज्ञ विरञ्चि प्रभवोत्तम !
भवता यत्परिज्ञातं तन्न जानाति कश्चन ॥८३९॥
अतस्त्वा परिपृच्छामि हरेर्धाम्नां हि कारणम् ।
किं तत्परतमं धाम माधुर्यैश्वर्य भूषणम् ॥८४०॥
यत्र सर्वावताराणां आदिकारण विग्रहः ।
क्रीडते कृपया मे त्वं तत्त्वतः कथय प्रभो ॥८४१॥

हे भगवन् ! आप वेद-वेदान्त के तत्त्वसार को जानने वाले हैं। ब्रह्मा जी के पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ हैं। आप जो जानते हैं वैसा यथार्थ ज्ञान कोई नहीं जानते हैं। अतएव मैं आपसे प्रभु के सभी दिव्य धामों का आदि करण, माधुर्य तथा ऐश्वर्य का विभूषण, परात्परतम कौनसा धाम है ? जिस धाम में सभी अवतारों के अवतारी परब्रह्म प्रभु नित्य लीला विलास करते हैं, उसका तात्विक रहस्य आप कृपा करके कथन करने का अनुग्रह करें ॥८३९–८४१॥

श्री वशिष्ठ उवाच—

साधु पृष्ठं त्वया तात ! गुह्याद् गुह्योत्तमं महत् ।
सारात् सारतमं वेद सिद्धान्तं प्रवदामि ते ।।८४२।।
श्रुयतां सावधानेन रहस्यमति दुर्लभम् ।
रामभक्तं विना क्वापि न वक्तव्यं त्वयानघ ।।८४३।।

हे तात ! तुमने बहुत ही सुन्दर प्रश्न किया है जो गुप्त से भी गुप्त महान् रहस्य की बात है, जो सभी सार तत्वों का भी सार सर्वस्व है, वेद वेदान्त तथा सभी शास्त्रों का सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त है वह आज मैं आपको सुनाता हूँ । आप अत्यन्त सावधान होकर यह परम दुर्लभ रहस्य श्रवण करें परन्तु इतना स्मरण रखना कि श्रीराम के अनन्य उपासक भक्तों के बिना हे निष्पाप ! आप यह कथा और किसी को नहीं कहना ।८४-२४३।

सर्वेभ्यश्चापि लोकेभ्य ऊर्ध्वं प्रकृतिमण्डलात् ।
विरजायाः परे पारे वैकुण्ठं यत्परं पदम् ।।८४४।।
तस्मादुपरि गोलोकं सच्चिदिन्द्रिय गोचरम् ।
तन्मध्ये रामधामास्ति साकेतं यत्परात्परम् ।।८४५।।
श्रीमद् वृन्दावनादीनि तद्धामावरणेष्वपि ।
सर्वेषामवताराणां सन्ति धामान्यनेकशः ।।८४६।।
केवलैश्वर्य मुख्यानि धामान्येतानि सन्मते ।
ऐश्वर्योपासकाः भक्ताः ध्यायन्ति प्राप्नुवन्ति च ।।८४७।।

सुनिये, यह सावधान होकर सुनने की बात है । इस भौतिक प्रकृति मण्डल के सभी लोकों से ऊपर विरजा नदी के उस पार प्रभु का परम पद दिव्य धाम वैकुण्ठ धाम है । उससे ऊपर सच्चिद् स्वरूप मुक्तात्माओं को दिव्य दृष्टि से इन्द्रिय गोचर होने वाला प्रभु का परम प्रिय गोलोक धाम है । उस गोलोक के मध्य भाग में श्रीराम का परम दिव्य साकेत धाम है । जो सभी धामों से परात्पर धाम है । श्री वृन्दावन आदि प्रभु के सभी धाम उस साकेत धाम के आवरणों में विराजमान है । प्रभु के सभी अवतारों के अनेकों धाम भी श्री साकेत धाम के आवरणों में सुशोभित

है। हे सद्बुद्धिमान भरद्वाज ! ये सब अवतारों के धाम केवल ऐश्वर्य भावना से उपासना करने वाले भक्तों के प्रिय धाम हैं। वे प्रभु के ऐश्वर्योपासक भक्त जिस प्रकार का ध्यान उपासना करते हैं उसी प्रकार के प्रभु स्वरूप की प्राप्ति उन सब को इन धामों में होती है ॥८४४-८४७॥

एभ्यः परतमं धाम श्रीरामस्य सनातनम् ।
पृथिव्यां भावनागम्यं अयोध्याख्यं सुदुर्लभम् ॥८४८॥
अखण्ड सच्चिदानन्द सन्दोहं परमाद्भुतम् ।
वाङ्मनोगोचरातीतं त्रिषुकालेषु निश्चलम् ॥८४९॥
भूतलेऽपि च यद्धाम तथापि प्रकृतेर्गुणाः ।
संस्पृशन्ति न तज्जातु जलानि कमलं यथा ॥८५०॥
कालः कर्मस्वभावश्च मायिकः प्रलयस्तथा ।
ऊर्मयः षड्विकाराश्च न यत्र प्रभवन्ति हि ॥८५१॥
यदंशेन प्रकाशेते विभूति द्वे सनातने ।
ऊधश्चोर्ध्वमनन्ते च नित्ये च परमाद्भुते ॥८५२॥
विभाति सरयूर्यत्र पश्चिमादि त्रिदिक्षुच ।
विरजाद्याः सरिच्छ्रेष्टाः प्रकाशन्ते यदंशतः ॥८५३॥

इन सब धामों से प्रभु श्रीराम का सनातन परमधाम श्री अयोध्या है। पृथ्वी पर भी अत्यन्त दुर्लभ भावनागम्य श्री अयोध्यानाम का यह अखण्ड सच्चिदानन्दमय परम अद्भुत दिव्यधाम भारतवर्ष में है। जो मन-वाणी से अगोचर तोनों काल में एक रूप एक रस अविचल रहने वाला धाम है। यद्यपि यह प्रकृति मण्डल में भूलोक है तथापि उसको प्राकृतिक गुणों का स्पर्श नहीं होता है। जैसे जल में कमल निर्लेप रहता है वैसे यह सदैव निर्विकार अलौकिक धाम है। काल-कर्म-स्वभावादिक माया के विकारों से रहित है। काम क्रोधादिक षड्विकार तथा भूख प्यासादिक उर्मियों से निर्लेप रहता है। सांसारिक विकारों का प्रादुर्भाव इसमें कभी नहीं होता है। क्योंकि इसी के दिव्य अंश से लीला विभूति तथा दिव्य विभूति दोनों प्रकाशित होती हैं। भूतल में तथा ऊर्ध्व लोक में नित्य सनातन परम अद्भुत इसका प्रकाश है। जिसके पश्चिम उत्तर तथा

पूर्व दिशा में श्री सरयू नदी सुशोभित है। जिस दिव्य सरयू नदी के अंश कलाओं से श्री विरजा आदि श्रेष्ठ नदियां प्रकाशित हो रही हैं ॥८४७-८५३॥

परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरादपि ।
यो वै परतमः श्रीमान् रामोदाशरथि स्वराट् ॥८५४॥
यस्यानन्तावताश्च कलाचांश विभूतयः ।
आवेशाः विष्णुब्रह्मेशाः परब्रह्म स्वरूपभाः ॥८५५॥
स एव सच्चिदानन्दो विभूति द्वय नायकः ।
वात्सल्याद्भुतानन्तकल्याणगुण वारिधिः ॥८५६॥
राजेन्द्र मुकुट प्रोद्यत् रत्ननीराजित्तांध्रिणा ।
पित्रा दशरथेनैव वात्सल्यामृतसिन्धुना ॥८५७॥
कौशल्याप्रमुखाभिश्च मातृभिर्भ्रातृभिस्त्रिभिः ।
सीतादिभिश्चस्वदारैश्चदासीभिश्चालीभिस्तथा ॥८५८॥
सखीभिः समरूपैश्च दासैश्चामित विक्रमैः ।
वशिष्ठाद्यैर्मुनीन्द्रैश्च सुमन्त्राद्यैश्च मन्त्रिभिः ॥८५९॥
परिवारैरनेकैश्च सच्चिदानन्दमूर्तिभिः ।
भोगैश्च विविधैर्दिव्यै र्भोगोपकरणैस्तथा ॥८६०॥
सार्धं वसति यत्रैव स्वतन्त्रः क्रीडते सदा ।
क्षणं हित्वा न तद्धाम क्वचित् याति स्वयं प्रभुः ॥८६१॥
तन्माधुर्यमयं नित्यं ऐश्वर्यान्तरर्गतं ध्रुवम् ।
रामस्यातिप्रियं धाम नास्यनेन समं क्वचित् ॥८६२॥

श्रीमन्नारायण से परात्पर तथा श्री कृष्ण जो से भी परतम प्रभु दशरथनन्दन सर्वतन्त्र स्वतन्त्र श्रीराम हैं। जिनके कला अंश विभूति अनेकानेक प्रभु के अवतार हैं तथा जिनके आवेशावतार ब्रह्मा, विष्णु, महादेवादिक हैं, वही पर ब्रह्म परमात्म स्वरूप भगवान् श्रीराम हैं, वही दोनों विभूति के नायक सच्चिदानन्द आनन्दकन्द प्रभू श्रीराम हैं। जो अनन्तानन्त वात्सल्यादिक कल्याण गुणगणों के सागर हैं। जिनके चरणों

में बड़े-बड़े राज राजेन्द्र अपने किरीट मुकुट से अलंकृत मस्तक झुकाकर प्रणाम करते हैं, ऐसे चक्रवर्ती सम्राट वात्सल्य रस के समुद्र पिता दशरथ जी के राजमहल में विराजते हैं। श्री कौशल्यादिक माताएँ तथा भरतादिक तीनों भाइयों के सहित प्रभु श्री अयोध्या जी में श्री जानकी जी आदि अपनी महारानियों समेत एवं उनकी दासियां, आलीगण तथा अपनी ही जैसी सखियों सहित विराजते हैं। अपने जैसे ही अत्यन्त पराक्रमी दास सेवकों के सहित आप श्री अवध में निवास करते हैं। श्री वशिष्ठादिक मुनिश्वरों के तथा सुमन्त्रादिक मन्त्रीगण एवं सच्चिदानन्द मूर्तिस्वरूप परिवार के सहित प्रभु विराजते हैं। विविध प्रकार के दिव्य भोग तथा भोगों के उपकरण सम्पूर्ण दिव्य साधनों से सम्पन्न सुशोभित हैं। इन अपने प्रिय परिकर पार्षद परिजन एवं परिवार सहित स्वतन्त्र दिव्य-लीला क्रीड़ा करते रहते हैं। उस श्री अयोध्या धाम का परित्याग कर स्वयं प्रभु धाम क्षण मात्र भी अन्यत्र कहीं नहीं जाते हैं। नित्य निरन्तर श्री अयोध्या धाम में निवास करते हैं। श्रीराम का परम प्रिय यह धाम माधुर्यरसमय तथा ऐश्वर्य से सदैव परिपूर्ण अविचल धाम है। इसकी समता का प्रभु का प्यारा अन्य कहीं कोई धाम नहीं है। अतः यह अप्रतिम अयोध्या धाम जैसा श्री अयोध्या धाम ही है ॥८५४-८६२॥

अतोऽयोध्यां रसज्ञा ये सर्वदा पर्य्युपासते।
प्राकृतैश्चक्षुभिर्नैव दृश्यते सा कथंचन ॥८६३॥
देहत्रय विनिर्मुक्ता रामभक्ति प्रभावतः।
तुरीय सच्चिदानन्दरूपाः पश्यन्ति तां पुरीम् ॥८६४॥

इसीलिये प्रभु के प्रेमरस रहस्य को जानने वाले सन्त सदा सर्वदा श्री अयोध्यापुरी की श्रद्धापूर्वक उपासना करते हैं। परन्तु इस पवित्र धाम के इन प्राकृत चर्मचक्षुओं से दर्शन किसी प्रकार नहीं होते हैं। इस दिव्य धाम का दर्शन तो स्थूल-सूक्ष्म-कारण तीनों शरीरों के अभिमान से जो विमुक्त हो गये हैं, जो श्रीराम भक्ति के प्रभाव से तुरीय सच्चिदानन्द स्वरूप बन गये हैं, वे प्रभु के प्यारे प्रभु की कृपा से प्राप्त दिव्य चक्षुओं द्वारा दिव्य श्री अयोध्यापुरी का दर्शन करते हैं ॥८६३-८६४॥

॥ अथ साकेत सप्तावरण ॥

अथ श्रीरामचन्द्रस्य यद्धाम प्रकृतेः परम् ।
सच्चिद्घनपरानन्दं नित्यं साकेत संज्ञिकम् ॥८६५॥
यदंश वैभवा लोकाः वैकुण्ठाद्याः सनातनाः ।
सप्तावरणानि तस्याहं वक्ष्यामि मुनिसत्तम ॥८६६॥

हे मुनिराज भरद्वाज ! अब मैं प्रकृति मण्डल से पर सच्चिदानन्द-घन परमानन्दमय नित्य साकेत धाम नामक श्रीरामचन्द्र जी के दिव्य धाम का वर्णन करता हूँ। जिसके अंश से प्रभु के सनातन श्री वैकुण्ठ आदि दिव्य धामों का वैभव विस्तार होता है। उस श्री साकेत धाम के सातों आवरणों का सविस्तार ध्यानपूर्वक श्रवण करो ॥८६५-८६६॥

एकैकस्या दिशिः श्रीमान् दशयोजन सम्मितः ।
अयोध्यायाः बहिर्देशः सवै गोलोक संज्ञकः ॥८६७॥

श्री अयोध्या साकेत धाम के चारों ओर बाहर में दश-दश योजन विस्तार वाला जो मनोहर रमणीय प्रदेश है वह दिव्य श्री सम्पन्न प्रभु का गोलोक धाम कहलाता है ॥८६७॥

महाशम्भुर्महाब्रह्मा महेन्द्रो वरुणस्तथा ।
धनदो धर्मराजश्च महान्तश्च दिगीश्वराः ॥८६८॥
त्रयस्त्रिंशत् तथा देवाः गन्धर्वाश्चाप्सरोगणाः ।
अन्ये च विविधा देवाः नित्या सर्वे द्विजोत्तम ॥८६९॥
सप्तर्षयो मुनीन्द्राश्च नारदः सनकादयः ।
वेदामूर्तिधराः शास्त्र विद्याश्च विविधास्तथा ॥८७०॥
सायुधाः सगणाः श्रीमत् रामभक्ति परायणाः ।
प्रथमावरणे नित्यं साकेतस्य स्थिताः मुने ॥८७१॥
एतदंश समुद्भूता देवाः ब्रह्मा शिवादयः ।
यथाधिकारं ते सर्वे स्वस्वलोकेषु संस्थिताः ॥८७२॥

हे ब्राह्मणों में परम श्रेष्ठ भरद्वाज ! महाशम्भु, महाब्रह्म, महेन्द्र, महावरुण, धर्मराज, महादिगीधर आदि सभी देवगण, गन्धर्व, अप्सरायें, मूर्तिमान चारों वेद, सम्पूर्ण शास्त्र, समस्त विद्यायें सप्तर्षिगण, महामुनीन्द्रजन, नारद-सनकादिक, विविध प्रकार के सभी देवता गण, ये सभी अपने-अपने आयुधों तथा पार्षद गणों सहित अपने नित्य स्वरूप से अपने-अपने स्थानों पर साकेत धाम के प्रथमावरण में नित्य निवास करते हैं। हे मुनीश्वर ! इसके ही अंशों से अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड में इन्हीं के नाम के ब्रह्मा-शिव-इन्द्र-चन्द्र-सूर्यादि देवता अपने-अपने लोक में प्रभु की कृपा द्वारा प्राप्त अपने-अपने अधिकारों से सम्पन्न होकर विराजमान रहते हैं ।।८६८-८७२।।

निधयो नवधा नित्या दशाष्टौ सिद्धयस्तथा ।
पञ्चधा मुक्तयश्चापि रूपवत्यः पृथक् पृथक् ।।८७३।।
कर्मयोगो च वैराग्य ज्ञानञ्च साधनैः सह ।
द्वितीयावरणे नित्यं स्वस्वरूपेण संस्थिताः ।।८७४।।

अणिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशिता, वशिता, अवस्यति अर्थात् यथेस्ट इच्छापूर्ण सुख प्राप्ति, ये आठ सिद्धियां तथा अनूर्मित्व, दूरश्रवण, दूरदर्शन, मनोजव, कामरूप, परकाय प्रवेश, स्वछन्द मृत्यु, देवसहक्रीड़ा, संकल्प सिद्धि तथा आज्ञा का अप्रतिघात ये दश सब मिलकर १८ सिद्धियां तथा नव निधियाँ, पांच प्रकार की मुक्तियां, ये सब अपने-अपने रूप धारण करके नित्य द्वितीयावरण में निवास करते हैं। उसी प्रकार कर्मयोग, ज्ञानयोग, वैराग्य तथा हठयोग आदि मूर्तिमन्त बन कर साकेत धाम के द्वितीयावरण में नित्य निवास करते हैं। इनके अंशांश से संसार में ये सब इसी नाम से प्रकट होकर प्रभु की आज्ञा का पालन करते हैं ।।८७३-८७४।।

सच्चिज्ज्योतिर्मयं ब्रह्म निरीहं निर्विकल्पकम् ।
निर्विशेषं निराकारं ज्ञानाकारं निरञ्जनम् ।।८७५।।
निर्वाच्यं निर्गुण नित्यमनन्तं सर्वसाक्षिकम् ।
इन्द्रियैर्विषयैः सर्वैरग्राह्यं तत्प्रकाशकम् ।।८७६।।

न्यासिनां योगिनां यच्च ज्ञानिनां च लयास्पदम् ।
तृतीयावरणे तद्वै साकेतस्य विदुर्बुधाः ।।८७७।।

जो सत्-चित् ज्योतिर्मय है, इच्छा रहित है, कल्पना से परे है, जिसका कोई विशेषण नहीं दिया जा सकता, जो निराकार, ज्ञानाकार, निरञ्जन-अनिर्वचनीय, निर्गुण, नित्य, अनन्त, सर्वसाक्षी, इन्द्रियों से तथा उसके सभी विषयों से अग्राह्य है एवं उन सबका प्रकाशक ब्रह्मस्वरूप है वह निराकार ब्रह्म साकेत धाम के तीसरे आवरण में विराजमान है ऐसा बुद्धिमान महात्मा लोग मानते हैं ।।८७५–८७७।।

गर्भोदक निवासी च क्षीरार्णव निवासकृत् ।
श्वेतद्वीपाधिपश्चैव रमावैकुण्ठ नायकः ।।८७८।।
सलोका सगणा सर्वे मथुरा च महापुरी ।
पुरी द्वारावती नित्या काशी लोकैक वन्दिता ।।८७९।।
काञ्ची मायापुरी दिव्या तथा चावन्तिकापुरी ।
अयोध्यामेव सेवन्ते चतुर्थावरणे स्थिता ।।८८०।।

गर्भोदक निवासी तथा क्षीर सागर में निवास करने वाले, श्वेतद्वीप के अधिपति, तथा रमा वैकुण्ठ के स्वामी, ये सब अपने प्रिय कर पार्षद तथा गणों के सहित सपरिकर सपरिवार श्रीसाकेत धाम के चतुर्थावरण में सदैव विराजते हैं । श्री मथुरा महान् पवित्र पुरी, नित्य स्वरूपा द्वारका पुरी, सभी लोकों में वन्दनीय काशीपुरी, काञ्चीपुरी, मायापुरी (हरिद्वार) दिव्य नगरी उज्जैनपुरी, ये सभी मोक्षदायिनी पुरियां श्री साकेत के चौथे आवरण में निवास करती हुई श्री अयोध्या जी की सेवा करती हैं । ।।८७८–८८०।।

साकेत पूर्व दिग्भागे श्रीमती मिथिलापुरी ।
सर्वाश्वर्य्यवती नित्या सच्चिदानन्दरूपिणी ।।८८१।।
हर्म्यैः प्रासादवप्यैश्च नानारत्न परिष्कृतैः ।
विमानै विविधैरुच्चैश्चित्रध्वज पताकिभिः ।।८८२।।
भ्राजते परिखादुर्गं विविधोद्यान संकुला ।
तस्यां श्रीमन्महाराज शीरकेतुः प्रतापवान् ।।८८३।।

श्वशुरो रामचन्द्रस्य वात्सल्यादि गुणार्णवः ।
निमिवंशध्वजः शूरश्चतुरङ्गबलान्वितः ।।८८४।।
वेदवेदाङ्ग सारज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ।
धनुर्वेदविदांश्रेष्ठः सर्वैश्वर्य समन्वितः ।।८८५।।
श्रीमतीभिः स्वपत्नीभिः परिवारैरनेकशः ।
दासीदासगणैर्नित्यं सेवितो वसति स्वराट् ।।८८६।।

श्री साकेत धाम के पूर्व भाग में श्रीमती दिव्य मिथिलापुरी है, जो सर्वप्रकार के आश्चर्य से परिपूर्ण नित्य एवं सच्चिदानन्द स्वरूपा है। वह बड़े-बड़े प्रसाद शिखरों से सुशोभित सुन्दर भवनों तथा मन्दिरों से अलंकृत है। अनेकों प्रकार के रत्नों से प्रकाशित है, नाना प्रकार के विमान-ध्वजा-पताका-तोरण वन्दनवार से सजी हुई परम मनोहर लगती हैं। चारों ओर परिखा तथा कोट-किला से सुहावनी शोभा सम्पन्न है। बाग-बगीचे पुष्प-वाटिका-कूप-तड़ाग से सम्पन्न है। उस श्री मिथिलापुरी में वात्सल्यादिक गुणों के सागर भगवान् श्री रामचन्द्र जी के श्वसुर श्री शीरध्वज महाराज जनक विराजते हैं। जो निमि बंश की विजय वैजयन्ती फहराने वाले शूरवीर चतुरंगिणी सेना सम्पन्न, वेद-वेदान्त के सारतत्व को जानने वाले, सम्पूर्ण शास्त्रों में पारङ्गत हैं। धनुर्वेद के जानने वालों में परम श्रेष्ठ एवं समस्त ऐश्वर्यों से परिपूर्ण हैं, अपनी श्रीमती सुनयनादिक महारानियों तथा अनेकानेक परिवार दास-दासीगणों से सदैव सुसेवित है, स्वयं स्वतन्त्र सम्राट के रूप में साकेत धाम के पञ्चमावरण में पूर्वभाग में श्री मिथिलापुरी में विराजते हैं ।।८८१–८८६।।

दक्षिणस्यां दिशिः श्रीमान् कोशलायाः गिरिर्महान् ।
भ्राजते चित्रकूट सच्चिन्मयानन्दश्च मूर्तिमान् ।।८८७।।
नानारत्नमयैः शृङ्गैः विचित्रैश्चित्रपादपैः ।
सुधास्वादु फलैः रम्यैः पुष्प भारावलम्बिभिः ।।८८८।।
नृत्यन्मत्तमयूरैश्च निर्झरैर्निर्मलाम्बुभिः ।
सीतया सह रामस्य लीलारसविवर्धनः ।।८८९।।
लताजाल वितानैश्च गुञ्जद् भ्रमरसंकुलैः ।
मत्त कोकिलसन्नादैः कूजद्भिः चित्र पक्षिभिः ।।८९०।।

चिद्रूपा काञ्चनीभूमिः समारत्नैः विचित्रिता ।
समन्तात् पर्वतेन्द्रस्य दिव्यकानन मण्डिता ।।८६१।।
यत्र मन्दाकिनी रम्या वहति श्रीमती नदी ।
मणिनिर्मलतोयाढ्या वज्रवैदुर्य्यवालु का ।।८६२।।
गुज्जन्मधुव्रत श्रेणी प्रफुल्लकमलाकुला ।
चित्र पक्षी कलक्वाण मुखरीकृत दिग्तटा ।।८६३।।
स्वर्णस्फटिक माणिक्य मुक्ताबद्धतटद्वया ।
चित्रपुष्पलतापुञ्ज कुञ्जानि विविधानि च ।।८६४।।
मधुराणि सहस्राणि तस्यास्तीर द्वयोरपि ।
सन्ति नित्य विहारार्थं जानकी रामचन्द्रयोः ।।८६५।।

श्री अयोध्यापुरी के दक्षिण दिशा में महान् गिरीराज साक्षात् प्रत्यक्ष मूर्तिमान सच्चिदानन्दमय स्वरूप श्री चित्रकूट विराजमान है। जो अनेक प्रकार के रत्नों से सुशोभित शिखरों तथा अनेक प्रकार के मनोहर वृक्षों से, एवं सुधा जैसे स्वाद से रस भरे फलों से, एवं सुगन्धित पुष्पों से परम सुन्दर लगते हैं। ऐसे वृक्षों से परम रमणीय लगता है। निर्मल जल के झरनों के किनारे मतवाले मयूर नृत्य करते हैं। ऐसा यह चित्रकूट पर्वत श्री सीताजी एवं श्रीरामजी के लीलारस को निरन्तर बढाने वाला है। लताओं के जाल से बने कुंज निकुंजों में भौंरे गुंजार रहे हैं, मतवाली कोयलें मधुर स्वर से बोल रही हैं, चित्र-विचित्र पक्षीगण आनन्दमग्न होकर अपने-अपने स्वर में निनाद कर रहे हैं। जहां की भूमि चित् स्वरूपा है। कञ्चनमयी है, नाना प्रकार के रत्नों से जड़ी हुई चित्रों जैसी लगती हैं। चित्रकूट पर्वतराज के चारों ओर सघन वन शोभा दे रहे हैं। जहां पर परम रम्य श्रीमती मन्दाकिनी नदी स्फटिक मणि के समान निमल जल से भरी हुई प्रवाहित हो रही है। हीरों को पीस कर बिछा दिये हों ऐसी सुन्दर बालू मन्दाकिनी में सुहावनी लगती है। भौंरे गुञ्जार करते हैं, उसके दोनों तट पर चित्र-विचित्र पक्षी किलोल कर रहे हैं, कमल प्रफुल्लित हो रहे हैं। सोना-हीरा-मोती माणिक से दोनों तटों के किनारे जटित हो रहे हैं। अनेकों प्रकार के चित्र-विचित्र पुष्पों से सुशोभित कुंज निकुंजों से सम्पन्न है। श्री जानकी जी तथा श्रीरामचन्द्र

जी को नित्य विहार में परमानन्द प्रदान करने वाले सहस्त्रों हजारों मधुर मनोहर स्थान श्री मन्दाकिनी के दोनों तटों पर विराजमान है ।८८७-९५।

अयोध्या पश्चिमे भागे कृष्णस्य परमात्मनः ।
नित्यं वृन्दावनं धाम चिन्मयानन्दमद्‌भुतम् ।।८९६।।
समन्ताद्भूः समायत्र कांचनी रत्नचित्रिता ।
दिव्यवृक्षलताकुञ्जैर्गुञ्जन्मत्तमधुव्रतै ।।८९७।।
नवीनैः पल्लवैः स्निग्धैः फलैः पुष्पैश्च सन्ततैः ।
नदत्पाक्षिगणैश्चित्रैर्मयूरैश्च विराजते ।।८९८।।
गोवर्धनो गिरिश्चात्र काञ्चनो रत्नमण्डितः ।
लता पादपसंकीर्णो गुहा निर्झर कूटवान ।।८९९।।
नदी यत्र महापुण्या कालिन्दी कृष्णवल्लभा ।
नीलरत्नजलोत्तुङ्गतरङ्गावर्तमालिनी ।।९००।।
फुल्लपङ्करुहा मत्त कूजद्भृङ्ग विहङ्गमा ।
स्वर्णघट्टतटा रत्नवालुका शोभते भृशाम् ।।९०१।।

श्री अयोध्या जी के पश्चिम भाग में श्री कृष्ण परमात्मा का नित्य दिव्य धाम श्री वृन्दावन है । जो परम अद्‌भुत सच्चिदानन्दमय है। जिसकी सम्पूर्ण भूमि कञ्चनमयी, रत्नों से जटित, समान समतल वाली बडी मनोहर लगती है । दिव्य वृक्ष-लता-कुञ्जों से सुशोभित है । जिसमें भौंरे मस्त होकर गुञ्जार कर रहे हैं । नवीन पत्तों से, चिकनी छाल से, फलों से, पुष्पों से भरित डालियां नीचे झुक रही हैं, चित्र-विचित्र पक्षी निनाद कर रहे हैं । मयूर मतवाले बने नाच रहे हैं । गिरिराज गोवर्धन कञ्चनमय रत्नों से जटित शोभा दे रहा है । लता-वृक्ष-सघन वन-गुफायें-झरनें तथा सुन्दर शिखरों से सम्पन्न है । जहां पर महान् पुण्य प्रदायिनी श्री कृष्ण जी की परमप्यारी कालिन्दी (यमुना) नदी विराजती है । जो नील रत्नों की शोभा से सम्पन्न, उछलती हुई तरङ्गों से लपेटी हुई, कमल पुष्पों से प्रफुल्लित, मतवाले भौरो के तथा पक्षियों के कलरव से शोभायमान है, जिसके स्वर्णमय घाट रत्नों की वालुका से सुशोभित है । ऐसे दोनों तटों वाली श्री यमुना जी अत्यन्त रमणीय लगती हैं ।।८९६-९०१।।

गोपीगोपगणैर्नित्यैर्गोवृन्दैर्गोपबालकैः ।

श्रीमन्नन्द यशोदाभ्यां भ्राता श्रीमद्बलेन च ।।६०२।।

सखीभिर्गोपकन्याभिर्वृषभानुसुतादिभिः ।

सार्द्धं वसति तत्रैव श्रीकृष्णः पुरुषोत्तमः ।।६०३।।

क्वणद्वेणु मनोहारी विहारी रासमण्डले ।

श्रीराधिका मुखाम्भोजमकरन्दमधुव्रतः ।।६०४।।

गोपी, गोपगण, गायें तथा नित्य गोपाल बालकों से एवं भाई बलराम जी के सहित, श्रीमान् नन्द यशोदा समेत, सखियों तथा गोप कन्याओं के सहित तथा श्री वृषभानु नन्दिनी राधा राणी के सहित पुरुषोत्तम प्रभु श्रीकृष्ण जी वहां विराजते हैं। वे नित्य लीला विहारी रास मण्डल में विहार करते हुए मधुर मनोहर मुरली बजाते हैं। श्री राधिका जी के मुख कमल के मकरन्द रस के भ्रमर बन कर निरन्तर पान करते हैं ।।६०२-६०४।।

सत्यायाश्चोत्तरेभागे महावैकुण्ठ संज्ञकम् ।

महाविष्णोः परं धाम ध्रुवं वेधैः प्रकीर्तितम् ।।६०५।।

सर्वतः स्वचितारत्नै र्भूमिर्यत्र हिरण्मयी ।

वापीकूप तडागैश्च दिव्यारामैर्विराजते ।।६०६।।

समन्ताच्च नदी यत्र विरजाफुल्लपंकजा ।

स्वच्छस्फटिकतोयौधा धावतोत्तुङ्ग सरङ्गिणी ।।६०७।।

स्वर्णरत्नमहातीर्था वज्रस्पटिक सैकता ।

भृङ्गपक्षीगणोद्घुष्ट कोलाहल समाकुला ।।६०८।।

प्रासादैः पार्षदेन्द्राणां विमानैर्विविधैस्तथा ।

चित्रशालोत्तमैर्दिव्यैर्हर्म्यजालैः सहस्रशः ।।६०९।।

उच्चैर्ध्वज पताकाग्रै रत्नकांचन चित्रितैः ।

ललनारत्न सङ्घैश्च तल्लोकं द्योततेऽधिकम् ।।६१०।।

श्री अयोध्या जी के उत्तर भाग में श्री महाविष्णु का परमधाम जो वेदों में अविचल रूप से निरूपित है वह महा वैकुण्ठ नाम का धाम

सुशोभित है। जिसकी स्वर्णमयी भूमि सर्वत्र रत्नों से मण्डित है, जो कुआ-बावली-तालाब तथा दिव्य बाग-बगीचों से सम्पन्न अत्यन्त रमणीय है। जो चारों ओर खिले हुए सुन्दर कमल पुष्पों से सुशोभित है, जो स्फटिक मणि के समान स्वच्छ जल से भरी हुई है, जो ललित तरङ्गों की माला से इठलाती हुई दौड़ रही है, जिसके महान् तट स्वर्णरत्नों की बालुका से अत्यन्त मनोहर लगते हैं, जो महान् तीर्थ स्वरूपिणी है, जो भौंरे तथा पक्षीगणों के कलरव के कोलाहल से भरपूर है, ऐसी श्री विरजानदी जहां प्रवाहित हो रही है। जो प्रभु के प्रिय परम श्रेष्ठ पार्षदों के दिव्य महलों से, विमानों से, विविध प्रकार की चित्रशालाओं से बड़े बड़े विशाल दिव्य भवनों से तथा हजारों स्वर्ण रचित तोरण-पताका-ध्वजा-वन्दनावार तथा रत्न कञ्चन जड़ित चित्र-विचित्र जालों से सुसज्जित हैं, ललनाओं में रत्न स्वरूप सुन्दर नारियों के संघों से वह दिव्यलोक अत्यन्त प्रकाश मान हो रहा है ।।९०५–२१०।।

हैरण्यं सुमहद्रत्नैः खचितं परमा युतम् ।
तत्रैकं भवनं प्रांशु प्रासादैः परिवारितम् ।।९११।।
सहस्रैः कलशैर्भातं ध्वजैश्चित्रैश्चकेतुभिः ।
मुक्तादामवितानैश्च चित्ररत्नगवाक्षकैः ।।९१२।।
महद्वज्रकपाटैश्च मणिस्तम्भैः सहस्रशः ।
रत्नाङ्गणं महाकक्षं भाति तल्लोक भूषणम् ।।९१३।।
तन्मध्ये शेषपर्यके नित्य सत्त्वैक विग्रहः ।
आस्ते नारायणो नित्य किशोरः सद्गुणार्णवः ।।९१४।।

उस वकुण्ठ के मध्य में एक सुवर्णमय महान् रत्नो से जटित परम श्रेष्ठ बड़े-बड़ प्रासादों से सुशोभित परम सुन्दर मन्दिर है। जो हजारों कलशों से सुसज्जित शिखरों से शोभित है। ध्वजा-पताका-चित्र विचित्र झंडे, मुक्ता मालाओं से सजाये हुए चन्दोवा वितान, चित्रों से सुशोभित अटारियां, महान् वज्र के रचे किमाड़, हजारों मणिरत्न स्तम्भों से सुशोभित दिव्य मण्डप, रत्नों का जड़ा हुआ प्राङ्गण, बड़े बड़े सभा भवन आदि से सुन्दर मनोहर परम रमणीय उस महा वैकुण्ठ में नित्य किशोर सद्गुणों के सागर श्रीमन्नारायण विराजते हैं ।।९११–९१४।।

मेघश्यामश्चतुर्बाहुस्तडित्पीताम्बरावृतः ।
श्यामस्निग्धालकव्रातैरुल्लसन्मुख पङ्कजः ।।६१५।।
महद्रत्नकिरीटेन कुण्डलाङ्गदकङ्कणैः ।
श्रीवत्सकौस्तुभाभ्यां च सुगन्धैर्वनमालया ।।६१६।।
वैजयन्त्योपवीतेन मुद्रिकाहारनुपूरैः ।
स्वर्णसूत्रेणकाञ्च्यादि भूषणैर्भूषितो विभुः ।।६१७।।
शंखचक्रगदापद्माद्यायुधैश्चाप्यलङ्कृतः ।
विभाति श्रीमतीभिश्व श्रीभूलालादि शक्तिभिः ।।६१८।।
विश्वक्सेनाद्यो नित्यमुक्ता मुक्ताश्च सूरयः ।
शुद्ध सत्त्वात्मका सर्वे श्यामलाङ्गाश्चतुर्भुजाः ।।६१९।।
दिव्यगन्धानुलिप्ताङ्गा पद्माक्षा पीतवाससः ।
सुकेशा सुस्मिता दिव्य माल्यालंकार भूषिताः ।।६२०।।
सर्वायुधधरा दिव्यललनायूथ सेविताः ।
भगवन्तं श्रिया जुष्टं सेवन्तेऽहर्निशं मुदा ।।६२१।।

वे बिजली के समान चमकते पीताम्बर पहने हुए हैं, मेघ के समान श्माम सुन्दर हैं, चार भुजा वाले हैं, काले चिकने घुंघराले बालों से उनका मुख कमल प्रफुल्लित हो रहा है, महान् रत्न जटित किरीट कुण्डल धारण किये हुए हैं, हाथ में बाजूबन्द तथा कड़े धारण किये हैं, श्री वत्स तथा कोस्तुभ मणि उनके हृनय में सुशोभित है, सुगन्धित वनमाला-वैजन्तीमाला यज्ञोपवीत तुलसी की माला पहने हुए हैं, मुद्रिका-हार-नूपुर-सोने की करघनी आदि विभूषणों से प्रभु सुशोभित है, शंख-चक्र-गदा-पद्म आदि आयुधों से अलंकृत है, श्रीदेवी-भूदेवी-लीलादेवी आदि श्रीमती महा शक्तियों से सुसेवित है, विश्वक्सेनादिक नित्य मुक्त तथा जीवनमुक्त दिव्य सूरियों से सुसेव्य है, वे सभी शुद्ध सत्वमय हैं, सभी घनश्यामल अंग वाले हैं, सभी चतुर्भुज हैं, दिव्य सुगन्ध से परिपूर्ण उनके श्रीअङ्ग हैं, कमल के समान नयन वाले हैं, सुन्दर केश वाले हैं, सुन्दर विहंसते मुखारविन्द वाले हैं, दिव्य मालायें तथा अलंकार धारण किये हुए हैं, सभी दिव्य आयुध धारण किये हुए हैं, ऐसे प्रभु के प्रिय पार्षद दिव्य

ललनाओं के यूथों द्वारा सुसेवित है, ये सब श्री लक्ष्मीजी के सहित श्रीमन्ना-रायण की सेवा में सदैव नित्य निरन्तर परायण रहते हैं ।।६१५–६२१।।

मिथिला चित्रकूटश्च श्रीमद्वृन्दावनं तथा ।
महावैकुण्ठमेतद्धि पञ्चमावरणे मुने ।।६२२।।

हे भरद्वाज मुनि ! इस प्रकार श्री साकेत धाम के चारों ओर पूर्व दिशा में मिथिला, दक्षिण में चित्रकूट, पश्चिम में श्रीमद् वृन्दावन तथा उत्तर दिशा में महा वैकुण्ठ ये चारों दिव्य धाम पञ्चम आवरण में विराजमान है ।।६२२।।

ततश्च परमानन्द सन्दोहं परमाद्भुतम् ।
अयोध्यायाः चतुर्दिक्षु चतुर्विंशति योजनम् ।।६२३।।
सर्वंतोवेष्टितं नित्यं स्वप्रकाशं परात्परम् ।
सच्चिदेकरसानन्दं मायागुणविवर्जितम् ।।६२४।।
वाङ्मनोगोचरातीतं प्रमोदारण्य संज्ञकम् ।
रामस्यातिप्रियं धाम नित्यलीला रसास्पदम् ।।६२५।।

तत्पश्चात् परमानन्द सन्दोह-परम अद्भुत्, श्री अयोध्या के चारों ओर चौबीस-चौबीस योजन विस्तार वाला, स्वतः प्रकाशित परात्पर, एकरस रहने वाला, माया के गुणों से रहित, मन वाणी इन्द्रियों की गति से परे, परम चिन्मय भगवान श्रीराम का अत्यन्त प्रिय धाम, नित्य लीलारस निकेतन, श्री प्रमोद वन है ।।६२३–६२५।।

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु क्रमेण तद्वने मुने !
गिरयः सन्ति चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु ।।६२६।।
आहलादिन्याश्च पूर्वस्यां दिशिद्योतत्प्रभाकरः ।
नीलरत्नमयो भाति शृङ्गाराद्रि मनोहरः ।।६२७।।
दक्षिणस्यां दिशिः श्री मद्रत्नाद्रिर्द्योतयन् वनम् ।
पीतरत्नमयः कान्त्या भूदेव्याभ्राजते प्रियः ।।६२८।।
प्रतीच्यां दिशि लीलाद्रिर्लीलया लालित प्रभा ।
राजते रत्नकोशाढयो रामस्यरति वर्द्धनः ।।६२९।।

श्रीदेव्या हि सुलीलार्थं मुक्ताद्रिर्मण्डितो महान् ।
उदीच्यामुज्वलो रत्नैश्चन्द्रकान्तैर्मनोहरैः ।।६३०।।

हे भरद्वाज मुनि ! उस प्रमोदारण्य के चारों ओर चार पर्वत हैं, उनका मैं क्रमशः वर्णन करता हूँ, आप प्रेमपूर्वक श्रवण करिए । पूर्व दिशा में अपने तेज से प्रकाशित, प्रभु की प्रिय आह्लादिनी शक्ति से सम्पन्न, सूर्य के समान तेजस्वी, नील रत्नमय परम मनोहर शृंगाराद्रि नाम का पर्वत है । दक्षिण दिशा में प्रभू की प्रिय शक्ति भूदेवी से सम्पन्न रत्नाद्रि सम्पूर्ण वन को प्रकाशित करता है, जो पीले रत्नों, खजानों से सुशोभित श्रीराम की प्रीति को बढाने वाला है । पश्चिम दिशा में श्री लीला देवी के लाड प्यार से लालित, दिव्य रत्नों के खजानों से परिपूर्ण श्रीराम के प्रेमरस को निरन्तर बढाने वाला लीलाद्रि है । उत्तर दिशा में उज्ज्वल रत्नमय, चन्द्रकान्त मणियों से परिपूर्ण, परम मनोहर श्रीदेवी के लीला-रस को बढाने वाला है उसका नाम श्रीमान् मुक्ताद्रि है ।।६२६–६३०।।

प्रमोदविपिने सन्ति वनानि मधुराणि च ।
वनानि द्वादशैतानि तन्नामानि शृणुस्व मे ।।६३१।।
श्रीशृंगारवनं भाति विहारवनमद्भुतम् ।
तमालं च रसालं च चम्पकं चन्दनं तथा ।।६३२।।
पारिजातवनं दिव्यमशोकं शोकहारकम् ।
तथानङ्गवनं रम्यं वनं श्रीनागकेशरम् ।।६३३।।
विचित्राख्यं वनं कान्तं कदम्बवनमेव च ।
द्वादशैतानि नामानि वनानि कथितानि ते ।।६३४।।
प्रमोदकाननं षष्ठमेतदावरणं महत् ।
तवभक्त्या प्रसन्नेन मयाप्रोक्तं द्विजोतम ।।६३५।।

इस प्रमोदवन में परम मधुर मनोहर बारह उपवन हैं उनके नाम मैं आपको श्रवण कराता हूँ, प्रेम से सुनिये । एक तो श्री शृंगारवन, दूसरा परम अद्भुत विहार वन, तीसरा तमाल वन, चौथा रसाल वन, पांचवां चम्पक वन, छठा चन्दन वन, सातवां पारिजात वन, आठवां दिव्य अशोक वन जो सम्पूर्ण शोक सन्ताप को हरण करने वाला है, नवाँ अनङ्ग वन, दशवां परम रम्य श्री नागकेशर वन, ग्यारहवां परम मनोहर

विचित्र वन तथा बारहवां कदम्ब वन है। हे द्विजवर ! ये प्रमोद वन के छठे आवरण में रहने वाले बारह वनों के नाम हमने आपके प्रेम से प्रसन्न होकर सुनाये हैं ।।६३१-६३५।।*

ततश्च सरितामादि कारणं सरयूः सरित् ।
श्रीमती शाश्वतीनित्या सर्वलोकैक पावनी ।।६३६।।
सच्चिद्घन परानन्दरूपिणी रामवल्लभा ।
विरजाद्याः परानद्यो यदंशाल्लोक विश्रुता ।।६३७।।
यन्नामोच्यारणात् सद्यो मुक्ता संसारबन्धनात् ।
प्राप्नुयुर्दिव्यदेहीश्व ससीतं रघुनन्दनम् ।।६३८।।
एवं श्रीसरयूरम्या परमानन्ददायिनी ।
सप्तमावरणं विद्धि साकेतस्य सरिद्वरा ।।६३९।।

उसके बाद सभी पावन नदियों की आदि कारण स्वरूपा नित्य अखण्ड अविनाशी, समस्त ब्रह्माण्ड को पावन करने वाली श्रीमती सरयू नदी सातवें आवरण में विराजमान हैं। जो सच्चिदानन्दघन स्वरूप वाली है, परमानन्द स्वरूपा श्रीराम की अत्यन्त प्यारी है। श्री विरजा आदि लोक विख्यात सभी नदियां जिनकी अंशकला विभूति हैं। जिसके पवित्र नाम का उच्चारण करने से भी मनुष्य तुरन्त संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है तथा दिव्य शरीर प्राप्त कर श्री सीता रघुनन्दन की सेवा का अधिकार प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार श्री साकेत धाम के सातवें आवरण में सरिताओं में परम श्रेष्ठ अतिरमणीय श्री सरयू नदी प्रवाहित हो रही है ।।६३६-६३९।।

---

*"प्रमोदवन वर्णन के प्रसङ्ग में इस अध्याय में लगभग १०० श्लोक हैं, जो ग्रन्थकार ने ग्रन्थविस्तार भय से यहां नहीं दिये हैं। प्रकरण की सङ्गति के लिये हमने भी कुछ ही श्लोक जो ग्रन्थ में नहीं थे, उद्धृत किये हैं जिनको अधिक जिज्ञासा हो—"श्रीरामानन्द साहित्य माला" से प्रकाशित "कल्याण कल्पद्रुम" तथा श्री वैष्णव धर्म प्ररोचक पं० श्री सरयू दास जी महाराज वीर वैष्णव प्रणीत "उपासनात्रय सिद्धान्त" "श्री साकेत-सुषुमा" श्री श्रीसाकेत महिमा तथा त्रिपाद विभूति साकेत दिव्य धाम इत्यादि ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिए।"

सप्तावरणमध्ये तु राजते रामवल्लभा ।
अयोध्यानगरी सच्चित्सान्द्रानन्दैक विग्रहा ।।६४०।।
इतीदंवर्णितं नित्यं सप्तावरण संयुतम् ।
रामधामैक सिद्धान्तं स्वरूपं मुनिसत्तम ।।६४१।।
पठेद्वा शृणुयान्नित्यं य एतद्भक्ति संयुतः ।
स गच्छेत्परमं धाम साकेतं योगिदुर्लभम् ।।६४२।।
ज्ञानं योगश्च ध्यानं च तपश्चर्यात्मनिग्रहः ।
नाना यज्ञाश्च दानानि सर्वतीर्थावगाहनम् ।।६४३।।
एतस्य पाठमात्रेण श्रवणेन च यत्फलम् ।
भवेत्तस्यकलां विप्र साहस्रामपि वाप्नुयुः ।।६४४।।

इन सातों आवरणों के मध्य में श्री रामजी की परम प्यारी सच्चिदानन्द स्वरूपिणी श्री अयोध्या नगरी विराजमान है। यह नित्य धाम के सात आवरणों के सहित श्रीराम जी के प्यारे धाम साकेत का वर्णन तथा उसका स्वरूप हमने वर्णन करके आपको सुनाया है। हे मुनियों में श्रेष्ठ भरद्वाज मुनि ! जो इसको प्रेमभक्ति से सम्पन्न होकर पढ़ता है अथवा श्रवण करता है वह योगीजनों को भी परम दुर्लभ श्रीरामधाम साकेत को प्राप्त कर लेता है। ज्ञान-योग समाधि-ध्यान पूजा, तपश्चर्या- आत्म संयम, अनेकों प्रकार के यज्ञ, दान, सभी तीर्थों का स्नान आदि सभी पुण्य फल एकत्रित होकर के भी इसका पाठ करने तथा इसकी कथा श्रवण करने से जो फल प्राप्त होता है उसके हजारवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकते हैं ।।६४०–६४४।।

श्री भरद्वाज उवाच—

तत्त्वामृतं पीतमनन्य चेतसा
सुधाधिकं त्वन्मुखनिर्गतं मया ।
धन्योऽस्म्यहं नाथ पद द्वयं प्रभो !
नमामि नित्यं च तवास्मि किङ्करः ।।६४५।।

श्री भरद्वाज मुनि महर्षि वशिष्ठ जी से कहते हैं कि–हे प्रभो ! आपके मुखारविन्द से अमृत से भी अधिक अत्यन्त मधुर तत्वरूपी

दिव्यामृत का हमने एकाग्रचित्त एवं अनन्य मनसे श्रवण किया है। हे नाथ! आपकी कृपा से मैं तो धन्य-धन्य हो गया। मैं आपके चरण कमलों का किंकर बारम्बार आपके श्री चरणों में प्रणाम करता हूँ ।।६४५।।

।। अथ रामप्रताप वर्णनम् ।।

रामस्त्वद् भुजदण्ड डिंडिम चमत्कारः प्रतापानलः
ज्वाला जर्जरकीर्ति पारदघटी विस्फोटिता बिन्दवः।
भोगीन्द्रा कतितारका कति कति क्षीराब्धयः कान्यपि-
प्रालेयाचल पाञ्चजन्यकरका कर्पूर कुन्दं तथा ।।६४६।।

हे राम! आपके भुजदण्ड का चमत्कारपूर्ण डिंडिम घोष जो सर्वत्र व्याप्त हो रहा है, उसके प्रताप रूपी अग्नि की ज्वाला से कीर्ति-स्वरूपी पारद वटी जर्जर होकर फूट गयी (पारा अग्नि के संसर्ग से उड जाता है, अतः यहां कीर्ति को पारद वटी की उपमा दी गई जो प्रभु के प्रतापानल की ज्वाला की गरमी से फूट कर सर्वत्र उडने लगी है।) उसके ब्रिन्दु चारों ओर त्रिभुवन में उड़कर व्याप्त हो गये, उससे कितने तो श्वेत भोगिन्द्र, कितने तारागण, कितने-कितने क्षीर समुद्र, कितने प्रलय में भी अविचल रहने वाले पर्वतराज, कितने कपूर-कन्द तथा कितने पाञ्च-जन्य के समान श्वेत सुन्दर शंख बनाने वाले संसार में प्रकाशित हो रहे हैं ।।६४६।।

अत्युक्तौ परितप्त कुप्यति मृषावादं नवेम्मन्यसे-
तद्धूमोऽद्भुत कीर्तनेन रसना केषां न कंडूयते।
राम! त्वन्नरुणप्रतापदहन ज्वालावली शोषिता-
सर्वे वारिधयस्तवरिपुवधूनेत्राम्बुभिः पूरिता ।।६४७।।

अतिशयोक्ति कहने से तो वाणी कुपित ही होती है, झूठमूठ बोलना तो किसी को पसन्द ही नहीं है, यह तो आपका सुयश ही ऐसा है जिसका वर्णन करने में किनकी जीभ सुगबुगाती खुजलाती नहीं

है ? अर्थात आपके गुणगान करने को कौन नहीं चाहता है ? हे राम ! सच्ची बात तो यह है कि आपके प्रताप की लाली ने ऐसा प्रभाव दिखाया कि सभी समुद्र उसकी ज्वालमाला से सूख गये, ये जो पुनः भरे हुए सागर दीखते हैं, वे तो आपके शत्रुओं की ललनाओं के रुदन से जो आंसुओं की धारा बहने लगीं उससे पुनः भर गये हैं ।।६४७।।

खद्योतद्युतिमातनोति सचिता जीर्णोर्णनाम्मालवः
छायायामायते शशीमशकतामायाति कारादयः
इत्थं वर्णयतोनभस् त्वद्‌यशो यातं स्मृतेर्गोचरं-
तच्चास्मि अमरायत्ते रघुपते वाचस्ततो मुद्रिता ।।६४८।।

हे श्रीरघुनाथ जी ! आपके यश के आगे सूर्यनारायण खद्योत (जुगनु) के समान लगने लगे और सब ग्रह भी जीर्ण-शीर्ण से दीखने लगे । चन्द्रमा तो मच्छर जैसा बन गया और नित्य प्रति घटता-बढता रहता है, इस प्रकार के आपके सुयश का वर्णन करते-करते आकाश भी अन्तर्ध्यान हो गया, अभी तक किसी को दीखता नहीं है, केवल उसकी स्मृति मात्र रह गयी है । इसलिये आपके ऐसे दिव्य सुयश का गान करने के लिये मेरी वाणी भी मेरे हृदय मन्दिर में बन्द हो गयी है, अर्थात् बोलना तो चाहती है, परन्तु अपनी असमर्थता से विवश है ।।६४८।।

कृत्वामेरुमुलूखलं रघुपते वृन्देन दिग्योषितां-
स्वर्गङ्गामुशलेन क्षालयद् इव त्वत्कीर्तयः खण्डिता ।
तासां राशिरसौ तुषारशिखरो तारागणास्तत् कणाः
प्रोद्यत्पूर्ण सुधांशुबिम्बमसृणज्ज्योत्स्नाश्च तत्पांशवः ।।६४९।।

आपकी कीर्ति देवताओं की कीर्ति से अत्यन्त श्रेष्ठ हो गयी, इसलिये ईर्ष्यालु स्वभाव के वशीभूत होकर देवाङ्गनायें उसको सुमेरु पहाड़ की ओखली और सुर-गंगा का मूसल बना कर कूटने लगी, परन्तु आपकी कीर्ति के जो टुकड़े-टुकड़े हो गये, उन खण्डित कीर्ति के टुकड़ों का जो ढेर लग गया वही श्वेत हिम शिखरों से सुशोभित हिमालय बन गया और इधर-उधर जो उसके टुकड़े उड़े वे सब आकाश के तारा बन गये । आकाश में भी उसकी ज्योति के जो रज कण सिमिट कर इकठ्ठा हो गये वह चन्द्रमा बन गया जो अमृत का निधान है, हे राम ! धन्य है आपकी यह अजर अमर कीर्ति ? ।।६४९।।

समुद्गतौ यत् समकालमेव यशः प्रतापौ तव पुण्यवन्तौ ।
रामारिबाणाश्च मदश्चशेषस्त्वद् खड्गतीर्थंतदनिष्टशान्त्यै ।।६५०।।

हे राम ! आपका यश और महान् पुण्यस्वरूप आपका प्रताप दोनों जब एक ही समय प्रकट हुए तब आपके शत्रुओं के बाण तथा उनका अहंकार दोनों अपने अनिष्ट की शान्ति के लिये आपके खड्गरूपी तीर्थ में अपना शरीर छोड़कर पावन बन गये। अर्थात् आपके सुयश के आगे उनका अहंकार तथा आपके प्रताप के आगे उनके बाण अस्त्र-शस्त्र सब व्यर्थ हो गये; शत्रु भी आपके शरणागत हो गये ।।६५०।।

कैलाशेनिलयः तुषारशिखरी विन्दिर्गिरीशः सखा-
स्वर्गङ्गा गृहदीर्घिका हिमरविश्चन्द्रोपलोदर्पणः ।
क्षिर्णाचिनवपूर्तकं किमपरं शेषस्तुशेषस्त्विषो-
यस्या स्यादिह राघवक्षितिपते कीर्तेस्तटाकस्तव ।।६५१।।

हे राघवेन्द्र प्रभो ! हे पृथ्वीनाथ ! आपकी कीर्ति के प्रताप को देखकर हिमालय ने कैलाश में आश्रय लिया, पर्वतराज का सखा हुआ, आकाश गंगा अपने घर में (शंकर जी की जटा में) छिप गयी। सूर्य शीतल पड़ गये, चन्द्रमा पत्थर दर्पण के रूप में हो गये। अग्निदेव का तेज क्षीण हो गया, शेष जी की किरणें भी निःशेष समाप्त हो गयी, ऐसी आपकी कीर्ति का प्रभाव है ।।६५१।।

श्री हनुमन्नाटके—

राम राम महावीर के वयं गुणवर्णने ।
यत्कीर्ति कामिनी भाले कस्तूरीतिलकं नमः ।।६५२।।
लक्ष्मीस्तिष्टति ते गेहे वाङ् विभाति सरस्वती ।
कीर्तिः किं कुपिताराम ! येन देशान्तरे गता ।।६५३।।

हे राम ! हे रघुवीर महावीर राम ! हम सब आपकी गुणावली का क्या वर्णन करें ? जिसकी कीर्ति रूपी कामिनी के ललाट में ये आकाश नील बिन्दु कस्तूरी के तिलक के समान दीखता है। प्रभो ! लक्ष्मी जी आपके घर में विराजती हैं, सरस्वती जी आपकी वाणी को सुशोभित करती हैं, परन्तु न जाने आपकी कीर्ति क्यों कुपित हो गयी है कि वह

आपके घर का त्याग कर देश-देशान्तर में चली गयी है ? अर्थात् आपकी कीर्ति सर्वत्र व्याप्त हो गयी है ।।६५३।।

ब्रह्मरहस्ये ब्रह्मवाक्यम्—

शीलाचारः परमपुरुषः पावनः पापहर्त्ता-
कर्ता-भर्ता विलसति यशसा सुव्रतः श्रेष्ठधाम ।
वीर प्राणः पुरजनहितो भासते वंशदीपः
श्रीपः श्रीदः मुदित सुख भूः राघवो मे च रूपः ।।६५४।।
विद्वान् कान्तो धनुरिषुधरश्चर्म तूणीर बद्धः
मुक्तामालः सुमुकुट शिरोभानु कोटि प्रकाशः
षड्गी स्रग्वील लततिलकः स्वर्णयज्ञोपवीती-
चिन्होरस्कोमणिगणधरश्चन्दनार्द्धाचिताङ्गः ।।६५५।।
श्यामाम्भोजस्वरूपः सुललितवदनः पद्मपत्रारुणाक्षः
श्रीमानाजानुबाहू रिपुदलदलनोगूढजत्रुर्महात्मा ।
कम्बूग्रीवो मनस्वी मति गति गमितः स्निग्धवर्णः प्रतापी-
तेजस्वी पीनवक्षो शुचिरुचिरचितोधीरगम्भीरनादः ।।६५६।।
मेधावी चारुभाषी बहुगुणसदनः सत्यवाक्यो महात्मा-
धर्मज्ञो ज्ञानमुद्रो विपुलबलभुजः शोभनाढ्यो यशस्वी ।
ईशः सक्रोधहर्त्ता निगमनिगदितःशीलपाथोधिराशिः
तेजस्वी पीनवक्षा शुचिरुचिचरितो धीरगंभीरनादः ।।६५७।।

ब्रह्मरहस्य ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी का वचन है कि—श्रीरामजी शीलाचार सम्पन्न परम पुरुष हैं, परम पावन अतएव पापों को हरण करने वाले हैं, संसार के कर्त्ता-भर्त्ता हैं, सुन्दर व्रत धारण करने वाले श्रेष्ठता के धाम हैं, वीर हैं, वीरों के प्राण रक्षक हैं, पुरजनों का प्रजा का परम हित करने वाले हैं, रघुवंश के दीपक हैं, श्री की रक्षा करने वाले तथा श्री प्रदान करने वाले हैं, हमारे श्री राघवेन्द्र समस्त सुखों का निवास स्थान रूप हैं । विद्वान हैं, कान्तकमनीय हैं, धनुषबाण धारण करने वाले हैं,

कंधे में भाथा तूणीर बांधे हुए हैं। खड्ग हस्त हैं, माला पहने हुए हैं। ललाट में परम ललित तिलक धारण किये हुए हैं, ललित मनोहर वस्तुओं के तिलक स्वरूप हैं। पीली सुनहले रंग की यज्ञोपवीत धारण किये हुए हैं, श्रीवत्स के चिन्ह से वक्ष स्थल सुशोभित है, मणियों को धारण किये हुए चन्दनादिक से अर्चित देहधारी हैं। श्याम कमल के समान सुन्दर स्वरूप हैं, ललित मनोहर मुखारविन्द हैं, कमल के समान खिले हुए विशाल नयन हैं, श्रीमान् हैं, आजानु बाहु हैं, शत्रुओं के समूह का विनाश करने वाले हैं, गले की हँसुली छिपी हुई है, महान् आत्मा है, शंख के समान कंठ है, मनस्वी है, निश्चल मन के हैं, जिनकी मति तथा गति सन्मार्ग में ही गमन करती है, सुन्दर चिकनी चमकती वर्ण की कान्ति है, प्रतापी तथा तेजस्वी है, विशाल जिनका हृदय है, पवित्र रुचिर चित्त वाले गम्भीर बोलने वाले हैं। मेधावी, प्रिय मधुर वाणी बोलने वाले, अनेकों गुणों के भण्डार सत्यवादी महात्मा है, धर्मज्ञ, ज्ञानमुद्रा से विराजमान, अत्यन्त बलिष्ठ भुजाओं वाले शोभा के सागर, यशस्वी, सबके शासक, क्रोध से आक्रान्त का विनाश करने वाले, वेद-वेदान्त प्रतिपाद्य, शील सन्तोषादिक कल्याणमय गुण-गणों के सागर, महान् तेजस्वी तथा परम रुचिर पवित्र चरित्र वाले धीर-गम्भीर श्रीराम हैं ।।९५४–९५७।।

प्राज्ञोयज्वा प्रजेशो बलिबलरतिमान् कोटि कामाभिरामः
नीतिज्ञः संयतात्मा त्रिभुवनजनको नीतिमान् न्यायकर्ता।
सर्वज्ञः सर्वदर्शी सकलजनहितो हेतुरूपो देवालुः
सर्वेशःसद्भिरिज्यो मुनिगुणसुखदो ब्राह्मणानामुपाध्यः ।।९५८।।
सुश्रीर्वेदान्तवेद्यो विलसित हृदयः सर्वशास्त्रार्थगम्यः
शूरःसाधुरदीनः सुजनहिततमः आन्विक्षीकी तर्कविद्यः।
तन्त्री नादी विलसितशुभबहुर्गम्भीरनादः पुमान्-
प्रीतः प्रीतिविवर्धनःसुखनिधिर्लीलावतारोमहान् ।।९५९।।

प्रभु के पावन गुणों का वर्णन करते हुए ब्रह्माजी कहते है कि–हमारे ईष्टदेव श्रीराम, प्रज्ञा सम्पन्न, यज्ञ करने वाले, प्रजा के ईश्वर, बलवानों के बल प्रदाता, करोड़ों कामदेव से भी मन को हरण करने वाली अत्यन्त प्रीति-सम्पन्न, नीति-विशारद, आत्मा को संयम में रखने वाले,

तीनों भुवन के पिता, नीति सम्पन्न, न्याय करने वाले, सर्वज्ञ, सभी को देखने समझने वाले, सभी प्राणी मात्र सचराचर का हित करने वाले, सभी के कारण स्वरूप, परम दयामय, सर्वेश्वर प्रभु सज्जनों द्वारा पूजनीय, मुनिजनों को सुख देने वाले तथा ब्राह्मणों के उपास्य देव हैं। सुन्दर कल्याणप्रद श्री से सम्पन्न हैं, वेदान्त द्वारा जाने जाते हैं, विशाल उदार हृदय वाले हैं, सभी शास्त्रों के द्वारा जिनके रहस्य को जाना जाता है, शूरवीर, परम साधु हृदय, दैन्यता–कायरता से रहित, सज्जनों के परम हितकारी, ब्रह्मविद्या तथा तर्कविद्या में पारङ्गत, वीणा आदि बाजा बजाने वाले, गाना गाने वाले, आलापक करते हुए हास विलास परायण, परम शुभ, अति गम्भीर नाद करने वाले महापुरुष, परम प्रसन्न प्रेमियों की प्रीति को बढ़ाने वाले, सुख के निधान तथा महान् लीलाओं को करने के लिए अवतार लेने वाले मेरे प्रभु श्रीराम हैं ।।९५८–९५९।।

संधाताप्रियदर्शनः सुचरितो वाग्मी सदानन्दिनः
 तत्त्वज्ञान जितेन्द्रियो मृदुतनुर्विद्यामयोरूपवान् ।
सुश्रीमान्जगदीश्वरो नरवरो राजाधिराजेश्वरः
 दातासर्वसुरात्मको दुरतिहा पुण्यान्वितः शाश्वतः ।।९६०।।
क्षोणीपाल उदारकीर्तिरमलः कल्याणकर्ता स्वभूः
 ज्योतिरूपः प्रकृति पुरुषो विश्ववृक्षः सहिष्णुः ।
विश्वक्सेनः सुलभवसुदः सद्गतिर्दानपालः
 योगानन्दस्त्रिभुवनपतिर्विश्वरूपो विधाता ।।९६१।।
दातादक्षोरघुकुलपतिर्यज्ञभूर्गम्यलीलः-
 स्वस्थः स्वच्छः सुललितवचनश्चारु कौमारमूर्तिः
सुश्रेयश्चारु भालो ललितगलतको गण्डसुश्रीकपोलः
 सुग्रीवो दीर्घकेशः सुचिबकरचितः स्वाधरश्चारुनासा-
शुद्धात्मा सुभ्रवेषो विशद्दशनः सुन्दरोवीरवेषः ।।९६२।।

जो सबके सम्यक् प्रकारेण विधाता हैं, जिनके परम प्रिय दर्शन हैं, जो बड़े ही सच्चरित्रवान हैं, जो बोलने में अत्यन्त चतुर हैं, जो सदा आनन्दमय रहते हैं, तत्वज्ञान निपुण हैं, अतएव इन्द्रियों को जीत कर

अपने वश में रखने वाले हैं, अत्यन्त सुकुमार मृदुल शरीर वाले हैं, विद्या के निधान हैं, मनोहर स्वरूपवान हैं, सुखद सुन्दर श्री से जो सम्पन्न हैं, जगत के ईश्वर तथा नर लीला में नरेश्वर हैं, राजाओं के भी राजाधिराज चक्रवर्ति सम्राट हैं। दाता हैं, सभी देवताओं के साक्षात निवास स्वरूप हैं, दुर्गति का हरण करने वाले, महान् पुण्य सम्पन्न, अखण्ड एकरस रहने वाले शाश्वत ब्रह्म हैं। पृथ्वी के पालन करने वाले, उदार कीर्ति वाले, परम निर्मल, कल्याणप्रद कार्य करने वाले, स्वयं प्रकट, ज्योतिः स्वरूप, परा प्रकृति के भी पुरुष स्वामी, विश्ववृक्ष के बीज, अत्यन्त सहन करने वाले, विश्व कसेन, प्रेमियों को परम सुलभ, दिव्य नित्य धन-प्रदायक, सद्गति देने वाले, महादान को पालन करने वाले, योगानन्द की अनुभूति प्रदान करने वाले, त्रिभुवन पति, विश्व स्वरूप, विधाता हैं। दिव्यदान दाता हैं, परम चतुर रघुकुलपति हैं, यज्ञ के हविष्यान्न से प्रकट होने वाले, प्रत्यक्ष इन्द्रिय गोचर लीला ललित नाटक करने वाले, अत्यन्त स्वस्थ-स्वच्छ-सुन्दर ललित मधुर बचन बोलने वाले, परम सुन्दर, सुकुमार मूर्ति, सुन्दर कल्याण श्रेय स्वरूप, सुन्दर ललाट वाले, ललित गले वाले, सुन्दर गोल सुच्चिकन कपोल वाले, सुन्दर कण्ठ प्रदेश तथा लम्बे-लम्बे काले घुंघराले केशवाले, सुन्दर ठोडी वाले, सुन्दर ओष्ठ तथा अति रमणीय मनोहर नाक वाले, शुद्ध आत्म स्वरूप सुन्दर वेश तथा सुन्दर दांतों से सुशोभित सुन्दर वीर-वेश धारी श्रीराम हैं॥९६०-९६२॥

श्रीराम परत्वे आचार्य वचनम् —

> सच्चिद्रूप गुणस्वरूप विभवैश्वर्यैक दिव्यं वपुः
> नित्यानन्द गुणानुभाव करुणा सौन्दर्यशुद्धोदधिः।
> त्र्यन्तप्रतिपाद्य वस्तुघटने कर्त्ता स्वतन्त्रः स्वतः
> जातश्चण्डकरान्वये विजयते श्रीजानकीशो विभुः॥९६३॥

जो सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, सम्पूर्ण कल्याण गुणगणों के साक्षात स्वरूप हैं जिन्होंने विभवावतार में भी समस्त ऐश्वर्य मय दिव्य विग्रह धारण किया है, जो नित्य दिव्य आनन्दमय गुणों के भाव-अनुभाव-विभाव करुणा सौन्दर्यादिकों के विशुद्ध समुद्र हैं, जो वेद-वेदान्त प्रतिपाद्य हैं, जो संसार रचना के लिए सभी वस्तुओं का संघटन स्वयं अपनी स्वतन्त्र सत्ता से करते हैं, अतः संसार के स्वतन्त्र कर्त्ता हैं, जो प्रेमभक्ति के वशीभूत

होकर सूर्यवंश में प्रकट हुए हैं ऐसे श्री जानकी जी के प्राणनाथ प्रभु श्रीराम का सदा विजय हो ।।६६३।।

।। अथ अन्य आचार्याणाम् कथनम् ।।

कौशल्या जननी पिता दशरथः संरक्षणो लक्ष्मणः-
शत्रुघ्नो भरतानुजो जनकजा जाया वशिष्ठो गुरुः ।
सुग्रीवश्च विभीषण प्रियसखा मान्यो हनूमान् महान्-
साऽयोध्या नगरीसुतो कुशलवौ श्रीरामदासा वयम् ।।६६४।।

श्री कौशल्या जिनकी माताजी हैं, श्री दशरथ जी जिनके पिता हैं, जिनके संरक्षण सेवा का गुरुता भार श्री लक्ष्मण जी करते हैं, श्री भरत जी तथा श्री शत्रुघ्न जी जिनके भ्राता हैं, श्री जनकराज नन्दिनी जिनकी प्राण वल्लभा है, श्री वशिष्ठ जी जिनके गुरुदेव हैं, सुग्रीवजी तथा विभीषण जी जिनके प्रिय सखा हैं, श्री हनुमान जी जिनके माननीय प्रिय मन्त्री हैं, जो अयोध्या नगरी के नाथ हैं, जिनके कुश और लव सुपुत्र हैं, उन्हीं श्रीराम जी के हम सब दास हैं ।।६६४।।

रामः पिता राघव एव माता रामश्च बन्धुश्च सखा ममैव ।
रामो गुरुर्मे परमं च दैवं रामं विना नान्यमहं विजाने ।।६६५।।

श्रीरामः सकलेश्वरो ममपिता माता च सीता मम,
भ्राता ब्रह्मसखा प्रभंजन सुतः पत्नी विरक्तिः प्रिया ।
सुग्रीवश्च विभीषणः प्रियसखा मित्राणि बौद्ध सुतौ-
भक्ति श्रीहरिसंगिनी च तनया साकेतमस्मत् पदम् ।।६६६।।

श्रीराम मेरे पिता हैं, श्री राघव ही माता है, मेरे बन्धु और सखा भी श्रीराम ही हैं, मेरे गुरु तथा परम इष्ट देवता भी श्रीराम हैं। श्री रामजी के बिना मैं अन्य कुछ भी नहीं जानता हूँ। सर्वेश्वर पर ब्रह्म श्रीराम मेरे पिता हैं, जगदम्बा श्री जानकी जी मेरी माता है, पवनकुमार श्री हनुमान जी मेरे भाई हैं तथा वैराग्य भावना से भरपूर विरक्ति ही मेरी प्राण प्रिय पत्नी है, श्री सुग्रीव जी विभीषण जी आदि मेरे परमप्रिय सखा हैं, सद्बुद्धि के पुत्र सद्विचार सदाचार आदि मेरे मित्रजन है, श्री हरि की सहचरी पावन भक्ति मेरी दुलारी पुत्री है तथा श्री साकेत धाम हमारा नित्य निवास करने का परम पद दिव्य स्थान है ।।६६६।।

श्रीरामं जगदेकवीरममलं सीतामनो नायकं-
कौशल्या वरनन्दनं रघुवरं काकुत्स्थवंशोद्भवम् ।
लोकानामभिराम मंगलगुणं व्यापार रामं परं-
वन्देऽहं जनघोरपावकनिभं पद्मासनं राघवम् ।।६६७।।

जो समस्त संसार में एक मात्र अप्रतिम महान् वीर हैं, जो निर्मल निर्विकार स्वरूप है, जो श्री सीताजी के मन को मोहित करने वाले उनके प्राणप्रिय पति हैं, जो कौशल्या के परमश्रेष्ठ सुपुत्र हैं, जो रघुनन्दन राम काकुस्थ कुल में प्रकट हुए हैं जो सभी लोकों को आनन्द देने वाले अभिराम स्वरूप हैं, जो सम्पूर्ण मङ्गलमय गुणगणों के आगार हैं, जो परात्पर परब्रह्म श्रीराम नाम से विख्यात हैं, जो घोर क्रूर कर्म राक्षस जनों को जलाकर भस्म करने वाले अग्नि के समान हैं, ऐसे पद्मासन पर विराजमान श्री राघवेन्द्र प्रभु की मैं वन्दना करता हूँ ।।६७६।।

सत्यंतारकत्त्वमोमिति मनः स्थूलं चतुष्पादकं-
जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिगंस्मृतिवशात् विश्वाद्यतीतं विभुम् ।
भूमाशान्तमुपास्यमानममरैः स्तुत्यस्तुरीयात्मकं-
भक्तानुग्रहतत्परं जनकजाजानिं भजे राघवम् ।।६६८।।

जो परम सत्य तारक तत्व स्वरूप हैं, जो ॐकार शब्द वाच्य हैं, जो त्रिपाद विभूति तथा विराट् स्थूल चतुष्पाद विभूति के नायक हैं, जो जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति सभी अवस्थाओं में विराजमान हैं, जो स्मरण करने से वशीभूत हो जाते हैं, जो विश्व के सम्पूर्ण विकारों से परे गुणातीत हैं, जो विभू व्यापक स्वरूप हैं, जो साक्षात् भूमा पुरुष हैं, जो शान्त चित्त योगीजनों तथा देवताओं द्वारा उपासनीय है, जो स्तुति करने योग्य तुरीया रूप हैं, जो भक्तों के ऊपर परम अनुग्रह करने वाले सदैय कृपा पराधण हैं, ऐसे जानकी वल्लभ श्रीराघवेन्द्रराम का मैं निरन्तर भजन करता हूँ ।।६६८।।

यः शब्दे परिनिष्ठितोऽध परमे ब्रह्मण्यतिन्यायतः-
तत्कारुण्य सुधौघबिन्दुकणिका संसारतापापनुत् ।
यद्गाम्भीर्यमगाधमप्यनुचरैर्गाधं समाश्रीयते-
तस्यश्रीगुरुराघवस्य चरणद्वन्दारविन्दं नुमः ।।६६९।।

जो शब्द ब्रह्म वेदों में अत्यन्त निष्ठावान हैं, जो परमब्रह्म परमात्मा में अत्यन्त प्रीतिमान हैं, जो न्याय नीति के पालन करने वाले हैं, जिनकी गम्भीरता अत्यन्त अगाध अपार होते हुए भी अपने चरणाश्रितों के लिये अथाह न होकर परम सुलभ हो जाती है, जिनके करुणा रूपी अमृत रस का एक बिन्दु मात्र कणिका प्राप्त हो जाने से भी संसार का असह्य दुस्तर पाप-संताप नष्ट हो जाता है, ऐसे मेरे परम गुरु श्री राघव के युगल श्री चरणारबिन्दों को मैं नमस्कार करता हूँ ॥६६६॥*

रामोऽस्मीत्यविपन्नधीरविरतं रामं भजेन्तर्दधे-
यद्रामेणनियुक्तमेतदखिलं रामायपर्यर्पयेत् ।
रामादेतदभिन्नमेव चरितं को वेत्तिरामस्यतद्-
रामेसर्वमिदं बिलीयत इतो राम त्वमेव प्रभुः ॥६७०॥

मैं राम ही हूँ ऐसी जिसकी निरन्तर सुनिश्चित अविचल मति है, जो राम को अपने अन्तःकरण में सदैव ध्यान करता है। यह जो कुछ है श्रीराम के द्वारा नियुक्त है, अखिल ब्रह्माण्ड में वही सब कुछ होता है। इसलिये अपना जो कुछ हो श्रीराम के लिये अर्पण करे। श्रीराम से यह सब अभिन्न है, श्रीराम के उस दिव्य चरित्र को कौन जानता है? ये सब कुछ अन्त में श्रीराम में हीं विलीन हो जाता है। हे राम! आप ही एक मात्र सबके प्रभु हैं ॥६७२॥

कार्कस्यं दशकन्धरो रघुपतेः सन्मार्दवं मैथिली-
दातृत्वं च बिभीषणो बहुविधं स्नेहं पुनर्लक्ष्मणः ।
स्वामित्वं हनुमानुपैत्युपकृतं देवा वियोगं पिता-
कोपानुग्रहमम्बुधिर्बयमपि प्रेमांघ्रिजं साम्प्रतम् ॥६७१॥

श्री रघुनाथ जी की कठोरता दशग्रीव रावण जानता है, श्रीराम की सुकुमारता श्री मिथिलेश राजकुमारी जानती हैं, श्रीराम की दानशीलता विभीषण जानते हैं तथा श्रीराम के स्नेह के अनेकों प्रकार के स्वरूपों को श्री लक्ष्मण जी जानते हैं। श्रीराम के स्वामी पने का परम सुख श्री हनुमान जी जानते हैं। श्रीराम की परोपकार परायणता को

---

*यह श्लोक जगदगुरु श्री रामानन्दाचार्य भगवान् प्रणीत अपने आचार्य श्री स्वामी श्री राघवानन्दाचार्य जी की वन्दना का है ऐसा अनेकों विद्वानों का कथन है।

देवगण जानते हैं। श्रीराम के वियोग का असह्य दुःख श्री दशरथ जी जानते हैं। श्रीराम के प्रचण्ड कोप तथा परम अनुग्रह को समुद्र जानता है तथा प्रभु के श्री चरण कमलों में प्रेम करने का परम सुख इस समय हम सब उनके श्री चरणानुरागी भक्तजन जानते हैं ।।६७१।।

जानाति राम तव नामरुचिं महेशो-
जानाति गौतमसती चरणप्रभावः ।
जानाति दोर्बल पराक्रममीशचापो-
जानात्यमोघपटुबाणगतिं पयोधिः ।।६७२।।

हे राम ! आपके दिव्य नाम की प्रीति महादेव शंकर जी जानते हैं। आपके चरण रज का प्रभाव गौतम नारी अहिल्या जानती है, आपकी भुजाओं का बलिष्ठ पराक्रम शंकर जी का धनुष जानता है तथा आपके अमोध बाण की गति का विलक्षण प्रभाव समुद्र जानता है ।।६७२।।

वदतु वदतु वाक्यं राम रामेति नित्यं–
भजतु भजतु चित्तं रामपादाम्बुजं मे ।
पततु पततु देहो रामसंचिंतनेन
न भवति मम चान्यं जन्म जन्मान्तरेऽपि ।।६७३।।

भक्त अपनी भावना ऐसी रखते हैं कि–मेरी रसना निरन्तर राम-राम की ही रटना लगावे । मेरा चित्त श्रीराम चरणारविन्दों का ही भजन करे-ध्यान किया करे। मेरा यह शरीर श्रीराम का चिन्तन स्मरण करते हुए ही गिर जाय, मेरे इस जन्म में अथवा अन्य जन्मान्तर में भी श्रीराम के बिना अन्य कुछ भी कभी भी मेरे मन एवं शरीर पर अधिकार न करने पावे ।।६७३।।

माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः
स्वामी रामो मत्सखा राघवेन्द्रः ।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं-
जाने नैव जानेति त्रिलोक्याम् ।।६७४।।

मेरी माता श्रीराम हैं, मेरे पिता श्री रामचन्द्र जी हैं, मेरे स्वामी श्रीराम हैं, मेरे सखा भी श्री राघवेन्द्र प्रभू ही हैं, मेरा सर्बस्व प्राण धन परम दयालु श्रीरामचन्द्र जी हैं, मैं और कुछ भी नहीं जानता हूँ, त्रिभुवन में उनके बिना मैं कुछ भी जानना भी नहीं चाहता हूँ ।।६७४।।

तर्तुं संसृति वारिधिं त्रिजगतां नौर्नाम यस्य प्रभोः
येनेदं सकलं विभाति सततं जातस्थितं संहृतम् ।
यस्मिन् तु निगमा भवन्ति न मनोभावं चराधीश्वरे-
तं वन्दे सहज प्रकाशममलं श्रीरामचन्द्रं परम् ।।६७५।।

तीनों लोक में जिनका नाम संसार सागर से तारने वाली समर्थ दृढ नौका के समान है, जिस प्रभु के प्रभाव से यह सब प्रकाशित हो रहा है, जिसके द्वारा यह जगत् उत्पन्न होता है. स्थिर रहता है तथा विलीन होता है, जिसमें सभी वेद पुराण आगम-निगम अपने मन के भावों को समर्पण करते हैं, जो सचराचर का अधीश्वर है, उस सहज प्रकाश स्वरूप परमात्मा श्रीराम के निर्मल श्रीचरणों की मैं बारम्बार वन्दना करता हूँ ।।६७५।।

सौमित्र्याद्युरु शाखिको बहुविधिक्रीडाप्रवालोत्करः
कीर्त्युद्युत् कुसुमो भवार्तिशमनोच्छायः समन्तात्समः ।
भक्त्यानन्द फलप्रदो विभुरपि प्रेम्णा समालोकिते-
सीताकल्पलताङ्चितो विजयते श्रीरामकल्पद्रुमः ।।६७६।।

श्री लक्ष्मण-भरत-शत्रुघ्नादि जिसकी सुन्दर विपुल शाखायें हैं, अनेकों प्रकार के क्रीड़ा कौतुक हास-विलास जिस वृक्ष के चारों ओर बँधा हुआ सुन्दर आल वाल (घेरा हुआ चोतरा) है। कीर्ति रूपी खिले हुए मनोहर सुगन्धित जिसके फूल हैं, संसार के संताप पाप को हरण करने वाली चारों ओर फैली हुई जिसकी घनी छाया है, भक्ति प्रेम आनन्द रस से भरे हुए जो मधुर मीठे फल प्रदान करता है, जो सर्वत्र व्यापक होने से परम सुलभ है, जो प्रेमभरी दृष्टि से अपने आश्रय में आये हुए आश्रित को देखता रहता है, ऐसे श्री सीता रूपी कल्पलता से लिपटे हुए श्री राम रूपी कल्पवृक्ष की सदैव विजय हो ।।६७६।।

शिलादेः स्त्रीत्वादिर्विपरिणत्यद्भुतमिदं-
ततोऽप्येताच्चित्रं यत्तदुपदहनस्यैव हिमता ।
तृणस्यैवास्तृत्वं रिपुसुनिहतेरेव हितता-
पदत्राणेवेह त्रिभुवनपरित्राणमिति च ।।६७७।।

भक्त प्रार्थना करता है कि हे राम ! आपकी महिमा बड़ी विचित्र है कि–आपकी चरण धूलि पत्थरों को भी स्त्री (जड़ पत्थर को) अहल्या रूप चेतनता प्रदान करने में समर्थ है। यह एक महान् अद्भुत लीला है। पत्थरों को पानी पर तैरा देना क्या कम आश्चर्य की बात है। उससे भी परम आश्चर्य तो यह है कि अग्नि जो सबको जलाकर भस्म कर देता है उसको भी शीतल हिम बना देना, प्रहलाद जी को, हनुमानजी को तथा विभीषण की कुटिया को अग्नि भी जला न सकी, शीतल हिम के समान हो गयी। एक ओर आश्चर्य है कि तिनके को ब्रह्मास्त्र बना देना, काक जयन्त के लिये क्या आपने यह आश्चर्यमयी लीला नहीं की थी ? उससे भी आश्चर्य की बात है शत्रुओं का निधन हो उनके लिए परम हित कल्याणप्रद हो जाना अर्थात्मारकर भी राक्षसों को मोक्ष प्रदान "निर्वाणदायक क्रोध जाकर" "क्रोधोऽपि देवस्य वरेण तुल्यः" धन्य हैं प्रभो ! आपका पद-त्राण जो आपके श्री चरण कमलों को चोट-चपेट कांटा कंकर से बचाता है वह ऐसा समर्थ हो गया है कि वह सहज-सहज में ही त्रिभुवन के परित्राण में परायण रहता है। त्रिभुवन की रक्षा करता है अर्थात् जो आपके चरणपादुकाओं का आश्रय लेता है वह त्रिभुवन में सदैव सुरक्षित अतएब निर्भय होकर विचरता है। धन्य है, प्रभो ! आपकी सदैव जय हो ॥९७७॥

अनन्तायेवं वै तव विविधरूपाणि च विभो-
प्रवक्तुं तानीह प्रभवति न कोप्यत्र जगति ।
परात्मञ्छ्रीराम त्रिगुणरहिताकार परम
प्रभो पारावारामित गुणनिधे चिद्घन विभो ॥९७८॥

हे विभु ! सर्व व्यापक श्रीराम ! इस प्रकार आपके अनेकों प्रकार के अनन्तानन्त स्वरूप हैं, उसका भलिभांति वर्णन करने में इस संसार में कोई भी समर्थ नहीं हो सकता है। ऐसे त्रिगुणातीत परम दिव्य स्वरूप धारी पर ब्रह्म परमात्मा हे श्रीराम ! आपका कल्याणमय गुणों का समुद्र अगाध है, अपरम्पार है। हे प्रभो ! आपतो सच्चिदानन्दघन दिव्य स्वरूप हैं ॥९७८॥

कृशानुं शेषाद्यः शशधरयुतो बीजमिति ते–
भजन्ति ध्यायन्तस्तव चरणपङ्करुह युगम् ।

गृहे तेषां पद्मा विहरति मुखेगीः सुललिता-

सुभुक्त्वा भोगान्वै तववर पदं यान्तिं परमम् ।।६७६।।

हे राम ! अग्नि बीज के आगे आकर तथा ऊपर में चन्द्र बिन्दु लगाकर आपके मन्त्रराज का बीजाक्षर "रां" बनता है, उसका जो जप भजन करते हैं तथा अन्तःकरण में आपके युगल श्री चरण कमलों का ध्यान करते हैं, उनके घर में श्री लक्ष्मी जी सदैव निरन्तर विहार करती है तथा उनके मुख में ललित वाणी सरस्वती सदा विराजमान रहती है। वे भाग्यशाली जब तक संसार में जीवन धारण करते हैं, सुन्दर सुख भोग करते हैं तथा अन्त में आपके परम धाम श्री साकेत में जाते हैं ।।६७६।।

स्वबीजं शेषाग्नौ दहनमपरौ चैव पवनो--

नमोन्ता षड्वर्णा परमपद हेतुश्च भजताम् ।

इमं मन्त्रं यो वै जपति गुरुवक्त्रादधिगतं-

जगत्पूज्यो भोगान् भुवि परमदिव्यान् सलभते ।।६८०।।

जिस मन्त्र में प्रथम तो श्रीराम प्रभु का वीज मन्त्र अग्नि तथा शेष से सम्पन्न 'राँ" है, मध्य में अग्नि और पवन से संयुक्त "रामाय" है। अन्त में नमः पद है, इस प्रकार "राँ रामाय नमः" यह षडक्षर श्री तारक मन्त्र को श्री गुरु महाराज के मुखारविन्द से प्राप्त कर जो प्रतिदिन नियम पूर्वक जप करते हैं वे संसार में जगत्पूज्य होकर पृथ्वी के सुखद सात्विक भोग भोगते हैं तथा अन्त में परम दिव्य प्रभ के साकेत धाम को प्राप्त करते हैं ।।६८०।।

निजा व्यक्तेनेदं जगदखिलमिच्छादि करणैः

समुत्पन्नं कृत्वाऽवसि तु सततं रघुपते ।

युगान्ते सर्वं वै हरसि किल रौद्रेण वपुषा-

त्वमेकः सर्वात्मन् विहरसि न चान्यो गुणनिधे ।।६८१।।

हे रघुपति श्रीराम ! आप अपने अव्यक्त स्वरूप से एवं अपनी इच्छा सङ्कल्प मात्र से ही इस संसार को उत्पन्न करते हैं तथा आप ही उसका संरक्षण भी करते हैं। अन्त में आप ही रुद्रस्वरूप धारण कर संहार भी करते हैं। हे सर्वात्मन् ! अन्तर्यामी प्रभु ! हे गुण सागर श्रीराम ! ये सब आपके बिना अन्य कोई भी करने में समर्थ नहीं हैं, यह तो आपकी ही विचित्र लीला रचना है ।।६८१।।

कदाचिद् भौमान् वै गणयति कणान् कोऽपि मतिमान्–
तथा पारावारोदकलवचयान् वै रघुपते
क्वचिन्नक्षत्रौघं विपति गणनायां नयति वै–
गुणानां ते पारं गमयितुमलं नैव कुशलाः ।।६८२।।

यह हो सकता है कदाचित कोई महान् बुद्धिमान पुरुष इस भूमि के रज कणों का लेखा-जोखा लगाले, समुद्र के जल-बिन्दुओं की संख्या का हिसाब जोड़कर बतादें तथा कभी कोई आकाश के नक्षत्र ताराओं की गणना ठीक से बतादे, ये न होने वाली असंभव बातें भी कभी संयोग वश हो जांय तो कोई आश्चर्य नहीं हैं परन्तु कोई भी कुशल कवि आपके गुणगणों का पार पा जाय यह तो हो ही नहीं सकता है ।।६८२।।

नमस्ते श्रीराम त्वाममितगुणग्रामाय सततं–
नमो भूयो भूयः पुनरपि नमस्ते रघुपते ।
नमो वेदैर्वेद्याखिल मुनिगणाराध्य भगवन् ।
नमो भूयो भूयस्तव चरणपङ्केरुह युगे ।।६८३।।

हे अपरम्पार गुणगणागार श्रीराम ! आपको सतत काल सदैव निरन्तर नमस्कार है । हे रघुपति राम ! आपको बारम्बार नमस्कार है । हे वेद-वेदान्त वेध प्रभो ! आपको नमस्कार है । हे मुनिगणों के परमाराध्य भगवन आपको बारम्बार नमस्कार है । हे प्रभो आपके युगल श्री चरणकमलों में बारम्बार नमस्कार है ।।६८३।।

सहस्त्रैः शेषो वै प्रभवति न वक्त्रैर्गुणगणान्–
प्रवक्तुं चाकल्पं कथमपि च ते राम सततम् ।
अतस्त्वां कः स्तोतुं भवति कुशलः श्री रघुपते–
व्रजन्त्याकाशस्य क्वचिदपि च पारं हि मशकाः ।।६८४।।

जब हजारों मुख वाले शेष नारायण आपके गुण-गणों का भली-भांति वर्णन करने में किसी प्रकार भी समर्थ नहीं हो सकते हैं, तब हमारे जसे पामर जीव आपकी स्तुति करने में कुशलता कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? क्या कभी मच्छर भी उड़कर आकाश का अन्त पा सकता है ?

अर्थात् कभीं नहीं पा सकता, तो भी अपनी शक्ति भर उड़ता तो है ही। वैसे ही हम सब भी आपकी दी हुई अपनी शक्ति के अनुपात से ही आपकी कृपा से आपका गुणगान करने में समर्थ हो सकते हैं ॥६८४॥*

प्रहस्तखण्डे श्रीहनुमद्वाक्यम्—

कीर्तिः श्रीरघुवंशदीपभवतो दूतीमुरारेः प्रिया—
यस्मात्तुभ्यमदात्तदादि गिरिशोऽभूर्धनारीश्वरः ।
ब्रह्माभूच्चतुराननो सुरपतिश्चक्षुः सहस्रं दधौ—
स्कन्दोमन्दमतिश्चकारविवशः स्पर्शं स्त्रिया शंकितः ॥६८५॥

हे रघुवंश मणि ! मुरारी भगवान की प्राणप्रिया आपकी कीर्ति-रूपी दूती उन्होंने जब आपको समर्पण की तभी आदि देव शंकर जी चिन्ता के मारे अर्ध नारीश्वर बन गये, ब्रह्माजी के आश्चर्य चकित होकर चारों ओर देखने से चार मुख हो गये, देवताओं के राजा इन्द्र आंख फाड़-फाड़ देखने लगे तो उनको हजारों आंखें हो गयी, स्कंद तो विचारे क्या करना क्या न करना मन्द बुद्धि के कारण कुछ समझ ही न पाये, अर्थात् कीर्ति चाहने वाले सब देवता आपकी कीर्ति के सामने फीके पड़ गये ॥६८५॥

अष्टो वारिजि वृक्षयार्णवगतैः साकं व्रजंती मुहुः—
संसर्गाद् बडवानलस्य समभूदापन्न सत्वात् तडित् ।
मन्येराम तया क्रमेण जनितो युष्मत् प्रतापानलः
येनारातिवधू विलोचन जलैः सिक्तोऽपिसंवर्धते ॥६८६॥

हे प्रभो श्रीराम ! आपकी कीर्ति आठों प्रकार के मेघ मण्डल में जाकर मेघों के साथ समुद्र में जब पहूँची तब आपकी कीर्ति तथा वडवा-नल दोनों के संयोग से बिजली उत्पन्न होकर आकाश में चमकने लगी। हे रघुनाथ जी ! मैं तो यही मानता हूँ कि इसी प्रकार से क्रमशः आपका प्रचण्ड प्रतापानल प्रकट हो गया, जो आपके शत्रुओं की नारियों के निरन्तर रुदन करते हुए आँसुओं के जल छींटते हुए भी निरन्तर बढ़ता ही जाता है ॥६८६॥

---

*(ये ६७८ से ६८४ तक के श्लोक श्रीराम महिम्त स्तोत्र के हैं)

शत्रुक्षत्रकलत्रनेत्र सलिलैः जम्बाल जालस्पृशः
भ्रान्त्या भूपतिभाल भूषणभवत्कीर्तिर्भुवोमण्डले ।
पर्यान्ती विवुधालयं प्रतिसुधाकुण्डे सुधांशीर्यथा–
देहक्षालनमित्ययंकिलमलस्तस्मिन् गतः स्मेरताम् ।।६८७।।

शत्रु पक्ष के क्षत्रियों की ललनाओं के नेत्र जल के स्पर्श से सिंचित जिस भस्म राशि को भूल से भी जिन भूपालों ने अपने ललाट में लगाया वे भी भूतल में भूषण स्वरूप हो गये, वही प्रतापशालिनी आपकी कीर्ति जब स्वर्ग में गयी तब देवताओं के घर में बने हुए अमृत कुण्ड में उस आपकी कीर्ति देवी ने स्नान किया, अपने देह का मैल छडाया तब उस अमृतांशी कीर्ति देवी के देह प्रक्षालन से मैल भी सुधांशी देवियों के मुख को विकसित करने वाली मुसकान बन गया ।।६८७।।

प्रस्थाप्यतां वानरवीरसेना तत्कालयोग्याभरणप्रयत्नैः ।
भुनक्तु राज्यं निजबन्धुवर्गो रामः ससीतः सहलक्ष्मणश्च ।।६८८।।

लंका विजय के पश्चात् श्री हनुमान जी कहते हैं कि–हे वानर वीरो ! अपनी सेना आप सब इस समय के सानुकुल योग्य वस्त्राभरण से सुसज्जित होकर प्रस्थापित करें, हमारे बन्धु-वर्ग अपने-अपने प्राप्त राज्य का सुख भोग करें तथा श्रीरामजी, सीता जी एवं लक्ष्मण जी के सहित अपने बन्धु वर्गो के साथ राज्य सुख का भोग करें ।।६८८।।

एको महामोहभूतादि सृष्टि स्थितिध्वंसहेतुर्महाविष्णुरास्ते ।
रामस्तु तद्गीत पादाम्बुजातः परः कारणात् कार्यतः परात्मा ।
स ब्रह्मणस्तज्जगतो विधातुर्नारायणः कारिणः एक एव जातः
ततोभवति रुद्रपञ्चः ।।६८९।।

सृष्टि के स्थिति तथा ध्वंस का हेतु, महामोह पञ्चमहाभूत का आदि कारण महाविष्णु राम ही है, उनके श्रीचरण कमल के पवित्र कीर्ति के गान से कार्य-कारण से पर परमात्मा का आविर्भाव है। वही ब्रह्म तथा उसके भी विधाता नारायण को प्रकट करने वाले हैं, उसी से यह सारा प्रपञ्च प्रकृति महामोह आदि सब होता है ।।६८९।।

महाशम्भु संहितायाम् —

असित सित सुवर्णौ कामकोट्याभिरामौ—
स्वजन सुखदमित्रौ भाविकौ भावपात्रौ।
अवध नित्य निवासौ वेद वेदान्त गीतौ—
रसिक रस प्रतीतौ ईशईशौ भजामि ॥६६०॥

श्याम सुन्दर श्रीराम और गौरी सुन्दरी श्री जानकी जी दोनों अत्यन्त सुन्दर वर्ण के हैं। करोड़ों कामदेवों को भी आनन्द प्रदान करने वाले हैं। स्वजनों को परम सुख प्रदान करने वाले मित्र हैं। महान् भावुक, तथा भक्तों की भावना के प्रेम पात्र हैं। नित्य श्री अवध में निवास करने वाले हैं। वेद-वेदान्त जिनके गुणों का गीत गाते हैं, रसिक जनों के लिए प्रत्यक्ष रसमूर्ति स्वरूप हैं, ऐसे ईश्वरों के भी ईश्वर श्री सीताराम जी का मैं भजन करता हूँ ॥६६०॥

अथ श्रीराममन्त्रादन्यत् मन्त्रग्रहणनिषेधः

श्री गौरीतन्त्रे श्री शिववाक्यं गौरीं प्रति —

राममन्त्रं समादाय योऽन्यमन्त्रं प्रयच्छति।
गृहीता प्राप्नुयात् पापं दाता च नरके व्रजेत् ॥६६१॥
श्रीमद्गुरुं परित्यज्य योऽन्यं गुरुमुपासते।
स शिष्योनरकेयाति कल्पकोटिशतैरपि ॥६६२॥
गुरुवक्त्राद्रामन्त्रं प्राप्यान्यः गुरुमिच्छति।
तेऽपि मूर्खाः नराः ज्ञेयाः भगवद्विमुखाशठाः ॥६६३॥
मानवो गुरुणादत्तं राममन्त्रं प्रमोचयेत्।
स्वयं करोति यः शिष्यः ब्राह्मणः पतितोभवेत् ॥६६४॥
राम संस्कार संयुक्तः पुनः संस्कारमिच्छति।
गृहीता चैव दाता च नरके पाचितौ हि तौ ॥६६५॥

अन्यशिष्याय यो मर्त्यः ज्ञानदाता च सत्तमः ।
स्वेच्छा पूर्वं गुरोर्ब्रूयात् सैव धन्यो महान् भुवि ।।९९६।।
गुरुणा वैष्णवः धर्मः शिक्षितः चार्थ हेतुना ।
पुनः शिष्यः कृतो येन स वै पाषण्ड शास्त्रवित् ।।९९७।।
य एषधर्मं जानाति स ज्ञेयो वैष्णवोत्तमः ।
धर्मं त्वेतन्न जानाति स वै पाखण्डशास्त्रवित् ।।९९८।।

जो श्रीराम मन्त्र प्राप्त करके भी अन्य देवतान्तरों के मन्त्र प्रदान करता है, वह ग्रहण करने वाला पापी बनता है तथा अन्य मन्त्र प्रदान करने वाला नरक में जाता है। श्रीराम भक्त गुरुदेव का परित्याग कर अन्य गुरु करके उसकी उपासना करता है, वह शिष्य करोड़ों कल्प पर्यन्त नरक में निवास करता है। श्री सद्गुरु देव के मुखारविन्द से श्रीराम मन्त्र प्राप्त कर पुनः अन्य गुरु करने की इच्छा करता है, वह महामूर्ख भगवान से विमुख शठ पुरुष है ऐसा जानो। जो मनुष्य श्री गुरुदेव का दिया हुआ राम मन्त्र छुडा कर स्वयं दूसरा मन्त्र देता है, उसको पुनः अपना शिष्य बनाता है, वह ब्राह्मणत्व से भ्रष्ट होकर पतित हो जाता है। श्रीराम के पञ्च संस्कारों को प्राप्त कर पुनः अन्य देवताओं के संस्कार प्राप्त करने की चाहना करता है, तो उसको ग्रहण करने वाला तथा दाता दोनों ही नरक में पड़ते हैं। अन्य मन्त्रों को लेकर कोई किसी अवैष्णव का शिष्य अज्ञानता वश हो गया है, परन्तु ज्ञान होने पर स्वेच्छापूर्वक पहले किये हुए गुरु महाराज से पुनः श्रीराममन्त्र ग्रहण करने को कहता हैं और समझदार विचारवान विवेकी गुरु उसको श्रीराम मन्त्र लेने की आज्ञा देते हैं तो वह संसार में महान धन्य है, कृतार्थ है। जो गुरु से श्री वैष्णव धर्म की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर चुका है तथापि ऐसे शिष्य को अर्थं लोलुप लालची गुरु पुनः अपना शिष्य बनाता है वह पाषण्डी है, पाखण्ड मार्ग के शास्त्रों को जानता है श्री वैष्णव धर्म का ज्ञान उसको होता तो ऐसा कभी नहीं करता। हे पार्वती ! जो हमने समझाया है एवं इस श्रीराम भक्ति के धर्म का मार्ग जानता है वही उत्तम श्री वैष्णव शिरोमणि है। जो यह स्वरूप नहीं जानता है वह पाखण्ड मत को जानने वाला अभागा है।९९१-९९८।।

□

अथ श्रीराममन्त्रराज परम्परा

तदुक्तं, श्री शिवसंहितायाम् महामायावाक्यम् महाविष्णु प्रति—

कदाचित् श्रूयते विश्वं येन वै त्रायते भयात् ।
इति सूत्र पदं प्रोक्तं तारक ब्रह्म दर्शनम् ॥१०००॥
अद्वैते यः परे व्योम्नि धाम्नि च प्रभुरीश्वरः ।
सीताप्रेम रसामोद विनोदरति विभ्रमः ॥१००१॥
प्रसन्नोऽभूत् तदा देवः श्रीरामः रसिकां वरः ।
मन्त्रराजस्वरूपेण कथितं जानकीं प्रति ॥१००२॥
गृहित्वा श्रीरामप्रिया मन्त्रराजस्वरूपकम् ।
सीतादत्त तत्तो मन्त्रो महाशम्भुर्महाबलः ॥१००३॥
कथयामास वै तत्त्वं जानकी महाशम्भवे ।
मन्त्रं षडक्षरं तारं मन्त्राणां कल्पभूरूहम् ॥१००४॥
महाशम्भुः महामन्त्रं ब्रह्मविष्णुशिवादिकान् ।
कथयामास देवेशो मूलमन्त्रं षडक्षरम् ॥१००५॥

जो कदाचित कभी एक बार श्रद्धा विश्वास पूर्वक प्रेम से आचार्य के द्वारा सुन लिया जाय तो विश्व में महान् भय से त्राण करता हैं, रक्षा करता है, इसलिये इस तारक ब्रह्म श्रीराम मन्त्र को सूत्र कहा जाता है। कभी एकमेव अद्वितीय परम व्योम दिव्य धाम साकेत में सर्वेश्वर प्रभु श्रीराम श्री सीताजी के प्रेम प्रमोद-विनोद में निमग्न थे, उस समय श्री जू ने जीवों के उद्धार प्रशस्त पथ प्रकट करने की कामना की, प्रणय-वल्लभा के प्रेम से प्रसन्न होकर रसिक शिरोमणी प्रभु श्रीराम ने श्री जानकी जी को उस समय मन्त्र राज के स्वरूप को प्रकट किया, क्योंकि मन्त्र स्वयं इष्ट का स्वरूप ही होता है। रामप्रिया श्री जानकी जी ने षडक्षर मन्त्रराज ग्रहण करके महा बलवान महाशम्भु जो अपने प्रिय पार्षद हनुमान जी के रूप में दिव्य धाम साकेत में विराजते हैं, अत्यन्त प्रेम पूर्वक उनको यह श्रीराम मन्त्रराज षडक्षर तारक ब्रह्म जो सभी मन्त्रों को कल्प बृक्ष के समान फल प्रदान करने वाला है यह मन्त्र प्रदान

किया। देवाधिदेव श्री महाशम्भु जी ने यह मन्त्रराज महामन्त्र षडक्षर मूलमन्त्र ब्रह्मा-विष्णु-शिवादिक देवताओं को प्रदान किया।१०००-१००५।

एकमात्रा तथा पूर्वं सूत्रं कमलसम्भवम्।
त्रिपञ्च हि यदाप्राप्तं तदेव त्रिविधं कृतम्॥१००६॥
मन्त्रराज इति ख्यातो कोटि कोटि गुणाधिकः।
सर्वैश्वर्य प्रदं मन्त्रं दत्तवान् विश्वहेतवे॥१००७॥
तस्य विज्ञान मात्रेण मन्त्रस्य जगदीश्वरः।
सर्वैश्वर्यप्रदारूढो महाविष्णुः स्वयं स्वराट्॥१००८॥

कमल सम्भव ब्रह्माजी ने महाशम्भु की कृपा से सृष्टि को पूर्वकाल में जब सूत्र स्वरूप एक मात्रात्मक बीजमन्त्र को प्राप्त किया तब तीन गुण-पञ्चतत्व आदि सब संसार का मूल कारण प्राप्त कर भूत भविष्य वर्तमान, स्वर्ग-मर्त्य-पाताल आदि त्रिविध संसार की रचना की। तब यह मन्त्रराज उनके द्वारा ब्रह्मा जी की परम्परा से कोटि-कोटि अधिक गुण-सम्पन्न होकर संसार में विख्यात हुआ। उसी प्रकार विश्व कल्याण की कामना से सर्वैश्वर्यप्रदायक यह मन्त्र राज विष्णु भगवान् को जब प्रदान किया गया तब उस महामन्त्र के विज्ञान मात्र से वे जगदीश्वर जगन्नाथ समस्त ऐश्वर्य प्रदान करने के पद पर सत्तारूढ होकर स्वयं एक मात्र स्वराट् के रूप में श्री महाविष्णु विराजमान हो गये। इस प्रकार यह मन्त्र राज की परम्परा विश्व कल्याण के लिये विश्व में श्री सीताराम जी की कृपा से प्रचलित हुई।।१००६-१००८।।

श्री जानकी जी की कृपा से "महाशंभुरितिख्यातो हनुमान राम-सेवकः" वचनानुसार श्री हनुमान जी के द्वारा संसार में श्रीराम तारक मन्त्र व्याप्त हो गया, महाशंभु के अंशावतार भगवान् शंकर जी भी काशी में जीवों को मुक्त करने के लिए इस मन्त्र को अद्यावधि प्रेम से मरणकाल में प्राणीमात्र को प्रदान करते हैं। श्री ब्रह्मा जी के द्वारा इस परम्परा का प्रचार श्री सम्प्रदाय में हुआ जो इस प्रकार है—

श्री रामानन्द सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा

सीतानाथ समारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्य्यन्तां वन्दे गुरू परम्पराम् ।।१।।
परधाम्नि स्थितोरामः पुण्डरीकायतेक्षणः ।
सेवया परयाजुष्टो जानक्यै तारकं ददौ ।।२।।
श्रियः श्रीरपिलोकानां दुःखोद्धरण हेतवे ।
हनूमते ददौ मन्त्रं सदारामङ्घ्रिसेविने ।।३।।
ततस्तु ब्रह्मणा प्राप्तं मुह्यमानेन मायया ।
कल्पान्तरे तु रामो वै ब्रह्मणे दत्तवानिमम् ।।४।।
मन्त्रराज जपं कृत्वा धाता निर्भातृतां गतः ।
त्रयीसारमिमं धातुर्वशिष्ठो लब्धवान् परम् ।।५।।
पराशरो वशिष्ठाच्च मुद्रासंस्कार संयुतम् ।
मन्त्रराज परं लब्ध्वा कृतकृत्योवभूव ह ।।६।।
पराशरस्य सत्पुत्रो व्यासः सत्यवती सुतः ।
पितुः षडक्षरं लब्ध्वा चक्रे वेदोपबृंहणम् ।।७।।
व्यासोऽपि बहुशिष्येषु मन्वानो शुभ योग्यताम् ।
परमहंस वर्य्याय शुकदेवाय दत्तवान् ।।८।।
शुकदेव कृपापात्रो ब्रह्मचर्य व्रतेस्थितः ।
नरोत्तमस्तु तच्छिष्यो निर्वाणपदवीं गतः ।।९।।
सचापि परमाचार्यो गङ्गाधराय सूरये ।
मन्त्राणां परमं तत्त्वं राममन्त्रं प्रदत्तवान् ।।१०।।
गङ्गाधरात्सदाचार्यस्ततो रामेश्वरो यतिः ।
द्वारानन्दस्ततो लब्ध्वा पर ब्रह्मरतोऽभवत् ।।११।।
देवानन्दस्तु तच्छिष्यः श्यामानन्दस्ततोऽग्रहीत ।
तत्सेवया श्रुतानन्दश्चिदानन्दस्ततोऽभवत् ।।१२।।

पूर्णानन्दस्ततो लब्ध्वा श्रियानन्दाय दत्तवान् ।
हर्य्यानन्दो महायोगी श्रियानन्दाङ्घ्रि सेवकः ।।१३।।
हर्य्यानन्दस्य शिष्यो हि राघवानन्दः इत्यसौ ।
यस्य वै शिष्यतां प्राप्तो रामानन्दः स्वयं हरिः ।।१४।।

श्री सीतापति राम से जो प्रारम्भ होती है, जिसके मध्य में श्री रामानन्दाचार्य महाप्रभु हैं, ऐसी हमारे श्री गुरु महाराज पर्यन्त प्राप्त आचार्य परम्परा को मैं वन्दना करता हूँ। परम धाम साकेत में विराजमान विशाल कमल के समान नयनों वाले राजीवलोचन श्रीराम ने सेवा से परम प्रसन्न होकर सर्व प्रथम श्री जानकी जी को श्रीराम तारक मन्त्र प्रदान किया। श्रियों की भी श्री महालक्ष्मी की भी स्वामिनी श्री जानकी जी ने दीन-दुखियों का संसार से उद्धार करने के लिये श्रीराम जी के श्री चरणों की निरन्तर सेवा करने वाले श्री हनुमान जी को श्रीराम मन्त्रराज प्रदान किया। श्री हनुमान जी के द्वारा प्रभु की माया में मोहित ब्रह्माजी को श्रीराम मन्त्र प्राप्त हुआ, किसी कल्प में स्वयं प्रभु श्रीराम ने ही ब्रह्मा जी को श्रीराम मन्त्र प्रदान किया तथा इस महामन्त्रराज का जप करके विधाता ने संसार के पुनः निर्माण की शक्ति प्राप्त की। तीनों वेदों का सारतत्व स्वरूप यह मन्त्रराज श्री ब्रह्मा जी के द्वारा महर्षि वशिष्ठ जी ने प्राप्त किया। श्री वशिष्ठ जी के द्वारा धनुर्बाण मुद्रादि पञ्च संस्कार सम्पन्न होकर यह मन्त्रराज श्री पाराशर जी प्राप्त करके धन्य-धन्य कृतार्थ हो गये। सत्यवती नन्दन श्री वेदव्यास जी ने अपने पिता श्री पाराशर जी के द्वारा यह षडक्षर श्रीराम मन्त्र प्राप्त कर वेदों का सार तत्व स्वरूप इतिहास पुराणों की रचना करने का सौभाग्य प्राप्त किया। श्री व्यास जी ने शुभ योग्यता सम्पन्न अपने अनेकों शिष्यों को यह मन्त्र प्रदान किया, जिनमें परम हंस शिरोमणि श्री शुकदेव जी सर्व प्रधान हैं।

श्री शुकदेव जी के परम कृपा पात्र नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रत परायण श्री पुरुषोत्तमाचार्य जो श्री बोधायन महर्षि के नाम से प्रसिद्ध होकर निर्वाण पदवी को प्राप्त किये। उन परमश्रेष्ठ आचार्य बोधायन ने श्री गङ्गाधराचार्य सूरिको जो मन्त्रों का परम तत्व महामन्त्र श्रीराम तारक मन्त्रराज है प्रेमपूर्वक प्रदान किया, श्री गङ्गाधराचार्य जी ने श्री सदाचार्य जी ने तथा श्री सदाचार्य जी से श्री रामेश्वराचार्य जी ने मन्त्रराज प्राप्त किया। यतिराज श्री रामेश्वराचार्य जी से श्री द्वारानन्दाचार्यजी महाराज

ने मन्त्र प्राप्त किया, उनके शिष्य श्री देवानन्दाचार्य जी हुए, उनके द्वारा श्री श्यामानन्दाचार्य जी ने मन्त्रराज ग्रहण किया। उनकी सेवा सुश्रूषा करके श्री श्रुतानन्दाचार्य जी ने तथा उनके द्वारा श्री चिदानन्दाचार्य जी ने मन्त्र प्राप्त किया। श्री चिदानन्दाचार्य जी के द्वारा श्री पूर्णानन्दाचार्य जी को तारक मन्त्र प्रदान किया। श्री श्रियानन्दाचार्य जी के चरण सेवक योग्य शिष्य महान् योगीराज श्री हर्यानन्दाचार्य जी हुए, उनके शिष्य श्री राघवानन्दाचार्य जी महाराज हुए जिनकी शिष्यता को स्वयं श्री हरि भगवान राम के अवतार श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज ने स्वीकार किया। इस प्रकार यह मन्त्रराज परम्परा श्री सीतानाथ भगवान राम से प्रारम्भ होकर जगदगुरु भगवान श्री रामानन्दाचार्य पर्यन्त वर्णन की गयी है जो श्री रामानन्द सम्प्रदाय में सर्व मान्य है। कितने लोग इस रहस्य को भलीभांति न जानकर अन्य सम्प्रदायों के आचार्यों के साथ जोड़ देते हैं, यह साहित्यिक भूल पाश्चात्य विद्वानों का अन्धानुकरण करने वाले आज भी करते हैं। परन्तु श्री रामानन्द सम्प्रदाय के सभी संत-महंत आचार्यों ने आचार्य प्रवर श्री अग्र स्वामी रचित इसी परम्परा को एकमत होकर स्वीकार किया है। इसलिये यहां यही परम्परा उल्लिखित की गई है। इस ग्रन्थ के ग्रन्थकार ने भी इस ग्रन्थ में अनेकों बार इसी परंपरा का पूर्ण समर्थन किया है, परन्तु पीछे से किसी ने अन्त में लक्ष्मी सम्प्रदाय के आचार्यों के साथ सम्बन्ध जोड़ कर क्षेपक मिला दिया है, जो ग्रंथकार के सिद्धान्त से सर्वथा विरुद्ध है इसका विशेष विवरण भूमिका में पढ़ने की कृपा करें।

अथ ग्रन्थकारस्य श्लोकाः—

वन्दे रामभीश्वरञ्च सच्चिदानन्द विग्रहम् ।
दाशरथिं च परं ब्रह्म ब्रह्मदासः समाश्रयेत् ॥१॥
रामं सर्वगुणातीतं सर्वगुणसमाश्रयम् ।
तत्त्ववेदान्त सिद्धान्तं परतत्व प्रकाशितम् ॥२॥
श्रीमत् सिद्धिकरं कान्तं रामं रामगुणात्मकम् ।
दयासिन्धु चिदानन्दं सीताश्लिष्टमुपासितम् ॥३॥
रामचन्द्रं महाराजं जानकी यस्य वामतः ।
द्विभुजं श्यामलं शान्तं ब्रह्मदासः समाश्रयेत् ॥४॥

जानकीवल्लभं देवं दाशरथिं गुणालयम् ।
कौशल्यानन्दनं रामं ब्रह्मदासः समाश्रयेत् ।।
ब्रह्मानन्दे निमग्नश्च नालं स्यान्मे स्थिरं मनः ।
त्वत्पाद पद्म गन्धेन यथा स्याज्जानकी पते ।।५।।
जननो जानकी साक्षात् जन को रघुनन्दनः ।
रक्षणाय हि तौ शश्वत् तस्मान्नास्ति कुतो भयम् ।।६।।

सच्चिदानन्द दिव्यविग्रह श्रीराम परमेश्वर की मैं वन्दता हूँ । जो दशरथराजकुमार के रूप में परब्रह्म परमात्मा है । श्री ब्रह्मदासजी महाराज कहते हैं मैं उनका ही सम्यक् प्रकारेण आश्रय लेता हूँ । संसार के सभी सात्रिक गुणों से अतीत दिव्य कल्याण गुणगणों के साक्षात् स्वरुप, दयासागर सच्चिदानन्दस्वरूप, श्रीसीताजी के द्वारा आलिङ्गन किये गये श्रीरामको मैं उपासना करता हूँ । द्विभज, श्यामसुन्दर, शान्तस्वरुप, श्रीजानकी जो जिनके बायो ओर विराजती है ऐसे महाराज श्रीरामचन्द्रजी का मैं ब्रह्मदास भलोभांति आश्रय लेता हूँ । श्रीजानकीवल्लभ गुणों के भंडार दशरथराजकुमार कौशल्यानन्दन श्रीराम का मैं बृह्मदास आश्रय लेता हूँ । ब्रह्मानन्द के परमसुख में निमग्न रहने पर भी मेरा मन भली-भांति स्थिर नहीं होता है । हे जानकीनाथ रघुनाथ प्रभु ! जैसा आपके चरणकमलों की सुगन्ध में स्थिर हो जाता है । मेरी माता श्रीजानकीजी हैं, पिता रघुनाथ ही हैं । मेरी रक्षा करने में ये दोनों महान् समर्थ है इसलिए अब किसी का किसो तरफ से मुझे भय नहीं है । अर्थात् श्रीयुगल प्रभु श्रीसीताजी के भरोसे मैं सदैव निर्भय रहता हूँ, जब वे दोनों महान् समर्थ मेरे रक्षक हैं तब किसी से डरने का क्या काम है ? ।।१-६।।

पूर्वश्चोत्तरतापनीयमखिलं कल्पवरं मारुतेः-
ब्रह्मा विष्णु वशिष्ठ शंकर गुजः वाल्मीक व्यासादिभिः ।
शास्त्रं सर्वससंहितां च मनसा आलोऽय सहसीतया-
श्रीमद्रामपरत्वप्रकाशितमिदं ब्रह्मस्यदासेन हि ।।७।।

इयं विन्नायुष्पदा राममन्त्रपरम्परा ।
तस्यश्रवणमात्रेण सर्वपाप विलीयते ।।८।।

श्रीरामपूर्वतापनीय तथा श्रीरामउत्तरतापनीय का सम्पूर्ण स्वारस्य कल्प तथा श्रीहनुमाननाटक आदि ग्रन्थ, ब्रह्मा-विष्णु-शंकर-वाल्मीकि

व्यास आदि देवर्षियों के प्रणीत शास्त्र तथा संहिता ग्रन्थों का मनोयोग पूर्वक अवलोकन करके तथा आलोडन करके श्रीसीताजी के सहित श्रीरामजी के पूर्ण परत्त्व को प्रकाशित करने वाला यह "श्रीरामपरत्त्वम्" ग्रन्थ श्री ब्रह्मदासजी ने प्रकाशित किया है। यह श्रीराममन्त्रराज की परम्परा का श्रवण, मनन, पठन, पाठन परम पवित्र है। आयुस्य देनेवाला है तथा इसका श्रवण करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ॥७-८॥

य पठेच्छ्रद्धयानित्यं पूर्वाचार्य परम्पराम् ।
मन्त्रराज रतिं प्राप्य सधो रामपदं व्रजेत् ॥९॥

जो श्रद्धापूर्वक नित्यप्रति इस पूर्वाचार्यों की परम्परा का पाठ करता है वह मन्त्रराज में अविचल श्रद्धा-प्रेम प्राप्त करके अन्त में श्रीराम के दिव्य धाम में जाता है।

इति श्री ब्रह्मदासेन विरचितं "श्रीरामपरत्त्वम्" मूलग्रन्थं श्रुति स्मृति पुराणेतिहास संहितायामल तन्त्रादि प्रोक्त वाक्यैककल्पिते सौकर्य्यार्थ संक्षेपेण श्रीराममन्त्र परत्त्वर्णनोनाम पञ्चम प्रकाशः समाप्तः ।

श्रीगिरधरेशनामेश्वरेषु अनेन शिष्येण श्री ब्रह्मदासेन मयेदंमणिना-मर्थरत्नाकरं "श्रीरामपरत्त्वम्" ममस्थाने परमेप्रकृष्टे कोट नगरे तस्या-न्तरेण श्रीमद् रामदिव्यस्थान तन्मध्येतु "श्रीराम परत्त्व" ग्रन्थार्थोक्तिः निर्मिता इत्यर्थः ।

संवत् १८६९ तमे वर्षे मासोत्तमेमासे आश्विन कृष्णा १० गुरु वासरे लिखतं, सदा शुभं वाचकस्य भूयात् । जोशी इन्द्रमणि तस्य पुत्रः नथमलेन लिखितम् । महाराज श्रीमहानुभाव परम उपासक अनन्यधर्म-ध्वजारोपित श्रीकोटनगर मध्ये श्रीसीतारामालये विराजते आचार्य श्रीपूज्य श्री ब्रह्मदास जी आत्मपठनार्थ शुभम् भूयात् ॥

॥ श्री सीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥